ज़लज़ला
लेखक
हज़रत अल्लामा अरशदुल क़ादरी
रहमतुल्लाह अलैह
www.jannatikaun.com

ज़लज़ला

मुसन्निफ

मुबल्लिग़े अरब व अ़जम हज़रत

अ़ल्लामा अर्शदुल क़ादरी रहमतुल्लाह अलैहि

मुतर्जिम

मौलाना मोहम्मद अ़ली फ़ारूक़ी रायपुर

नाम किताब : ज़लज़ला

मुसन्निफ़ : अ़ल्लामा अर्शदुल क़ादरी रहमतुल्ला अलैहि

मुतर्जिम : मौलाना मोहम्मद अली फ़ारूक़ी

प्रुफ़ रीडिंग : मो० आरिफ़

ज़ेरे निगरानी : गुलाम रब्बानी साहब

क़ीमत :

तादाद : १९००

ज़लज़ला-एक तआरुफ़

दुनियाए इस्लाम की जिन अजीम शखसियतों ने गुलशने सुन्नियत को अपने खूने जिगर से सींचा है। उनमें रइसुत्तहरीर हजरत अल्लामा अर्शदुल कादरी साहब किब्ला कि जात वाला सिफात परिचय की मोहताज नहीं। आप की इल्मी बरतरी और तहरीरी अजमत की शोहरत हिन्दुस्तानी सरहदों को पार करके युरोप के दानिश कदों तक पहुँच चुकी है।

जहाँ आप बेहतरीन खतीब लाजवाब मुनाजिर और बेमिसाल अदीब हैं। वहीं हस्सास तबइय्यत और रोशन दिमागों के भी मालिक हैं। वक्त की हर पुकार और कौम के हर दर्द पर तड़प उठना दिन व रात कौम की फिरोज मन्द जिन्दगी दिलाने के लिए बेचैन रहना आप की खुसूसियत में से है। इसके अलावा खुदा ने आप को जो तहरीरी फन अता फरमाया उसके अपने और पराये सभी मोतरिफ और मदाह हैं। तहरीर में रवानी अदबी चाश्नी और जाजबिय्यत कि यह कैफिय्यत है कि कहीं से किताब खोलिये पढते चले जाइये कई-कई बार पढ़ने के बावजूद तबइय्यत नहीं भरती हर आने वाला जुमला आगे का इशितयाक और बढ़ा जाता है मुखतलिफ मौज़ूआत पर आप की कई किताब अहले इल्म से खिराजे अकीदत वुसूल कर चुकी हैं। मगर इन सभी मे जलजला को जो शोहरत और अजमत मिली वह निगाहों को चका चौंद कर देने के लिए काफी है।

दुनियाए देव बन्दियत में इस किताब ने जो इन्क़िलाब बर्पा किया वह मजहबी तारीख की एक अटल हक़ीक़त है। उसकी एक-एक ललकार पर पूरी दुनियाए वहाबियत ख़ौफ़ज़दा और हैरान व परेशान हैं। देवबंदी जमाअत के हर शख़्स के सामने आज एक ही सवाल है।और वह यह कि अपनी अवाम को टूटने से हम कैसे बचाएं। उनके सामने यह वक़्त का सबसे बड़ा चैलंज बन गया है इस चैलंज का जवाब देने की उन्होंने कई

बार कोशिश की मगर हर कोशिश के बाद यह एहसास बढ़ता ही गया कि ज़लज़ला के ऐतराज़ात एक अटल हकीकत हैं। जिनका जवाब ना मुमकिन है। और फिर जवाबुल जवाब कि शक्ल में हज़रते अल्लामा की मशहूर किताब "जेर व जबर" आई। उसने तो देव बन्दियत के ताबूत में आख़री कील ही ठोंक दी।

दूसरे ममालिक में ज़लज़ला की शोहरत और मकबूलियत का अन्दाज़ा इससे लगायें कि यूनाईटेड स्टेट आफ अमरिका कि लाइब्रेरी आफ कांग्रेस के एक खत के मुताबिक वाशिंगटन में उन्नीस लाईब्रेरियों के तआवुन से जो दुनिया की सबसे बडी लाईब्रेरी बन रही है। उसके मुतज़ेमीन ने हिन्दुस्तानी ज़बान की किताबों में से नुमाइश के लिए जलजला ही को चुना है।

देवबन्द के वह लोग जो अपने बुजुर्गों के कदमो का धोवन पी कर खुद को खुदा कि जन्नत का हक्दार समझ रहे थे। उन्हें क्या खबर कि हजरते अल्लामा अर्शदुल कादरी साहब के कलम से निकले हुए चन्द हुरूफ उनके फैलाए हुए तारीकियों के कुल्जुमें खाँ में मूसा सिफतराह निकाल कर मिल्लते बैजा को इस तरह हकाइक के उजाले में ला खडा करेंगे जहाँ उन्हें मुँह छुपाने को जगह नहीं मिलेगी। उनके कलम की तलवार कहरे खुदावन्दि बन कर चमकेगी और देखते ही देखते दुनियाए देवबन्दियत में जलज़ला आ जायेगा। नबी और रसूल की बारगाह में गुस्ताख़ी करने वाले अपनी निगाहों के सामने अपने अकाएद के महलों को गिरता लाशों को तड़पता हुआ और सालों के फैलाए हुए मकर व फ़रेब के जाल को टूटता हुआ देखेंगे। मगर हसरतों की तड़पती हुई लाशों पर सिवाए मातम के और कुछ न कर पायेंगे।

हज़रते अल्लामा के क़लम की धमक से जहाँ बातिल परस्तों के कलेजे दहल रहे हैं। उनके खुराफ़ात का महल लरज़

रहा है। उनकी महफ़िल में सफ़ेमातम बिछ रही हैं। फ़रयादों की सिसकियाँ और आहों की घुटन साफ़ तौर पर महसूस की जा रही है वहीं दूसरी तरफ कलम की हर बूंद से इश्क़ व इमान की वह किरण फूट रही है जिससे मोमिनों के दिलों के उफुक पर उजाला फैल रहा है। जज़बात की अन्जुमन में मुसर्रतों की ठंडक पहुँच रही है निगाहों को नूर और दिमागों को सुरूर मिल रहा है।

यह खुदा का खुसूसी फ़ज़ल व करम है जिसने उन्हें एक सुलझा हुआ साफ सुथरा क़लम अता फ़रमाया।

काश! हजरते अल्लामा इसकी तरफ ख़ुसूसी तवज्जह फरमा दें तो इस्लामियात के मौजू पर कुछ ऐसी निगारिशात सामने आ जायेंगी जो न सिर्फ तहकीक़ तफ़तीश की दुनिया में गौहरे शब चिराग बन कर उजाला बिखेरती रहेंगी बल्कि हक़ के मूसाफिरों के लिए बेहतरीन राहनुमा साबित होगा।

खुदा करे मसरूफ़िय्यतों के हुजूम में हजरते अल्लामा को चन्द लमहात ऐसे मिल जाये जिससे हमारी आरजुओं के कंवल खिल उठें। तमन्नाओं के गुलशन में बादे बहार रक्स करने लगे। आमीन

तर्जुमा के बारे में:-

खुदा का शुक्र है कि आलमी शोहरत याफ़ता किताब जिसकी धमक एशिया से लेकर यूरोप तक महसूस की जा रही है आज हिन्दी रसमुल ख़त में आप के सामने हैं। सिर्फ मैंने तहरीर बदली है वर्ना अलफ़ाज वही उर्दू के है। यहाँ तक कि वह लफ़्ज़ जो आमतौर पर दोनों ज़बान में चल जाते हैं वहाँ भी मैंने उर्दू ही के तलफ्फ़ुज़ को सामने रखा है लेकिन अल्फ़ाज़ जिनका माना इबारत पढ़ कर भी निकालना मुश्किल है ऐसी जगह बिरेकिट () में हिन्दी या आसान उर्दू में उसका तर्जुमा कर दिया

गया है। मगर फिर भी हिन्दी है जो उर्दू की तरह ख़ूबसूरती चाश्नी और रवानी नहीं ला सकती है। इसलिए अगर कहीं कोई ख़ामी और कमी महसूस हो तो नज़र अन्दाज़ करते हुए अस्ल मौजू पर नज़र पर रखें। और मुफ़ीद मश्वरों से नवाज़ें।फ़क़त

मोहम्मद अ़ली फ़ारुक़ी

मोहतमिम मदरसा इस्लाहुल मुस्लेमीन व दारूल यतामा
एण्ड लेकचरर आर.एस. यूनिवर्सिटी रायपुर (म.प्र.)

२.७.१९८४

ज़लज़ला उल्मा-ए-देवबन्द की नज़र में

मौलाना अर्शदुल क़ादरी ने जलजला नाम की किताब मुरत्तब फरमाई है। जिसमें तसनीफ व तालीफ़ और इस्तिदलाल का बड़ा सलीका पाया जाता है। ज़बान और इज़हार भी अदीबाना है।

(फ़ारान पाकिस्तान फ़रवरी ७७,सफ़ाः ३२

(मौलाना माहेरूल क़ादरी)

देवबन्द के अकाबिर के मलफ़ूज़ात देवबन्द के असल अकाएद नहीं। उन मलफूज़ात के जो इकतिबासात ज़लज़ला में दिए गए हैं हम उनसे अपनी बराअत का इजहार करते हैं

(माहेरूल क़ादरी ऐडीटर 'फ़ारान' कराची)

मौलाना आमिर उस्मानी मरहूम मुदीर माहनामा तजल्ली देवबन्द के मशवरे पर अगर उल्माए देवबन्द अमल करते और अपने अकाबिर के ग़लत अक़वाल से इजहारे बराअत फ़रमा देते तो ज़लज़ला नाम की किताब वजूद में न आती।

(फ़ारान कराची सफ़ाः३२

मगर ये किताब 'ज़लज़ला तो नक़द जवाब तलब कर रही है उससे ओहदा बर आ होने की सूरत आख़िर क्या होगी। अपनी किसी गलती को तसलीम करना तो हमारे आज के देवबन्दी बुज.र्गों ने सीखा ही नहीं। उन्होंने सिर्फ़ यह सीखा है कि अपनी कहे जाओ और किसी की मत सुनो। इन्शाअल्लाह इस किताब के साथ उनका सुलूक इससे मुख़्तलिफ़ नहीं होगा।

(मौलाना आमिर उस्मानी फाज़िले देवबन्द तजल्ली डाक नम्बर)

मुसन्निफ़ ने ऐसा हरगिज़ नही किया कि इधर-उधर से छोटे-मोटे फ़िकरे लेकर उन से मतालिब पैदा किए हों। बल्कि पूरी-पूरी एबारतें नक़ल की हैं। और अपनी तरफ़ से हरगिज़ कोई मानां पैदा नहीं किये हैं।

(तजल्ली डाक नम्बर)

हम अगरचे हल्क़ए देवबन्द ही से तअल्लुक़ रखते हैं।लेकिन हमें इस एतिराफ़ में कोई तअम्मुल नहीं कि अपने ही बुजुर्गों के बारे में हमारी मालूमात में इस किताब ने इज़ाफ़ा किया और हम हैरतज़दा रह गए कि दिफ़ा करें तो कैसे! दिफ़ा का सवाल ही नहीं पैदा होता।

(तजल्ली डाक नम्बर)

कोई बड़े से बड़ा मंतिकी और अल्लमातुदहर भी उन एतराजात को दफ़ा नहीं कर सकता जो इस किताब के मुश्तमिलात मुतअदिद बुजुर्गाने देवबन्द पर आएद करते हैं। (तजल्ली डाक नम्बर)(मौलाना आमिर उस्मानी फाजिले देवबन्द)

सारे मुल्क में इस किताब के असर से उल्माए देवबन्द के बारे में सख़्त बद गुमानियाँ फैलने लगी थी।

(बरेलवी फितना का नया रूप,सफा१८)

(मोलवी अतीकुरहमान इब्ने मोलवी मुजूर नोमानी देवबन्दी)

जवाब मौलाना मंजूर नोमानी या मौलाना तैयब साहब को देना चाहिए। मगर वह कभी न देंगे क्योंकि जो एतराज़ एक नाक़ाबिले तरदीद सदाकत की हैसियत रखता है उसका जवाब दिया भी क्या जा सकता है

(मौलाना आमिर उस्मानी फाजिले देवबन्द)

हमारे नज़दीक जान छुडाने की एक राह ही है यह कि या तो तकवियतुल ईमान 'और फतवाए रशीदिया' फतावए इमदादिया बहिश्ती ज़ेवर और हिफ़ज़ुल ईमान जैसी किताबों को चौराहे पर रखकर आग दे दी जाए। और साफ़ एलान कर दिया जाए कि इनके मुंदरजात कुर्आन व सुन्नत के ख़िलाफ़ हैं और हमें देवबन्दियों के सही अक़ाएद अरवाहे सलासा और सवानेह क़ासेमी और अशरफुस्सवानेह जैसी किताबों से मालुम करनी चाहिए या फिर मोअख़्ख़रुज़्ज़िकर किताबों के बारे में एलान फ़रमाया जाए कि यह तो महज़ किस्से कहानियों की किताबें हैं। जो रतब–व–याबिस से भरी हुई हैं और हमारे सही अक़ाएद वही हैं जो अव्वलुज़्ज़िकर किताबों में मुंदिरज हैं।

(तजल्ली डाक नम्बर)

सब्बे तालीफ़

मेरी यह किताब किसी ख़ास उनवान (Subject) पर कोई फन्नी तसनीफ (Sulyeetxe Litratue) नहीं है बल्कि यह एक इस्तिगासा (Write) है जिसे मैंने कौम की अदालत में पेश किया है। इस्तिगासा का मजमून यह है कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में मुसलमानों की अज़ीम अकसरियत अम्बिया और औलिया के बारे में यह अकीदा रखती है कि खुदा ने उन नुफूसे कुदसिया को (पाक लागों) गैबी इल्म व इदराक की मख़सूस कुव्वत अता (विशेष शक्ती प्रदान) की है जिसके ज़रिये उन्हें छुपी हुई बातों और छुपे हुए हालात का इन्किशाफ़ होता है।

यूँही खुदाए कदीर ने उन्हें कारोबारे हस्ती में तसर्रुफ का भी इख़्तियार मरहमत फरमाया। जिसके ज़रिये वह मुसीबत जदों की दस्तगीरी और मखलूक की हाजत रवाई फ़रमाते हैं।

अब इस सिलसिले में उल्माए देवबन्द का कहना है कि अम्बिया व औलिया के हक में इस तरह का अक़ीदा रखना शिर्क और कुफ़ है। खुदा ने उन्हें इल्म गैब अता किया और न तसर्रुफ का कोई इख़्तियार बख़्शा है। वह मआज़ल्लाह बिल्कुल हमारी तरह मजबूर व बेख़बर और नादान बन्दे हैं। खुदा की छोटी या बड़ी किसी मखलूक में भी जो इस तरह की कोई कुव्वत तसलीम करता है वह खुदा की सिफ़ात में उसे शरीक ठहराता है ऐसा शख़्स तौहीद का मुख़ालिफ़, इस्लाम का मुन्किर और क़ुरआन व हदीस का बाग़ी है।

इस्तिगासा पेश करने की वजह यह है कि उल्माए देवबन्द का यह मसलक अगर कुरआन पर निर्धारित (Depend) है तो उन्हें हर हाल में इस पर क़ाएम रहना चाहिए था। यानी जिन अक़ीदों को उन्होंने अम्बिया व औलिया के हक़ में शिर्क समझा

था उन्हें सारी मख़लूक़ के हक़ में शिर्क समझना चाहिए था।

लेकिन यह कैसा अन्धेर है और अक़ीदए तौहीद के ख़िलाफ़ यह कितनी शर्मनाक साज़िश है कि एक तरफ़ तो वह जिन बातों को कुरआन व हदीस के हवाले से अम्बिया व औलिया के हक़ में शिर्क और मुख़ालिफ़े तौहीद करार देते हैं तो दूसरी तरफ़ इन्हीं बातों को अपने घर के बुजुर्गों के हक़ में ऐन इस्लाम समझते हैं।

इस किताब में दिए गए हवालों के ज़रिये मैं मुसलमानों की अदालत से सिर्फ़ इस बात का फैसला चाहता हूँ कि जिन बातो को उल्माए देवबन्द अम्बिया व औलिया के हक में शिर्क करार देते हैं अगर कुरआन व हदीस की रौशनी मे हकीकत मे वह शिर्क है तो फिर उन्होंने अपने घर के बुजुर्गों के हक में उसे क्यो जाएज ठहरा लिया और अगर कुरआन व हदीसो की रौशनी में वह शिर्क नहीं है तो अम्बिया व औलिया के हक़ मे उन्हो ने क्यों उसे शिर्क करार दिया।

तस्वीर के पहले रुख़ में देवबन्दी लिटरेचर के हवाले से यह साबित किया गया है कि देवबन्दी हजरात अम्बिया व औलिया के हक़ में इल्मे गैब और कुदरत व तसर्रुफ [illegible] अक़ीदा शिर्क और मनाफ़िए तौहीद समझते हैं और तस्वीर के दूसरे रुख़ मे उन्हीं की किताबों के हवाले से यह साबित किया गया है कि उल्माए देवबन्द अपने घर के बुजुर्गों के हक़ में इल्मे गैब और कुदरत और तसर्रुफ़ का अक़ीदा शिर्क और मनाफ़िए तौहीद नहीं समझते।

नोट:— तस्वीर के दोनों रुख़ों में देवबन्दी किताबो के जितने हवाले दिए गए हैं उनमें से एक हवाला गलत साबित करने पर दस हज़ार रूपये ऐलान किया जाता है।

अर्शदुल क़ादरी

तस्वीर का पहला रूख़

देवबन्दी जमाअत के इमामे अव्वल मौलवी इस्माइल साहब लिखते है।

(१)"जो कोई यह बात कहे कि पैग़म्बरे खुदा या कोई इमाम या बुजुर्ग गैब की बात जानते थे और शरीअत के अदब से मुँह से न कहते थे सो वह बड़ा झूठा है बल्कि गैब की बात अल्लाह के सिवा कोई जानता ही नहीं। (तकवियतुल ईमान, सफा:२७)

(२) "किसी अम्बिया व औलिया या इमाम व शहीद की जनाब मे हरगिज यह अकीदा न रखे, न उसकी तारीफ़ में ऐसी बात कहे " (तकवियतुल ईमान, सफ़ाः २६)

(३) "जो कोई यह दावा करे कि मेरे पास ऐसा कुछ इल्म है कि जब मैं चाहूँ इस से ग़ैब की बात मालूम कर लूँ और आइन्दा बातों को मालूम कर लेना मेरे क़ाबू में है सो वह बड़ा झूठा है कि दावा खुदाई का करता है और जो कोई किसी नबी 'वली' या जिन व फरिश्ता को इमाम या इमामज़ादे या पीर व शहीद 'नुजूमी' रुम्माल या जफ्फार को या फाल देखने वाले को या ब्राहमण इश्टी को या भूत व परी को ऐसा जाने और उसके हक में यह अकीदा रखे सो वह मुश्रिक हो जाता है।"

(तकवियतुल ईमान सफ़ाः २१

(४) "और इस बात में (यानी ग़ैब की बात न जानने में) औलिया अम्बिया और जिन व शैतान और भूत व परी में कुछ फर्क नहीं। (तकवियतुल ईमान,सफ़ाः ,८)

(५) "जो कोई किसी का नाम उठते बैठते लिया करे और दूर व नजदीक से पुकारे या उसकी सूरत का ख़्याल बाँधे और यूँ समझे कि मैं उसका नाम लेता हूँ ज़बान से या दिल से या उसकी सूरत का या उसकी क़ब्र का ख़्याल बाँधता हूँ तो वहीं उसको ख़बर हो जाती है और उस से मेरी कोई बात छुपी नहीं

रह सकती और जो मुझ पर अहवाल गुज़रते हैं जैसे बीमारी व तन्दरुस्ती व कुशाइश व तंगी 'मरना व जीना' गम व खुशी सब की हर वक़्त उसे खबर रहती है और जो बात मेरे मुँह से निकलती है वह सब सुन लेते हैं। जो ख़्याल व वहम मेरे दिल में गुज़रता है वह सब से वाकिफ़ है सो इन बातो से मुश्रिक हो जाता है। और इस किस्म की बातें सब शिर्क हैं, ख्वाह यह अक़ीदा अम्बिया व औलिया से रखे, ख्वाह पीर व शहीद से ख्वाह इमाम व इमाम ज़ादे से ख़्वाह भूत व परी से ख्वाह यूँ समझे कि यह बात उनको अपनी जात से है ख्वाह अल्लाह के दिये से गर्ज इस अक़ीदे से हर तरह शिर्क साबित होगा।

(तकवियतुल ईमान गुलख्खेसन, सफ़ा १०)

(६)"कुछ इस बात में भी उनको बडाई नही है कि अल्लाह साहब ने गैब दानी एख्तियार मे दे दी हो जिसके दिल को अहवाल जब चाहे मालुम करले या जिस गैब का अहवाल जब चाहे मालूम करले कि वह जीता है या मर गया या किस शहर में है या जिस आइन्दा बात को जब इरादा कर लें दरियाफ्त कर ले कि फ़लां के यहाँ औलाद होगी या न होगी या उस सौदागरी में उसको फाएदा होगा या न होगा या उस लड़ाई में फ़तह पावेगा या शिकस्त कि इन सब बातों में भी सब बन्दे बड़े हों या छोटे यह सब बेखबर है और नादान हैं। (तक़वियतुल ईमान, सफ़ाः २५)

(७)" अल्लाह साहब ने पैगम्बर सलअम को फ़रमाया कि लोगों से यूँ कह देवें कि ग़ैब की बात सिवाए अल्लाह के कोई नहीं जानता न फ़रिश्ते न आदमी न जिन न कोई चीज यानी ग़ैब की बात जान लेना किसी के एख्तियार में नहीं।"

(तक़वियतुल ईमान, सफ़ाः २२)

(८) "सो उन्होंने (यानी रसूले खुदा ने) बयान कर दिया कि

मुझको न कुछ कुदरत है न कुछ ग़ैब दानी मेरी कुदरत का हाल तो यह है कि अपनी जान तक के भी नफ़ा व नुक़सान का मालिक नही तो दुसरे का तो क्या कर सकूँ? और ग़ैबदानी अगर मेरे काबू में होती तो पहले हर काम का अन्जाम मालूम कर लेता अगर भला मालूम होता तो उसमे हाथ डालता अगर बुरा मालूम होता तो काहे को उसमे कदम रखता गर्ज़ कि कुदरत और ग़ैब दानी मुझ में नहीं और कुछ खुदाई का दावा नही फ़कत पैग़म्बरी का मुझ को दावा है।" (तक़वियतुल ईमान, सफ़ा: २४)

(६) "जो अल्लाह की शान है उसमें किसी मख्लूक को दखल नही सो इसमें अल्लाह के साथ किसी मख़लूक को न मिलाओ 'गो कोई कितना ही बड़ा हो और कैसा ही मुकर्रब' मसलन यूँ न बोले की अल्लाह व रसूल चाहेगे तो फ़लाना काम हो जाएगा, कि सारा कारोबार जहाँ का अल्लाह ही के चाहने से होता है रसूल के चाहने से कुछ नहीं होता या कोई शख़्स किसी से कहे कि फ़लाँ के दिल मे क्या है? या फलाँ की शादी कब होगी? या फ़लाँ दरख्त में कितने पत्ते है? या आसमान में कितने सितारे हैं? तो इसके जवाब में यह न कहे कि अल्लाह व रसूल ही जाने। क्योंकि ग़ैब की बात अल्लाह ही जानता है रसूल को क्या ख़बर?" (तकवियतुल ईमान, सफ़ा: ५८)

: -देवबन्दी जमाअत के दीनी पेश्वा मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही लिखते हैं: -

(१०)जो शख़्स अल्लाह जल्लशानहू के सिवा इल्म ग़ैब किसी दूसरे को साबित करे......वह बेशक काफ़िर है उसकी इमामत और उससे मेल जोल मोहब्बत व मोवद्दत सब हराम है।

(फ़तावए रशीदिया, जिल्द: २ सफ़ा:१०)

(११) इल्मेग़ैब ख़ास्सए हक़ जल्लेशानहू है। (फ़तावाए रशीदिया, जिल्द:१,सफ़ा: २०)

(१२) और यह अकीदा रखना कि आप(यानी हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को इल्मे ग़ैब था सरीह शिर्क है। (फ़तावा रशीदिया, जिल्दः २ सफ़ाः १४)

(१३) इस्बाते इल्मे गैब ग़ैरे हक़ तआ़ला को शिर्क सरीह है (फ़तावए रशीदिया जिल्दः २, सफ़ाः १७)

(१४) जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आ़लेमुलग़ैब होने का मोतक़िद है वह सादाते हनफ़िया (यानी उल्माए हनफ़िया) के नजदीक क़तअ़न मुश्रिक व काफ़िर है। (फ़तावाए रशीदिया, जिल्दः ३, सफ़ाः ४२)

(१५) इल्मे गैब ख़ास्साए हक़ तअ़ला का है इस लफ़्ज को किसी तावील से दूसरे पर इतलाक करना इहामे शिर्क से खाली नहीं (फ़तावाए रशीदिया, जिल्दः ३, सफ़ाः ४३)

(१६) जो शख़्स रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआ़लाः अलैहि व सल्लम को इल्मे गैब जो ख़ास्साए हक़ तआ़ला है साबित करे उसके पीछे नमाज न दुरुस्त है "लि अन्नहू कूफ़रन" क्यों कि यह कुफ़्र है। (फ़तावाए रशीदिया, जिल्द ३, सफ़ा १२५)

(१७) "जब अम्बिया अलैहिस्सलाम को भी इल्मे गैब नहीं होता तो या रसूलल्लाह कहना भी नाजाएज होगा।

(फ़तावए रशीदिया, सफ़ा ३)

देवबन्दी जमाअत के दीनी पेशवा मौलवी अश्रफ़ अली साहब थानवी लिखते हैंः-

(१८) "किसी बुजुर्ग या पीर के साथ ये अकीदा रखना कि हमारे सब हाल की उसको हर वक़्त ख़बर रहती है।(कुफ़्र व शिर्क है) (बहिश्ती ज़ेवर, जिल्दः १, सफ़ाः २७)

(१६) किसी को दूर से पुकारना और यह समझना कि उसको ख़बर हो गई (कुफ़्र व शिर्क है।) (बहिश्ती ज़ेवर, जिल्दः १, सफ़ाः ३७)

(२०) बहुत से अमृर में आपका (यानी हुज़ूर सल्लल्लाहु

तआला अलैहि व सल्लम का) खास एहतिमाम से तवज्जह फ़रमाना और फ़िक्र व परेशानी मे वाके होना और बावजूद इसके फिर मख़फ़ी रहना साबित है। किस्सए इफ्क मे आपकी तफतीश व इन्किशाफात वा बलगे वोजूह सहाए मे मजकूर है मगर सिर्फ तवज्जह से इन्किशाफ नही हुआ। (हिफ्जुल ईमान, सफ़ा: ७)

(२१) "या शेख अबदुल कादिर या शैख सुलेमान का वजीफ़ा पढना जैसा अवाम का अकीदा है। इनके मुर्तकिब होने से बिल्कुल इस्लाम से खारिज हो जाता है। (मुश्रिक बन जाता है) (फ़तावाए इमदादिया, जिल्द ४ सफा: ५६)

देवबन्दी जमाअत के दीनी पेशवा मौलवी अब्दुल शकूर साहब काकोरवी लिखते हैं:-

(२२) फिक्ह हनफी की मोतबर किताबो मे भी सिवाए खुदा के किसी को गैबदाँ जानना और कहना नाजाएज़ लिखा है। बल्कि इस अकीदे को कुफ्र करार दिया है। (तोहफए लासानी, सफा: ३४)

(२३) हनफिया ने अपनी फिक़्ह की किताबों में उस शख़्स को काफ़िर लिखा है जो यह अकीदा रखे कि नबी गै़ब जानते थे। (तोहफए लासानी, सफा: ३८)

(२४) "रसूले खुदा सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम की जात वाला मे सिफते इल्मे गैब हम नहीं मानते और जो माने उसको मना करते हैं। (नुसरते आसमानी' सफ़ा: २७)

(२५) हम यह नहीं कहते कि हुजूर गै़ब जानते थे या गै़बदाँ थे बल्कि यह कहते हैं कि हुजूर को गैब की बातों पर इत्तिला दी गई। फुकहाए हन्फिया कुफ़्र का इतलाक उसी गैब दान पर करते हैं न कि इत्तिला याबी पर। (फ़तेह हक्क़ानी, सफ़ा: २५)

देवबन्दी जमाअत के दीनी पेशवा कारी तैयब साहब मोहतमिम दारुल उलूम देवबन्द लिखते हैं:-

(२६) रसूल और उम्मते रसूल इस हद तक मुश्तरक है कि दोनों को इल्मे ग़ैब नहीं है। (फ़ारान का तौहीद नम्बर, सफ़ा: ११४)

(२७) हज़रत सय्यदुल अव्वलीन व आख़रीन के लिए इल्मे ग़ैब का दावा और वह भी ईल्मेकुल्ली और इल्मे माकाना व मायकून की क़ैद के साथ न सिर्फ़ बेदलील और बे सनद है बल्कि मुख़ालिफ़ दलील मुआरिजे क़ुरआन और उस तौहीदी शरीअत के मिज़ाज के ख़िलाफ होने की वजह से नाक़ाबिले इलतिफात है। (तौहीद नम्बर, सफा: ११७)

(२८) "इल्मे माकाना व मायकून खास्सए रब दायन्दी है जिस में कोई भी ग़ैरुल्लाह उसका शरीक नहीं हो सकता।" (तौहीद नम्बर, सफ़ा: १२१)

(२६) "किताब व सुन्नत को सामने रख कर इल्म की तकसीम यूँ न होगी कि अल्लाह को इल्मे जाती रसूलों को इल्मे अताई यानी नवई फर्क के साथ दोनों का बराबर हैं। एक हक़ीक़ी खुदा एक मजाजी खुदा।" (तौहीद नम्बर १२१)

(३०) यह आयत ता कियामत यही ऐलान करती रहेगी कि आप को इल्मे ग़ैब न था। इसके माने यह है कि क़ियामत तक आपको इल्मे गैब न होगा।" (तौहीद नम्बर, १२६)

: -देवबन्दी जमाअत के दीनी पेश्वा मौलवी मन्जूर साहब नोमानी लिखते हैं: -

(३१) "जिस तरह मोहब्बते ईसवी के परदे में उलूहिय्यते मसीह के अक़ीदे ने नश व नुमा पाई और जैसे कि हुब्बे अहले बैत के नाम पर रफ़्ज़ को तरक़्क़ी हुई इसी तरह हुब्बे नबवी और इश्क़े रिसालत का रंग देकर मस्लए इल्मे गैब को भी फरोग दिया जा रहा है और बेचारे अवाम मोहब्बत का जाहेरी उनवान देख कर बराबर इस पर ईमान ला रहे हैं।

(अलफ़ुर्क़ान शुमारा: ५, जिल्द: ६, सफा ११)

(३२) चूँकि अकीदए इल्मे ग़ैब का यह जहर मोहब्बंत के दूध में मिलाकर उम्मत के हलक़ों से पिलाया जा रहा है इस लिए यह उन तमाम गुमराहाना ऐतक़ादात से ज़्यादा ख़तरनाक और तवज्जह का मोहताज है जिन पर मोहब्बत और आक़ीदत का मुलम्मा नहीं किया गया है।" (अलफ़ुर्क़ान शुमारा: ५,जिल्द: ६, सफ़ा: १३)

(३३) "सही बुख़ारी शरीफ़ में हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रजिअल्लाहु तआला अन्हुमा से मरवी है कि हुजूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है कि मिफ़्ताहुल ग़ैब जिनको खुदा के सिवा कोई नहीं जानता वह पाँच चीज़ हैं जो सूरए लुकमान की आखरी आयत में मजकूर हैं यानी क़ियामत का वक्ते मखसूस, बारिश का टीक वक्त कि कब नाज़िल होगी। माफिल अरहाम यानी औरत के पेट में क्या है? 'बच्चा है या बच्ची? मुस्तक़बिल के वाकेआत "मौत का सही मुकाम"

(फतहे बरैली का दिलकश नज़्ज़ारा: ८५)

देवबन्दी जमाअत के दीनी पेश्वा मौलवी ख़लील अहमद साहब अम्बेठवी लिखते हैं: -

(३४) "मलकुल मौत से अफ़ज़ल होने की वजह से यह लाजिम नहीं आता कि आप का इल्म उन उमूर (यानी रूए जमीन) के बारे में मलकुल मौत के बराबर भी हो चे जाए कि ज्यादा (बराहीने कातेआ, सफ़ा: ५२)

(३५) "शैख़ अब्दुल हक रिवायत करते हैं कि मुझको (यानी रसूले खूदा को) दीवार के पिछे का भी इल्म नहीं है। (बराहीने कातिआ, सफ़ा: ५१)

(३६) "बहरे राइक़ 'आलमगीरी दुर्रे मुख़्तार वग़ैरा में है कि अगर कोई निकाह करे ब शहादते हक़ तआला व फख़रे आलम अलैहिस्सलाम के तो काफिर हो जाता है ब सबब ऐतक़ाद इल्मे

ग़ैब के फ़ख़रे आ़लम की बनिस्बत।"(बराहीने क़ातिआ, सफ़ाः ४२)

-: देवबन्दी जमाअ़त के मुतफ़र्रिक़ हज़रात की इबारतें: -

(३७) "उन लोगों को अपने दिमाग की मरम्मत करानी चाहिए जो यह लग़वतरीन और अहमकाना दावा करते है कि रसूलुल्लाह को इल्मे ग़ैब था। (आमिर उस्मानी तजल्ली देवबन्द बाबत दिसम्बर १९६० ई)

(३८) "उलूहिय्यत और इल्मे गैब के दर्मियान एक ऐसा गहारा तअल्लुक़ है कि क़दीम तरीन जमाने मे इन्सान ने जिस हस्ती में भी खुदाई के किसी शाएबा का गुमान किया है उसके मुतअल्लिक़ ये ख़्याल जरूर किया है कि उस पर सब कुछ रौशन है और कोई चीज उससे पोशीदा नही। (मौलाना मौदूदी अलहसनात रामपुर)

(३९) "हजरत याकूब अलैहिस्सलाम बरगुजीदा पैगम्बर थे मगर बर्सो तक अपने प्यारे और चहीते बेटे यूसुफ की खबर न मालू कर सके कि उनका नूरे नजर कहाँ है और किस हाल में।" (माहेरुल क़ादरी, फ़ारान का तौहीद नम्बर, सफा. १३)

(४०) "अगर हुजूर आलेमुल गैब होते तो (हुदैबिया मे हज़रत उस्मान की शहादत की) अफवाह के सुनते ही फरमादेते कि यह ख़बर ग़लत है। उस्मान मक्का में जिन्दा है। सहाबए किराम की इतनी बड़ी जमाअ़त तक को असल वाकिया का कश्फ़ नहीं हुवा।" (माहेरुल क़ादरी फ़ारान का तौहीद नम्बर १४)

तस्वीर का दूसरा रुख़

अगर किसी तरह की बदगुमानी को राह न दी जाए तो तस्वीर के पहले रुख़ में मसलए इल्मे ग़ैब और क़ुदरत व तसर्रुफ़ पर देवबन्दी उल्मा की जो इबारत ;त्मिमितमदबमद्ध नक़्ल की गई है। उन्हे पढ़ने के बाद एक ख़ाली जहन आदमी

कतअन यह महसूस किये बग़ैर न रह सकेगा कि रसूले मुजतबा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और दिगर अम्बिया व औलिया के हक में इल्मे गैब और कुदरत व तसर्रुफ़ात का अक़ीदा यकीनन तौहीद के मनाफी और खुला हुआ कुफ्र व शिर्क है और लाजिमन उसे उल्माए देवबन्द के साथ यह खुश अक़ीदगी होगी कि वह मजहबे तौहीद के सच्चे अलम्बरदार और कुफ्र व शिर्क के मोतकेदात के खिलाफ वक्त के सबसे बड़े मुजाहिद हैं।

लेकिन आह। मै किन लफ्जो में इन सरबस्ता राज को बेनक़ाब करूँ कि इस खामोश सतह के नीचे एक निहायत खौफ़नाक तूफान छुपा हुआ है तस्वीर के इस रूख़ की दिलकशी उसी वक्त तक बाकी है जब तक कि दूसरा रूख़ निगाहो से ओझल है। यकीन करता हूँ कि पर्दा उठ जाने के बाद तौहीद परस्ती की सारी गरम जोशियां का एक आन में भरम खुल जाएगा।

कब्ल इसके कि मै अस्ले हकीकत के चेहरे से नक़ाब उठाउँ। आप के धडकते हुए दिल पर हाथ रख कर एक सवाल पुछना चाहता हूँ।

फर्ज कीजिए। अगर आपको यह बात मालूम हो जाए कि इल्मे गैब से लेकर तसर्रुफ व इख़्तियार तक जिन– जिन बातों के एतकाद को देवबन्दी जमाअत के इन पेशवाओं ने रसूले मुजतबा सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम और दिगर अम्बिया व औलिया के हक मे कुफ्र व शिर्क और मुनाफिए तौहीद क़रार दिया है उन्ही सारी बातो को वह अपने घर के बुजुर्गों के हक़ मे जाइज बल्कि वाके तस्लीम करते है तो आपके जहनी तवाजुन (Mental balance) की क्या कैफ़ियत होगी।

क्या इस सूरते हाल को आप मज़हबी तारीख़ का सब से बड़ा फरेब और घोखा नहीं क़रार देंगे और इस सनसनी खेज़ इन्किशाफ के बाद आपके ज़हन की सतह उन हज़रात की जो तस्वीर उभरेगी क्या वह रास्तों के उन ठगों से कुछ मुख्तलिफ

होगी जो आंखों में धूल झोंक कर मुसाफ़िरों को लूट लिया करते है।

अगर हालात का यह रद्दे अमल (Reaction) फ़ितरत के ऐन मुताबिक़ है तो सुन लीजिए कि जो सूरते हाल आपने फ़र्ज की थी वह मफ़रूज़ा (Baseless) नहीं बलिक अमरेवाक़िया (Fact) है।

हमारे इस पेशे लफ़्ज़ पर आप ऐतमाद न कर सके तो ज़हनी तौर पर एक हैरत अंगेज़ तबदीली के लिए तय्यार होकर वर्क़ उलटिये और देवबन्दी जमाअ़त के पेशवाओं के वह वाकिआत पढ़िये जिन में अक़ीदए तौहीद और इस्लामी ईमान की सलामती के सिवा सब कुछ है।

ग़ैबदानी का ऐतक़ाद दिलों के खतरात पर इत्तिला सैकड़ों मील की दूरी से मखफ़ियाँ का इल्म कि माँ के पेट मे क्या है बारिश कब होगी? कल आइन्दा क्या पेश आएगा? कौन कब मरेगा, किसकी वफ़ात कहाँ होगी? दीवार के पीछे क्या है? अपने इरादा व तसर्रुफ़ात से मारना शेफ़ा बख़्शना बारिश रोक देना, बारिश बरसाना इमदाद व दस्तगीरी के लिए आने वाहिद (At-a Time) में अपनी क़ब्रों से निकल कर दूर-दूर पहुँच जाना तसव्वुर करते ही सामने मौजूद हो जाना सारे जहाँ को एक नज़र में देख लेना मुसीबत के वक़्त गायब को अपनी मदद के लिए पुकारना गुजिश्ता और आइन्दा की खबरें देना यह समझना कि हर वक़्त हमारे दिल के अहवाल की ख़बर रखते हैं यह समझना कि तसव्वुर करते ही बाख़बर हो जाते हैं वग़ैरा वग़ैरा यह वही सारी बाते हैं जिन्हें उल्माए देवबन्द की मज़कूरुस्सदर (उपरोक्त) किताबों में सिर्फ़ खुदा का हक़ तसलीम किया गया है और ग़ैरे खुदा यहाँ तक कि रसूले मुजतबा सल्लल्लाहु तआ़ला अलैहिस्सलाम के हक़ में भी इस तरह के एतक़ादात को कुफ्र व शिर्क क़रार दिया गया है।

लेकिन कमाले हैरत के साथ यह खबर वहशत असर

सुनिए कि यह ख. दाई का मंसब यही खुला हुआ कुफ़ व शिर्क और यही तौहीद के मनाफ़ी एतक़ादात उल्माए देवबन्द ने अपने घर के बुज र्गों के हक़ में बेचुँ व चरा तस्लीम कर लिए है।

यह किताब छः भागों पर मुश्तमिल (सम्मिलित) है और अलग–अलग हर बाब में देवबन्दी जमाअ़त के बुज़ुर्गों के वह वाकिआत व हालात जमा किये गए हैं जिन्हें पढ़ने के बाद आप के दिमाग का तार झन झना उठेगा और इन हज़रात की तौहीद परस्ती का सारा भरम खुल जाएगा।

हम न कहते कि ऐ दाग़ तू जुलफ़ों को न छेड़
अब वह बर्हम है तो है तुझ को क़ल्क या हम को

पहला बाब

बानिए दारूल उलूम देवबन्द जनाब मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहेब नानौतवी के बयान में

इस बाब (Chapter) में देवबन्दी लिटरेचर से मौलीवी मुहम्मद क़ासिम साहेब नानौतवी से मुतअल्लिक़ वह वाक़ेआत व हालात जमा किये गए हैं जिन में अक़ीदए तौहीद से तसादुम अपने मज़हब से इन्हेराफ़ और अपने घर के बुजुर्गों के हक़ में मुँह बोले कुफ्र व शिर्क को इस्लाम व ईमान बना लेने के हैरत अंगेज़ नमूने वर्क़ वर्क़ पर बिखरे हुए हैं।

इन्हें पढ़िए और मज़हबी तारीख़ मे पहली बार अजीब तिलिस्मे फ़रेब का तमाशा देखिए।

सिलसिलाए वाकेआत

वफ़ात के बाद मौलीवी क़ासिम नानौतवी का जिस्मे ज़ाहेरी के साथ मदरसाए देवबन्द में आना

कारी तय्यब साहेब मोहतमिम दारूल उलूम देवबन्द बयान करते है कि जिस जमाने मे मौलवी रफीउदीन साहेब मदरसा के मोहतिमम थे दारूल उलूम के बाज मुदर्रेसीन के दरमियान आपस में कुछ नेज़ा (झगड़ा) छिड़ गई। आगे चलकर मदरसे के सदर मुदर्रिस मौलवी महमूदुल हसन साहेब भी हंगामे में शरीक हो गए और झगड़ा तूल पकड़ गया अब इसके बाद के वाकिआ कारी तय्यब साहेब ही की जुबानी सुनिये मौसूफ लिखते हैं कि:—

"इसी दौरान एक दिन अलस्सबाह बाद नमाज़े फज्र मौलाना रफीउदीन साहेब रहमतुल्लाह अलैहि ने मौलाना महमूदुल हसन साहेब को अपने हुजरे मे बुलाया (जो दारूल उलूम देवबन्द में है) मौलाना हाज़िर हुए और बन्द हुजरा के केवाड़ खोल कर अन्दर दाख़िल हुए मौसम सख़्त सर्दी का था।

मौलाना रफीउदीन साहेब रहमतुल्लाह अलैहि ने फ़रमाया कि पहले यह मेरा रूई का लेबादा देख लो। मौलाना ने लेबादा देखा तो तर था और खूब भीग रहा था फ़रमाया कि वाक़िआ यह है कि अभी अभी मौलाना नानौतवी रहमतुल्लाह अलैहि जसदे उन्सुरी (जिस्मे जाहिर) के साथ मेरे पास तशरीफ़ लाए थे जिससे मैं एक दम पसीना पसीना हो गया और मेरा लेबादा तरबतर हो गया और यह फ़रमाया कि महमूद हसन को कह दो कि वह इस झगड़े में न पड़े। बस मैं ने यह कहने के लिए बुलाया है। मौलाना महमूद हसन साहेब ने अर्ज़ किया कि हज़रत मैं आप के हाथ पर तौबा करता हूँ कि इस के बाद मैं इस क़िस्से में कुछ न बोलूँगा।" (अर्वाह सलासा, सफ़ाः २४२)

मौलवी नानौतवी साहेब का खुदाई तसर्रुफः -

अब एक नया तमाशा और मुलाहेजा फरमाईये। कारी तैय्यब साहेब की इस रवायत पर देवबन्दी मजहब के पेशवा मौलवी अशरफ़ अली साहेब थानवी ने अपना एक नया हाशिया चढ़ाया है जिस में ब्यान करदा वाक़ेआ की तौसीक (पृष्टि) करते हुए मौसूफ़ ने तहरीर किया हैः–

> यह वाक़िआ रूह का तमस्सुल था और इस की दो सूरतें हो सकती हैं। एक यह कि जसद मिसाली था मगर मुशाबा जसदे उंसुरी के, दूसरी सूरत यह कि रूह ने खुद उनासिर में तसर्रूफ करके जसदे उंसुरी तैयार कर लिया (अर्वाहे सलासा, सफा २४३)

लाइलाहा इल्लल्लाह देख रहे हैं आप? इस एक वाकिआ के साथ कितने मुश्रेकाना अक़ीदे लिपटे हुए हैं। पहला अकीदा तो मौलवी क़ासिम साहेब नानौतवी के हक़ में इल्मे गैब का है क्यो की इन हज़रात के तई अगर उन्हें इल्मे गैब नहीं था तो आलमे बर्ज़ख में उन्हें क्यों कर खबर हो गई कि मदरसा देवबन्द में मुदर्रेसीन के दरमियान सख्त हंगामा हो गया है यहाँ तक कि मदरसा के सदर मुदर्रिस मौलवी महमूदुल हसन साहेब भी उसमें शामिल होगए हैं चल कर उन्हें मना कर दिया जाए।

और फिर उनकी रूह की क़ूव्वते तसर्रूफ़ ;च्वूमतद्ध का क्या कहना यानी साहेब के इर्शाद के मुताबिक इस जहाने खाकी में दोबारा आने के लिए उसने खुद ही आग पानी और हवा मिट्टी का एक इन्सानी जिस्म तैयार किया और खुद ही उसमें दाखिल होकर ज़िन्दगी के आसार और नक़ल व हर्कत की कुव्वते इरादी से मुसल्लह हुई और लहद से निकल कर सीधे देवबन्द के मदरसे में चली आई।

सोचने की बात यह है कि मौलवी कासिम साहेब नानौतवी की रूह के लिए यह खुदाई इख्तियारात बिला चूँ व चरा मौलवी रफीउद्दीन साहेब ने भी तस्लीम कर लिया। मौलवी महमूदुल हसन साहेब भी इस पर आँख बन्द करके ईमान ले आए और थानवी साहेब का क्या कहना कि उन्हों ने तो जिस्मे इन्सानी का खालिक़ (जन्मदाता ही उसे ठहरा दिया और अब क़ारी तैय्यब साहेब उसकी तशहीर फरमा रहे हैं।

इन हालात में एक सहीहुद्दिमाग आदमी यह सोचे बग़ैर नहीं रह सकता कि रूह के तसर्रुफ़ात व एख्तियारात और ग़ैबी इल्म व इदराक ने की जो कुव्वते सरवरे काएनात सल्लल्लाहु तआ़ला अलैहि वसल्लम और उनके मुकर्रेबीन के हक़ में तस्लीम करना यह हजरात कुफ़्र व शिर्क समझते हैं वही "अपने मौलाना" के हक में क्यो कर इस्लाम व ईमान बन गया है?

क्या यह सूरते हाल इस हकीकत को वाजेह नहीं करती कि इन हज़रात के यहाँ कुफ्र व शिर्क की यह तमाम बहसें सिर्फ़ इस लिए हैं कि अम्बिया व औलिया की हुर्मतों के ख़िलाफ़ जंग करने के लिए इन्हें हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया जाए।

वर्ना खालिस अकीदए तौहीद का जज़बा इस के पसे मंज़र मे कार फ़रमा होता तो शिर्क के सवाल पर अपने और बेगाने के दरमियान कतअ़न कोई तफ़रीक़ रवा न रखी जाती।

एक और हैरत अंगेज़ वाक़ेआ: -

देवबन्दी जमाअ़त के मशहूर फ़ाज़िल मौलवी मुनाज़िर अह़सन गीलानी ने सवानेह क़ासिमी के नाम से मौलवी क़ासिम साहेब नानौतवी की एक ज़ख़ीम सवानेह हयात लिखी है जिसे दारुल उलूम देवबन्द ने खुद अपने एहतमाम से शाए की है।

अपनी इस किताब में मौलवी महमूदुल हसन साहेब के हवाले से ही उन्हों ने किसी "वाएज मौलाना" के साथ एक

देवबन्दी तालिबे इल्म का एक बड़ा ही अजीब व ग़रीब मुनाजरा नक़ल किया है। उस देवबन्दी तालिबे इल्म के मुतअल्कि मौसूफ के ब्यान का यह हिस्सा खास तौर पर पढ़ने के काबिल है। लिखते हैं कि:–

"वह पंजाब की तरफ़ किसी इलाक़े में चला गया और किसी क़सबा की मस्जिद में लोगों ने उनको इमाम की जगह दे दी। क़स्बा वाले उससे काफ़ी मानूस हो गए और अच्छी गुज़र बसर होने लगी। इसी अर्से में कोई मौलवी साहेब गश्त लगाते हुए उस कस्बे में भी आधमके वाज़ व तक़रीर का सिलसिला शुरू किया लोग उनके कुछ मोतकिद हो गए। उन्होंने दरयाफ़्त किया कि यहाँ की मस्जिद का इमाम कौन है कहा गया कि देवबन्द के पढ़े हुए मौलवी साहेब हैं।

देवबन्द का नाम सुनना था कि वाएज मौलाना साहेब आग बगूला हो गए और फतवा दे दिया कि इस अर्से में जितनी नमाज़ें इस देवबन्दी के पीछे तुम लोगों ने पढ़ी हैं वह सिरे से अदा ही नहीं हुई हैं। और जैसा कि दस्तूर है 'देवबन्दी यह हैं' वह हैं यह कहते हैं वह कहते हैं इस्लाम के दुश्मन हैं। रसुलूल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से अ़दावत रखते है। वगैरा वगैरा।

क़स्बाती मुसलमान बेचारे सख़्त हैरान हुए कि मुफ़्त में उस मौलवी पर रूपये भी बर्बाद हुए और नमाज़ें भी बर्बाद हुई एक वफ्द उस गरीब देवबन्दी इमाम के पास पहुँचा और मुस्तदई हुआ कि मौलाना वाएज़ साहेब जो हमारे क़स्बे में आए हैं उनके जो इलज़ामात हैं या तो उनका जवाब दीजिए वर्ना फिर बताईये कि हम लोग आप के साथ क्या करें?।

जान भी गरीब की खतरे में आगई और नौकरी चोकरी का क़िस्सा तो खतम शुदा ही मालुम होने लगा चूँकि इल्मी मवाद भी उसका मामूली था खौफजदा हुए कि खुदा जाने यह वाएज मौलाना साहेब किस पाए के आलिम है? मंतिक व फ़लसफ़ा बघारेगे और मैं गरीब अपना सीधा साधा मुल्ला हूँ उन से बाज़ी ले भी जा सकता हूँ या नहीं? ताहम चारए कार इसके सिवा और क्या था कि मुनाज़रे का वादा डरते डरते कर लिया। तारीख और महल व मुकाम सब का मसला तय हो गया। वाएज मौलाना साहेब बड़ा जबरदस्त अमामा तवील व अरीज़ सर पर लपेटे हुए किताबों के पुश्तारे के साथ मजलिस में अपने हवारियो के साथ जल्वा फ़रमा हुए। इधर यह गरीब देवबन्दी इमाम मनहनी व जईफ़ मिस्कीन शकल् व मिस्कीन आवाज़ खौफजदा लरजा व तरसां भी अल्लाह अल्लाह करते हुए सामने आया।

सुनने की बात यही है जो इस के बाद इस देवबन्दी इमाम मौलवी मुशाहेदे के बाद बयान की कहते है ये कि मौलाना वाएज़ साहेब के सामने में भी बैठ गया। अभी गुफ्तगू शुरु नहीं हुई थी कि अचानक अपने बाज मे मुझे महसूस हुआ कि एक शख़्स जिसे मैं नही जानता था वह भी आकर बैठ गया और मुझ से वह अजनबी अचानक नमूदार होने वाली शखसियत कहती है कि हाँ गुफ्तगू शुरु करो और हरगिज़ न डरो। दिल में ग़ैर मामूली क़ुव्वत इस से पैदा हुई।

इसके बाद क्या हुआ? देवबन्दी इमाम साहेब का बयान है कि मेरी जबान से कुछ फ़िकरे निकल रहे थे

और इस तौर पर निकल रहे थे कि मैं खुद नही जानता था कि क्या कह रहा हूँ। जिस का जवाब मौलाना वाएज साहेब ने इब्तेदा में तो दिया लेकिन सवाल व जवाब का सिलसिला अभी ज़्यादा दराज भी नहीं हुआ था कि एक दफ़ा मौलाना वाएज़ साहब को देखता हूँ कि उठ खडे हुए

मेरे क़दमों पर सर डालते हुए रो रहे हैं पगड़ी बिखरी हुई है और कहते जाते हैं मैं नहीं जानता था कि आप इतने बड़े आलिम हैं लिल्लाह माफ़ कीजिए! आप जो कुछ फ़रमा रहे हैं यही सही और दुरुस्त है मैं ही गलती पर था।

यह मंज़र ही ऐसा था कि मजमा दम बखुद था क्या सोचकर आया था और क्या देख रहा था। देवबन्दी इमाम साहेब ने कहा कि अचानक नमूदार होने वाली शख़सिय्यत मेरी नज़र से इसके बाद ओझल हो गई और कुछ नहीं मालूम था कि वह कौन थे और यह क़िस्सा क्या था (सवानेह क़ासिमी, जिल्द:१, सफा: ३३०–३३१)।

यहाँ तक अस्लेक़िस्सा ब्यान कर चुकने के बाद और मौलवी मुनाज़िर अहसन गीलानी एक निहायत पुरअसरार और हैरत अंगेज़ वाक़ेआ की नक़ाब कुशाई फरमाते हैं। दरअस्ल उनके बयान का यही हिस्सा हमारी बहस का मर्कज़ी नुकता है इसके बाद लिखते हैं।

"हज़रत शैखुल हिन्द (यानी मौलाना मौलवी महमूदुल हसन साहेब) फ़रमाते थे मैंने उन मौलवी साहेब से दर्याफ़्त किया अचानक नमूदार होने वाली शख़सियत का हुलिया क्या था। हुलिया जो ब्यान किया फ़रमाते थे कि सुनता जाता था और हज़रतुल उस्ताज़ (यानी मौलवी क़ासिम नानौतवी) का एक एक खाल व खत नजर के

सामने आता चला जा रहा था जब वह बयान ख़त्म कर चुके तो मैं ने उनसे कहा कि यह तो हजरतुल उस्ताज़ रहमतुल्लाह अलैहि थे जो तुम्हारी इमदाद के लिए हक़ तआला की तरफ से जाहिर हुए। (सवानेह क़ासिमी, जिल्द १,सफा: २३२)

मुलाहेजा फरमाईये! क़िस्सा आराई से कतअ़ नज़र इस एक वाकेआ के अन्दर मौलवी क़ासिम साहेब नानौतवी के हक़ मे कितने मुश्रेकाना अक़ाएद का बर्मला एतराफ़ कर लिया गया है।

अव्वलन यह कि निहायत फराख़ दिली के साथ उनके अन्दर गैबदानी की यह कुव्वत भी मान ली गई है जिस के ज़रिए उन्हे आलमे बर्जख ही में मालूम हो गया कि एक देवबन्दी इमाम फलाँमुकाम पर मैदाने मुनाजरा मे यक्का व तनहा बेबसी की हालत मे दमतोड़ रहा है चल कर उसकी मदद की जाए।

दूसरे यह कि उनके हक़ में यह कुव्वते तसर्रुफ भी तस्लीम कर ली गई है कि वह अपने जिस्मे जाहरी के साथ अपनी लहद से निकल कर जहाँ चाहें बे रोक टोक जा सकते हैं।

तीसरे यह कि मरने के बाद जिन्दों की मदद करने का एख़्तियार चाहे देवबन्दी हजरात के तईं अम्बिया व औलिया के लिए भी साबित न हो लेकिन "अपने मौलाना" के लिए ज़रूर साबित है।

अब आप ही इंसाफ़ कीजिए कि यह सूरते हाल क्या इस यक़ीन को तकवियत नहीं पहुँचाती कि इन हजरात के यहाँ कुफ़्र व शिर्क की तमाम बहसें सिर्फ़ इसलिए हैं कि उन्हें अम्बिया व औलिया की हुरमतों के ख़िलाफ़ हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया जाए वर्ना ख़ालिस अक़ीदए तौहीद का जज़्बा इस के पसे मंज़र में कार फ़रमा होता तो शिर्क के सवाल पर अपने और

बेगाने की तफ़रीक़ क्यों रवा रखी जाती?

अपने ही हाथों अपने मजहब का खून:-

ऐसा मालूम होता है कि यह क़िस्सा बयान कर चुकने के बाद मौलवी मनाज़िर अहसन गीलानी को अचानक याद आया कि हमारे यहाँ तो अरवाहे अम्बिया तक के लिए भी जिन्दो की मदद करने का कोई तसव्वुर नहीं है बल्कि अपने मशरब मे हम इस तरह के तसव्वुरात को "मुश्रेकाना अकाएद" से ताबीर करते आ रहे हैं फिर इतने वाज़ेह मुसलसल और मुतवातिर इन्कार के बाद अपने मौलाना के जरिए गैबी इमदाद का यह क़िस्सा क्यो कर निबाहा जा सकेगा।

यह सोच कर बजाए इसके कि अपने मसलक को बचाने के लिए मौसूफ़ इस मसनूई (बनावटी) क़िस्से का इन्कार करते उन्होने "अपने मौलाना" का खुदाई एख्तियार साबित करने के लिए अपने अस्ले मजहब ही का इन्कार कर दिया।

मैं यक़ीन करता हूँ कि मजहबी इहिराफ की ऐसी शर्मनाक मिसाल किसी फ़िर्के की तारीख मे शायद ही मिल सकेगी वाकिआ बयान कर चुकने के बाद किताब के हाशिआ मे मौसूफ इर्शाद फ़रमाते हैं। हैरत मे डूब कर यह "अनकही" पढिए और इलम व दियानत का एक ताजा खून और मुलाहेजा फरमाईए लिखते हैं:-

> "वफ़ात याफ़्ता बुज र्गों की रूहो से इमदाद के मसले में उल्माए देवबन्द का ख़्याल भी वही है जो आम अहले सुन्नत वल जमात का है। आखिर जब मलाइका जैसी रूहानी हस्तियों से खुद कुरआन ही में है कि हक तआला अपने बन्दों की इमदाद करते हैं।
>
> सही हदीसों में है कि वाकिआए- मेराज में रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से तख़फीफे सलवात के मसले में इमदाद मिली और दूसरे अम्बिया अलैहिस्सलाम से मुलाक़ातें हुई बशारतें मिली तो इसी किस्म की अरवाहे तय्येबा से किसी मुसीबत जदा मोमिन की इमदाद का काम कुदरत अगर ले तो कुरआन की किस आयत या किस हदीस से इस की तर्दीद होती है"(हाशिया सवानेह कासिमी, जिल्द: १, सफ़ा: ३३३)

सुबहानल्लाह! जरा गलबए हक़ की शान तो देखिए कि वफात याफ़ता बुजुर्गों की रूहों से इमदाद के मसले में कल तक जो सवाल हम उनसे करते थे आज वही सवाल वह अपने आप से कर रहे है अब इस सवाल का जवाब तो उन्हीं लोगों के जिम्मे है जिन्होंने एक खालिस इस्लामी अकीदे को कुफ़्र व शिर्क का नाम देकर अस्ले हकीकत का चेहरा बिगाड़ दिया है और जिसके कई सफहात पर फैले हुए नमूने आप "तस्वीर के पहले रुख़ में पढ़ आए है।

ताहम गीलानी साहेब के इस हाशिये से इतनी बात ज़रूर साफ़ हो गई कि जो लोग वफ़ात याफ्ता बुजुर्गों की रूहों से इमदाद के काएल हैं वही फ़िल हकीक़त अहले सुन्नत वल् जमाअत हैं अब इनहे बिदअती कहकर पुकारना न सिर्फ़ यह कि अपने आप को झुठलाना है बलिक अख़्लाकी रजाएल से अपनी ज़बान व क़लम की आलूदगी का मुज़ाहेरा भी करना है।

हाशिये की इबारत का यह हिस्सा भी दीदए हैरत से पढ़ने के काबिल है इर्शाद फरमाते हैं।

"और सच तो यह है कि आदमी को आम तौर पर जो इमदाद भी मिल रही है हक़ तआ़ला अपनी मख़लूक़ात ही से तो यह इमदादें पहुँचा रहे हैं। रौशनी आफ्ताब

> से मिलती है दूध हमें गाए और भैंस से मिलता है यह तो एक वाकिआ है भला यह भी इन्कार करने की कोई चीज़ हो सकती है।" (हाशिया सवानेह क़ासिमी सफ़ा: ३३२)

इन्कार की बात क्या पूछते हैं कि आप के यहाँ तो इस एक मोर्चे पर निस्फ़ सदी से जंग लड़ी जा रही है मारकए कारज़ार (युद्ध के मैदान) में हकाइक की तड़पती हुई लाशें आप नही देख पाते तो अपने ही क़लम की तलवार से लहू की टपकती हुई बूँदें मुलाहेज़ा फ़रमा लीजिए।

हाशिये की इबारत जिस हिस्से पर तमाम हुई है उसमे एतिराफ़ हक का मुतालिबा इस क़द्र बेकाबू हो गया है कि तहरीर के नुकूश से आवाज आ रही है। अहले हक को बगैर किसी लश्कर कशी के अपने मस्लक की यह फ़तहे मुबीन मुबारक हो। इर्शाद फ़रमाते हैं।

> पस बुज़ुर्गों की अर्वाह से मदद लेने के हम मुन्किर नही हैं। (हाशिया सवानेह क़ासिमी जिल्द १ सफ़ा ३३२)

अल्लाहु अकबर! देख रहे है आप? किस्सा आराई को वाक़िआ बनाने के लिए यहाँ कितनी बेदर्दी के साथ मौलाना ने अपने मजहब का खून किया है। जो अकीदा निस्फ़ सदी से पूरी जमाअत के ऐवाने फ़िक्र का संगे बुनियाद रहा है उसे ढा देने में मौसूफ़ को ज़रा भी तअम्मुल नहीं हुआ।

एतक़ाद व अमल के दर्मियान शर्मनाक तसादुम:

सरबा गरेबा होकर इल्म व दयानत की पामाली का ज़रा तमाशा मुलाहेज़ा फ़रमाईए कि सवानेह क़ासिमी नामी किताब खास दारूल उलूम देवबन्द के ज़ेरे एहतेमाम शाए हुई है। कारी

तय्यब साहेब मोहतमिम बजाते खुद इस के पब्लिशर हैं अपने हल्कए असर में किताब की सक़ाहत (वज़न) किसी रुख़ से भी मश्कूक (सामजस्य) नहीं कही जा सकती लेकिन सख़्त हैरत है कि नानौतवी साहेब को माफ़ौकुल बशर (सारे इन्सानों से ऊपर) साबित करने के लिए देवबन्दी जमाअत के उन मशाहीर ने एक ऐसी खुली हुई हक़ीक़त का इन्कार कर दिया जिसे अब वह छिपाना भी चाहे तो नहीं छुपा सकते। मिसाल के तौर पर वफ़ात याफ़्ता बुजुर्गों की रूहों से इमदाद के मसले में देवबन्दी हज़रात का असल मजहब क्या है? उसे मालूम करने के लिए देवबन्दी मजहब की बुनियादी किताब तक़वियतुल ईमान की यह इबारत पढ़िऐ।

> मुरादें पूरी करनी हाजत बरलानी बलाऐं टालनी मुश्किल में दस्तगीरी करनी बुरे वक़्त में पहुँचना यह सब अल्लाह ही की शान है और किसी अम्बिया व औलिया की पीर व शहीद की भूत व परी की यह शान नहीं जो किसी को ऐसा साबित करे और इस से मुरादें माँगे और इस तवक्को पर नजर व न्याज़ करे और इस की मन्नतें माने और मुसीबत के वक्त उसको पुकारे सो वह मुश्रिक हो जाता है ..... फिर ख़्वाह यूँ समझें कि इन कामो की ताक़त उनको खुद बख़ूद है यूँ समझें कि अल्लाह ने उन को ऐसी क़ुदरत बख़्शी है, हर तरह शिर्क साबित होता है। (तक़वियतुल ईमान, सफ़ाः १०, आरमी प्रेस देहली)

यह है अकीदा कि मुर्दा व ज़िन्दा नबी और वली किसी के अन्दर भी मुराद पूरी करने हाजत बर लाने, बला टालने, मुश्किल में दस्तगीरी करने और बुरे वक़्त में पहुँचने की कोई ताक़त व कुदरत नहीं है न ज़ाती न अताई।

और वह है अमल कि नानोतवी साहेब वफ़ात के बाद हाजत भी बर लाए बला भी टाल दी और बुरे वक़्त में इस शान से पहुँचे कि सारे जहाँ में डंका बज गया।

एक ही बात जो हर जगह शिर्क थी सब के लिए शिर्क थी हर हाल में शिर्क थी जब अपने मौलाना की बात आ गई तो अचानक इस्लाम बन गई ईमान बन गई, अम्रे वाक़िआ (वास्तविक्ता) बन गई। और फिर दिलों का एक ही अक़ीदा जब तक इस का तअल्लुक़ नबी और वली से था तो सारा कुरआन उसके ख़िलाफ़ सारी अहादीस उस से मज़ाहिम और सारा इस्लाम उसकी बीख़ कुनी (उखाड़ फेंकने) में तस्लीम कर लिया गया। लेकिन सिर्फ़ तअल्लुक़ बदल गया और नबी व वली की जगह अपने मौलाना की बात आगई तो आप देख रहे हैं कि अब सारा कुरआन उसकी हिमायत में सारी अहादीस उसकी ताईद में और सारा इस्लाम उसकी पुश्त पनाही में है।

आवाज़ दो इन्साफ़ को इन्साफ़ कहाँ है?

<u>अपनी तकज़ीब की एक शर्मनाक मिसालः-</u>

बात दरमियान में आ गई है तो वफ़ात याफ़ता बुज़ुर्गों की रुहों के मसले में देवबन्दी जमाअत के मशहूर मुनाज़िर मौलाना मंज़ूर साहब नोमानी का एक इदारिया (Editorial) पढ़िये जिसे उन्हों ने माहनामा अलफ़ुर्क़ान लखनऊ में सपुर्दे कलम किया है ताकि इस मसले में देवबन्दी जमाअत का असल जेहन आप पर वाज़ेह हो जाए। मौसूफ़ लिखते हैं।

> "जिन बन्दों को अल्लाह ने कोई ऐसी क़ाबलियत दे दी है जिस से दूसरों को भी कोई नफ़ा या इमदाद पहुँचा सकते हैं जैसे हकीम 'डाक्टर' वकील वग़ैरा तो

उनके मुतअल्लिक़ हर एक यह समझता है कि उन में कोई ग़ैबी ताक़त नहीं और उनके अपने कब्ज़े में कुछ भी नहीं है और यह भी हमारे ही तरह अल्लाह के मोहताज बन्दे हैं बस इतनी सी बात है कि अल्लाह ने उन्हें इस आ़लमे अस्बाब में इस काबिल बना दिया है कि हम उन से फ़लाँ काम में मदद ले सकते हैं।

इस बिना पर उन से काम लेने और एआनत हासिल करने में शिर्क का कोई सवाल नहीं पैदा होता। शिर्क जब होता जब किसी हस्ती को अल्लाह के क़ाएम किए हुए इस जाहेरी सिलसिलए अस्बाब से अलग ग़ैबी तौर पर अपने इरादा व एख़्तियार से कार फ़रमा और मुतसर्रिफ समझा जाए और इस ऐतक़ाद की बिना पर इस से अपनी हाजतों में मदद माँगी जाए। (अल्फुर्क़ान) जमादिल ऊला, १३७२,सफ़ा: २५

वाजेह रहे कि दारूल उलूम देवबन्द के "वाक़िआ निजा" और क़िस्सए मुनाजेरा में नानौतवी साहेब के मुतअल्लिक़ जो रिवायतें नक़ल की गई हैं उन तमाम वाक़िआत में जाहरी सिलसिलए अस्बाब से अलग ग़ैबी तौर पर ही उनकी इमदाद व तसर्रुफ़ का अक़ीदा जाहिर किया गया है अब तो इस के शिर्क होने में कोई दक़ीक़ा नहीं रह जाता।

इदारिये (Editorail) की इबारत जिस हिस्से पर तमाम हुई है वह भी ख़ासी तवज्जह से पढने के क़ाबिल है। क़लम की नोक से रौशनाई की जगह जहर टपक रहा है। तहरीर फ़रमाते हैं—

"आप मुसलमान कहलाने वाले क़ुबूरियो और ताजिया परस्तों को देख लीजिए शैतान ने मुश्रेकाना आमाल को उनके दिलों में ऐसा उतार दिया है कि वह इस सिलसिले मे क़ुरआन व हदीस की कोई बात

सुनने के रवादार नहीं।

मैं तो इन्ही लोगों को देख कर अगली उम्मतों के शिर्क को समझता हूँ। अगर मुसलमानों में यह लोग न होते तो वाकि़आ यह है कि मेरे लिए अगली उम्मतों के शिर्क को समझना बड़ा मुश्किल होता।"(अलफ़ु. क़ुर्आन, सफ़ाः ३०)

तौहीद परस्ती ज़रा गौर से मुलाहेज़ा फ़रमाइये कि मौसूफ़ को मुसलमानों का छुपा हुआ शिर्क तो नज़र आ गया। लेकिन अपने घर का खुला हुआ शिर्क नज़र नहीं आता। कितनी मासूमियत के साथ आप फ़रमाते हैं कि "अगर मुसलमानों में यह लोग न होते तो मेरे लिए अगली उम्मतों के शिर्क को समझना मुश्किल होता" मैं कहता हूँ मुश्किल क्यों होता? शिर्क को समझने के लिए घर ही में किस बात की कमी थी? खुदा का दिया सब कुछ था।

सच पूछिये तो इसी तरह की खुद फ़रेबियों का जादू तोड़ने के लिए मेरे ज़हन में ज़ेरे नज़र किताब की तर्तीब का ख्याल पैदा हुआ कि अस्हाबे अक़्ल व इन्साफ़ वाज़ेह तौर पर महसूस कर ले कि लोग दूसरों पर शिर्क का इल्ज़ाम आएद करते है अपने नामए आमाल के आइने में वह खुद कितने बडे मुश्रिक हैं?

एक और इब्रत नाक कहानी: -

बहस के ख़ात्मे पर इस सिलसिले की एक इब्रतनाक कहानी और सुन लीजिए ताकि हुस्ने ज़न की हुज्जत भी तमाम हो जाए।

हिन्दुस्तान के अन्दर वफ़ात याफ़्ता बुज़ुर्गो में सुल्तानुल औलिया हज़रत ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ रज़िअल्लाहु तआला अन्हु की अज़्मते खुदा दाद और उनकी रूहानियत का फ़ैज़ाने आम

आठ सौ बरस की तारीख़ का एक जाना पहचाना वाक़िआ है लेकिन जज़बए दिल की सितम ज़रीफ़ी मुलाहेज़ा फ़रमाईये कि देवबन्दी जमाअत के मज़हबी पेशवा मौलवी अशरफ़ अली थानवी ने सरकारे ख़्वाजा के संगेदर (आस्ताने) का रिश्ता बुत ख़ाने की दहलीज़ (मदिर की चौखट) के साथ जोड़ दिया है जैसा कि थानवी साहेब के मलफ़ूज़ात का मुरत्तिब उनकी मज्लिस का हाल बयान करते हुए खुद उनका यह मुँह बोला ब्यान नक़ल करता है कि :–

"एक अंग्रेज ने लिखा है कि हिन्दुस्तान मे सब से ज़्यादा हैरत अंग्रेज़ बात मैं ने देखी कि अजमेर मे एक मुर्दा को देखा कि अजमेर में पडा हुआ सारे हिन्दुस्तान पर सल्तनत कर रहा है। (कमालाते अशरफिया, सफ़ाः २५२)

अंग्रेज़ का यह कौल नकल करने के बाद थानवी साहेब ने इर्शाद फ़रमाया।

वाक़ई ख़्वाजा साहेब के साथ लोगों को बिलख़ुसूस रियासत के उमरा को बहुत ही अक़ीदत है (इस पर ख़्वाजा अजीज़ुल हसन ने अर्ज किया कि जब फ़ाइदा होता होगा तभी तो अक़ीदत है। (थानवी साहेब ने) फरमाया कि अल्लाह तआ़ला के साथ जैसा हुस्ने ज़न हो वैसा ही मामला फ़रमाते हैं। इस तरह तो बुतपरस्तों को बुत परस्ती में भी फायदा होता है यह कोई दलील थोड़ी ही है। दलील है शरीअत। (कमालाते अशरफ़िया, सफ़ाः २५२)

बुत परस्ती के फ़वाएद की तफसील तो थानवी साहेब ही बता सकते हैं कि सब से पहले वही इस तजुर्बे से फ़ैज़याब हुए। लेकिन ग़ैरत से डूब मरने की बात तो यह है कि एक मुंकिरे

इस्लाम दुश्मन और एक कलमा गो दोस्त की निगाहों का फर्क ज़रा मुलाहेज़ा फरमाईये। दुश्मन की नज़र में सरकारे ख़्वाजा किश्वर हिन्द के सुल्तान की तरह जगमगाते रहे हैं जब कि दोस्त की निगाह उन्हें पत्थर के सनम से ज़्यादा हैसियत नहीं देती।

इस मुकाम पर मुझे सिर्फ़ इतनी बात कहनी है कि ईमान की आँखों का चिराग़ अगर गुल नहीं हो गया है तो एक तरफ़ उन देवबन्दी मशाहीर के जहन में नानौतवी साहेब का वह सरापा देखिये। कितना कार फ़रमा, कितना कार साज, कितना बाइख़्तियार और किबरियाई कुदरतों (खुदाई ताकतों) से कितना मुसल्लह नज़र आता है कि दस्तगीरी और चारा साजी (मदद करने) के लिए वह नियाज मंदों को अपने मर्कद तक भी आने की ज़हमत नहीं देते।

जहाँ ज़रा सी आँच महसूस हुई खुद ही आलमे बर्जख (कब्रस्तान) से दौड़े चले आते है और अपनी कार साजी का जल्वा दिखाकर वापिस लौट जाते हैं और आते भी है तो अपने इसी पैकर मानूस (जानी पहचानी शक्ल)मे कि देखने वाले उन्हें माथे की आँखों से दिखें और पहचान ले।

लेकिन वाए रे दिल हिर्मा नसीब की नाबकारी कि दूसरी तरफ़ इसी ज़ेहन में ख्वाजए हिन्द का जो तसव्वुर उभरता है इसमें उनके रूहानी एकतेदार के एतराफ़ के लिए कतअन कोई गुंजाइश नहीं है। जिस्मे जाहेरी की महसूस शौकतो तलअतो और इत्रेबेज़ निकहतों के साथ किसी गम नसीब (मुसीबत के मारे) तक पहुँचने की बात तो बहुत बड़ी है कि यह हजरात तो उनके मुतअल्लिक इतनी बात भी तसलीम करने के रवादार नहीं हैं कि उनके काकुल व रुख को जल्वागाह (आस्ताने) में पहुँचकर भी कोई फ़ैज़याब हो सकता है।

और जसारते नारवा की इन्तेहा तो यह है कि इन हज़रात के यहाँ अताए रसूल (हजरते ख़्वाजा) की तुर्बत (मज़ार शरीफ़) और बुत खाने के दरमियान कतअन कोई ज़ाहेरी फ़र्क़ नहीं है नफ़ा रसानी और फ़ैजबख्शी के सिलसिले में दोनों जगह महरूमी का एक ही दाग है।

खुदा मोहलत दे तो थोडी देर ईमान व अक़ीदत के साये में बैठकर सोचियेगा कि क्या सचमुच यही तस्वीर है उस खुसरूए जमाना की जिसे रसूलुस्सक़लैन ने किश्वरे हिन्द में अपना नाएबुस्सल्तनत बनाकर भेजा है।

और जवाब मिलने की तवक्क़ा हो तो अपने ज़मीर से इतना जरूर दरियाफ़्त कीजिएगा कि कलम की वह रौशनाई जो नानौतवी साहेब की 'हम्द' (तारीफ़) में गंगा जमुना की तरह बह रही थी वही ख्वाजए ख़्वाजगाने चिश्त की मनक़ेबत के सवाल पर अचानक क्यों खुश्क हो गई?

इतनी तफसीलात के बाद अब यह बताने की ज़रूरत नहीं है कि वफ़ात याफ्ता बुजुर्गों से इमदाद के मस्ले में देवबन्दी हजरात का असली मजहब क्या है? अलबत्ता इस इल्जाम का जवाब हमारे जिम्मे नहीं है कि एक ही एतेकाद जो रसूल व वली के हक़ में शिर्क है। वही घर के बुजुर्गों के हक़ में इस्लाम व ईमान क्यों कर बन गया है?

अब आप ही फ़ैसला कीजिए कि यह सूरते हाल क्या इस यक़ीन को तक़वियत नहीं पहुँचाती कि इन हज़रात के यहाँ कुफ़्र व शिर्क की यह सारी बहसें सिर्फ़ इसलिए हैं कि अम्बिया व औलिया की हुरमतों को घायल करने के लिए उन्हें हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया जाए। वर्ना ख़ालिस अक़ीदए तौहीद का जजबा इसके पसे मंजर में कारफ़रमा होता तो शिर्क के सवाल पर अपने और बेगाने के दरमियान यह तफ़रीक़ क्यों रवा रखी

जाती है?

ज़िमनी (अन्दरूनी) तौर पर यह बहस निकल आई वर्ना सिलसिला चल रहा था उल्माए देवबन्द की ग़ैबदानी और ख़ुदाई इख़्तियारात से मुतअल्लिक तसनीफ करदा वाक़ेआत का। अब फिर उसी सिलसिला के साथ अपने ज़हन का रिश्ता जोड़ लीजिए।

<u>इल्म माफ़िल अरहाम का अजीब व ग़रीब वाक़िआः -</u>

मुफ्ती अ़तीक़ रहमान साहब देहलवी जो देवबन्दी जमाअत के मजहबी पेश्वा और दारूल उलूम देवबन्द की मजलिसे शुरा के एक अहम रूकन हैं उन्होने माहनामा "बुर्हान" देहली के मुदीर मौलवी सईद अहमद अकबर आबादी फाज़िले देवबन्द के वालिद की वफात पर जरीदए बुर्हान मे एक तालियती शजरा लिखा है जो मुतवफ्फी (मरने वाले) की जिन्दगी के हालात पर मुश्तमिल है। वाकिआत के रावी खुद मौलवी सईद अहमद हैं कलम मुफ्ती अतीक़ रहमान साहब का है अपनी पैदाइश से मुतअल्लिक़ मौलवी सईद अहमद का "मौलाद नामा" खास तौर पर पढ़ने के क़ाबिल है। मौसूफ बयान करते है कि.–

> "मुझ से पहले अब्बा के एक लड़का और एक लड़की पैदा हुए थे। जिन का नौ उमरी ही मे इनतेकाल हो गया था उस के बाद मुसलसल सत्रह साल तक उनके कोई औलाद नहीं हुई। यहाँ तक कि उन्होंने तर्के मुलाजिमत और हिजरत का क़स्द कर लिया (इस वक्त वह आगरा लोहा मंडी के सरकारी शेफा खाने मे मुलाज़िम थे) मगर जब काज़ी (अब्दुल गनी) साहेब मरहूम (वालिद के पीर व मुर्शिद) को इसकी इत्तेला हुई तो उन्होंने पत्र लिख भेजा

और साथ ही खुश ख़बरी दी कि उनके लड़का पैदा होगा चुनाचे इस बशारत के चन्द साल बाद सन ८ ई के रमजान की ७ तारीख़ को सुबहे सादिक़ के वक़्त मे पैदा हुआ तो विलादत से दो घंटे क़बल अब्बा ने हजरत मौलाना गगोही और हजरत मौलाना नानौतवी को ख़्वाब में देखा कि लोहा मंडी के शेफ़ा खाने में तशरीफ़ लाए हैं और फरमाते है डाक्टर लड़का मुबारक!! इसका नाम सईद रखना।

चुनाचे अब्बा ने इस इर्शाद की तामील की और उसी वक्त फैसला कर लिया कि मैं बच्चा को देवबन्द भेजकर आलिम बनाऊँगा।

(माहनाम बुर्हान देहली अगस्त ५२ ई , सफ़ा ६८)

ज़रा ख़ालियुज्जेहन होकर एक लमहा (पल भर) के लिए सोचिए कि मौलवी सईद अहमद साहब के वालिद के पीर क़ाज़ी अब्दुल गनी साहब ने मौसूफ की पैदाईश से चन्द साल कब्ल ही यह मालूम कर लिया था कि "फ़र्जन्द" तश्रीफ़ ला रहे हैं जिसकी उन्होंने बशारत भी दे दी और बशारत के मुताबिक ७ रमजानुल मुबारक को मौलवी सईद अहमद इस सरायफ़ानी (दुनिया) मे तशरीफ भी ले आए।

सोचने की बात यह है कि अय्यामे हमल मे अगर उन्होंने ख़बर दी होती तो कहा जा सकता था कि तिब्बी (डाक्टरी) जराए से उन्हे इस का ज़न्ने गालिब होगया होगा लेकिन कई सालो पेश्तर यह मालूम करलेने का ज़रिया सिवाए इसके और क्या हो सकता है कि उन्हें "इल्मे ग़ैब" था।

और फिर मौलवी कासिम साहब नानौतवी और मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही की "ग़ैबदानी" का क्या कहना कि वह हजरात तो ऐन वक्त वेलादत (पैदाईश) से दो घंटे पेशतर ही अपनी अपनी कब्रों से निकल कर सीधे मौलवी अहमद सईद

साहब के वालिद के घर पहुँच गए और उन्हें बेटे की आमद पर पेशगी मुबारकबादी और नाम तक तजवीज फरमा दिया और मौसूफ़ ने इस ख़्वाब को बिल्कुल एक अम्रे वाकिआ (वास्तविक) की तरह यकीन कर लिया।

इन्साफ़ कीजिए! एक तरफ़ तो घर के बुजुर्गों के हक़ में दिलों का एतक़ाद यह है और दूसरी तरफ़ रसूले मुजतबा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के इल्मे ग़ैब के इन्कार में बुख़ारी शरीफ़ की यह हदीस देवबन्दी उल्मा की जबान व कलम की नोक से हमेशा लगी रहती है।

"सही बुख़ारी शरीफ़ में हजरत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ीअल्लाहु तआ़ला अन्हुमा से मरवी है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया है कि मफातीहे ग़ैब जिन का खुदा के सिवा कोई नहीं जानता वह पाँच चीज़ हैं जो सूरए लुक़मान की आख़री आयत में मज़कूर है यानी क्यामत का वक्त मख़सूस बारिश का ठीक वक्त की कब नाजिल होगी माफ़िल अरहाम यानी औरत के पेट में क्या है? बच्चा है या बच्ची मुस्तक़बिल के वाकियात मौत का सही मुकाम।(फ़तेह बरैली का दिलकश नज़्ज़ारा, सफ़ाः ५८)

क़ुरआन की आयत भी बरहक़ और हदीस भी वाजबुत्तस्लीम। लेकिन इतना अर्ज़ करने की इजाजत चाहूँगा कि मजकूरा बाला आयत व हदीस अगर रसूले मुजतबा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हक़ में इल्म माफ़िल अरहाम। (यह इल्म कि माँ के पेट में क्या है?) के इन्कार की दलील बन सकती है तो इल्म व दियानत के हुज़ूर में इस सवाल का जवाब दिया जाए कि यही आयत और यही हदीस "देवबन्दी उल्मा के नज़दीक क़ाज़ी

अब्दुल गनी मौल्वी क़ासिम साहब नानौतवी और मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही के हक में इल्म माफिल अरहाम के एतकाद से क्यों नहीं रोक रही है।

और अगर अपने बुजुर्गों के हक में मजकूरा बाला आयत व हदीस की कोई तावील तलाश कर ली गई थी तो फिर वही तावील रसूले मुजतबा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हक में क्यो नही रवा रखी गई।

एक ही मसले में जहन के दो रुख की वजह सिवाए इसके और क्या हो सकती है कि जिसे अपना समझा गया उसके कमालात के इजहार के लिए नहीं भी को गुंजाइश थी तो निकाल ली गई और जिस के लिए दिल के अन्दर को नरम गोशा तक मौजूद नहीं था उसके फजाएल व वाकेए के एतराफ मे भी दिल का चोर छुपाया।

एक और ईमान शिकन रिवायतः-

इल्मे माफ़िल अरहाम की बात चल पडी है तो लगे हाथों अकीदए तौहीद का एक और खून मुलाहेजा फ़रमाइए। यही मौलवी क़ासिम साहब नानौतवी अपनी जमाअत के एक 'शैख़' का तजकिरा करते हुए ब्यान करते हैं कि:-

> शाह अब्दुर्रहीम साहब विलायती के एक मुरीद थे जिनक नाम अब्दुल्लाह ख़ाँ था और कौम के राजपूत थे और यह हजरत के खास मुरीदों में थे उनकी हालत यह थी कि अगर किसी के घर हमल होता और तावीज़ लेने आता तो आप फ़रमा दिया करते थे कि तेरे घर में लड़की होगी या लड़का और जो आप बतला देते थे वही होता था। (अरवाहे सलासा, सफ़ाः १६३)

यहाँ तो हुस्ने इत्तेफाक का भी मामला नहीं है और ऐसा भी

नहीं है कि ख़्वाब की बात हो बलिक पूरी सराहत है इस बात की उनके अन्दर माफ़िल अरहाम के इल्म व इन्केशाफ़ की एक ऐसी क़ुव्वत ही बेदार हो गई थी कि वह हर वक़्त एक शफ़्फ़ाफ़ आइने की तरह पेट के अन्दर की चीज़ देख लिया करते थे। बिल्कुल इसी तरह की क़ुव्वत जैसे हमारी आँखों में देखने और कानों में सुन्ने की है न जिबरईल का इन्तिजार और न इल्हाम की एहतियाज।

लेकिन वाए रे देवबन्दी ज़ेहन की बुलअजबी। इल्म व इन्केशाफ़ की जो मानवी कुव्वत अदना उम्मती के लिए वह बेतकल्लुफ़ तसलीम कर लेते हैं वही पैगम्बर के हक़ में तसलीम करते हुए खुदा के साथ शिर्क की क़बाहत(बुराइ) नजर आने लगती है।

इन "मुवहहेदीन" के तिलिस्म फ़रेब का मज़ीद तमाशा देखना चाहते हों तो एक तरफ़ अब्दुल्लाह खाँ राजपूत के मुतअल्लिक़ नानौतवी साहेब की ब्यान करदा रिवायत पढ़िए और दूसरी तरफ़ देवबन्दी मजहब की बुनियाद तक़वियतुल ईमान का यह फ़रमान मुलाहेज़ा फ़रमाईऐ कि:—

"इसी तरह जो कुछ मादा के पेट में है उसको भी (खुदा के सिवा) कोई नहीं जान सकता कि एक है या दो नर है या मादा कामिल है या नाक़िस खूबसूरत है या बद सूरत (तक़वियतुल ईमान,सफ़ाः २२)

यह है अक़ीदा वह है वाक़िआ और दोनों एक दूसरे को झुठला रहे हैं अगर दोनों सही है तो मान्ना पडेगा कि अब्दुल्लाह खाँ राजपूत ख़ुदाई मंसब पर है अगर उन्हें खुदा नहीं फर्ज कर सकते तो कहिए कि वाक़िआ ग़लत है और अगर वाक़िआ सही है तो तस्लीम कीजिए कि तक़वियतुल ईमान का फ़रमान ग़लत है। तावील व जवाब का जो रुख़ भी इख़्तियार कीजिए मजहबी

दयानत (इन्साफ़) का एक ख़ून जरूरी है।

अब आप ही इन्साफ़ कीजिए कि यह सूरते हाल क्या इस यकीन को तक़वियत नहीं पहुँचाती कि इन हज़रात के यहाँ कुफ़्र व शिर्क की बहसें सिर्फ़ इसलिए हैं कि अम्बिया व औलिया की हुर्मतों को घायल करने के लिए उन्हें हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया जाए। वर्ना खालिस अकीदए तौहीद का जजबा इसके पसे मंजर में कार फरमा होता तो शिर्क के सवाल पर अपने और बेगाने की तफ़रीक रवा न रखी जाती।

गैब का एक अजीब मुशाहिदा:-

अर्वाहे सलासा में लिखा है कि यहाँ मौलवी क़ासिम साहेब नानौतवी जब हज के लिए जाने लगे तो इन्हीं अब्दुल्लाह खाँ राजपूत की खिदमत मे हाज़िर हुए और दमे रुख़सत उनसे दुआ की दर्खास्त की इसके जवाब मे खाँ साहब ने फ़रमाया:-

> "भाई मैं तुम्हारे लिए क्या दुआ करूँ मैंने तो अपनी आँखो से तुम्हें दो जहाँ के बादशाह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के सामने बुखारी शरीफ़ पढ़ते हुए देखा है। (अरवाहे सलासा: २५४)

देवबन्दी जमाअ़त के एक नौ मुस्लिम खाँ की आँखों की ज़रा कुव्वते बीनाई (देखने की ताक़त) मुलाहेजा फ़रमाइये कि आलमे ग़ैब तक पहुँचने के लिए उस पर दरमियान का कोई हेजाब (पर्दा) हाएल नहीं हुआ लेकिन रसूले अनवर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हक़ में देवबन्दी हजरात का यह अकीदा अब निशाने मज़हब क़रार पा चुका है कि मआ़जल्लाह वह पसेदीवार भी नहीं देख सकते (हवाला के लिए देखिये बराहीने क़ातिआ, सफ़ा: ५१,मोअल्लिफ़ मौलवी खलील अहमद अमैठवी)

नानौतवी साहेब के एक खादिम की कुव्वते इनकेशाफ़:-

बात आ गई है तो इसी पसे दीवार (दीवार के पीछे) के इल्म व इन्केशाफ़ से मुतअल्लिक एक दिलचस्प ख़बर और सुनिये।

दीवान जी नामी एक साहेब के मुतअल्लिक़ मौलवी मुनाज़िर अहसन गीलानी ने अपनी किताब सवानेह क़ासिमी में एक निहायत हैरत अंगेज़ वाक़िआ नक़ल किया है मौसूफ़ लिखते हैं।

> "मौलाना मुहम्मद तय्यब साहेब ने यह इत्तेला दी है कि यासीन नाम के दो साहिबों का खुसूसी तअल्लुक़ सय्यदना अलइमामुल कबीर (मौलवी क़ासिम साहेब नानौतवी) से था जिन में से एक तो यही दीवान जी देवबन्द के रहने वाले थे और बकौल मौलाना तय्यब साहब देवबन्द में हज़रत वाला की ख़ानगी और ज़ाती उमूर का तअल्लुक़ उन्हीं से था।
>
> लिखा है कि साहेबे निसबते बुज़ुर्ग थे अपने जनाना मकान के हुजरे में ज़िक्र करते मौलाना हबीबुर्रहमान साहेब. साबिक़ मोहतमिम दारूल उलूम देवबन्द फ़रमाया करते थे कि इस ज़माने में कश्फ़ी हालात दिवान जी की इतनी बढ़ी हुई थी कि बाहर सडक पर आने जाने वाले नज़र आते रहते थे। दर व दीवार का हिजाब उनके दरमियान ज़िक्र के वक़्त बाक़ी नहीं रहता था। (हाशिया सवानेह क़ासिमी, जिल्द: २ सफ़ा ७३)

लाइलाहा इल्लल्लाह देख रहे हैं आप! मौलवी क़ासिम साहेब नानौतवी के एक ख़ानगी खादिम (घर के नौकर) की यह कश्फ़ी हालत कि मिट्टी की दीवारें शफ़्फ़ाफ़ आइना की तरह उन पर रौशन रहा करती थीं लेकिन फ़हम व एतक़ाद की इस

गुमराही पर सर पीट लेने को जी चाहता है कि इन हज़रात के यहाँ मिट्टी की यही दीवारें सरकारे रिसालत मआब सल्लल्लाहु तअला अलैहि वसल्लम की निगाह पर हिजाब (पर्दा) बनकर हाएल रहती थी।

जैसा कि देवबन्दी जमाअत के मोतमद वकील मौलवी मंज र साहब नोमानी तहरीर फरमाते हैं

> अगर हुजुर को दीवार के पीछे की सब बाते मालूम हो जाया करतीं तो हजरत बिलाल से (दरवाजे पर खड़ी होने वाली औरतो का) नाम लेकर दरयाफ़त करने की क्या जरूरत होती (फ़ैसला कुन मुनाज़ेरा, सफ़ाः १३६)

आप ही इन्साफ कीजिए कि अपने रसूल के हक में क्या इससे ज्यादा भी जज़्बाए दिल की बेगांगी का कोई तसव्वुर किया जा सकता है।

दारूलउलूम देवबन्द में इल्हाद व नसरानियत का एक मुकाशेफ़ा

लगे हाथों उन्हीं दीवान जी का एक कश्फ़ और मुलाहेजा फ़रमाईये मौलवी मुनाजिर अहसन गीलानी अपने इसी हाशिया में यह रिवायत नक़्ल करते हुए लिखते हैं

> इन्ही दीवान जी के मुकाशिफा का तअल्लुक दारूल उलूम देवबन्द से भी नक्ल किया जाता है लिखते है कि मिसाली आलम में उन पर मुंकशिफ हुआ कि दारूल उलूम के चारो तरफ एक सुर्ख डोरा तना हुआ है।
>
> अपने इस कश्फी मुशाहेदा क़ी ताबीर खुद यह किया करते थे कि नसरानियत और तजद्दुद व आजादी के आसार ऐसा मालूम होता है कि दारूल उलूम में नुमायां होंगे।
>
> (जिल्दः २, सफ़ा ७३)

मुझे इस मुक़ाम पर इस के सिवा और कुछ नहीं कहना है कि जो लोग अपना ऐब छुपाने के लिए दूसरों पर अंग्रेजों की कासा लेसी और साज़बाज का इल्जाम आएद करते हैं कि वह गरेबान में मुँह डालकर ज़रा अपने घर का यह कश्फ़ नामा मुलाहेज़ा फ़रमा लें! किताब के मुसननेफीन को इस कश्फ़ पर अगर ऐतमाद न होता तो वह हरगिज इसे शाऐ नहीं करते।

और बात कश्फ़ ही तक नहीं है तारीखी दस्तावेजात भी इस अम्रे वाक़िआ (वास्तविक) की ताईद में है कि अंग्रेजों के साथ नियाज़ मंदाना तअ़ल्लुकात और राजदाराना साज बाज दारूल उलूम देवबन्द और मुंतज़ेमीन अमाएदीन का ऐसा नुमायां कारनामा है जिसे उनहोंने फ़ख्र के साथ ब्यान किया है।

और यह बात भी अज़राहे इल्जाम नहीं कह रहा हूँ बलिक देवबन्दी लिटरेचर से जो तारीखी शहादतें मुझे मौसूल हुई हैं उनकी रौशनी में इसके सिवा और कुछ कहा ही नही जा सकता। नमूने के तौर पर चन्द तारीखी हवाले जेल में मुलाहेजा फ़रमाएँ।

अंग्रेजों के खिलाफ अफसानए जेहाद की हकीकत

एक देवबन्दी फाज़िल ने मौलाना मुहम्मद अहसन नानौतवी के नाम से मौसूफ़ की सवानेह हयात लिखी है जिसे मकतबए उस्मानिया कराची पाकिस्तान ने शाए किया है अपनी किताब में मुसन्निफ़ ने अख़बार अन्जुमन पंजाब लाहौर मजरिया १६ फ़रवरी १८७५ इ० के हवाले से लिखा है कि ३१ जनवरी १८७५ ई० दिन यक शम्बा (एतवार) लेफ्टेन्ट गवर्नर के एक ख़ुफ़िया मोतमिदे अंग्रेज़ मुसम्मा पामर ने मदरसा देवबन्द का मुआइना किया। मुआइना की जो इबारत मौसूफ़ ने अपनी किताब में नक़ल की है उसकी यह चन्द सतरें ख़ास तौर से पढ़ने के काबिल हैं।

जो काम यहाँ बड़े कालेजो में हजारो रुपये के सर्फ़ में होता है वह यहाँ कौड़ियों में हो रहा है जो काम प्रिन्सिपल हजारो रुपये माहाना तख्वाह लेकर करता है वह यहाँ एक मौलवी चालिस रुपये माहाना पर कर रहा है यह मदरसा खिलाफे सरकार नही बल्कि मुवाफिके सरकार मोमिद व मुआविने सरकार है।

(मौलाना मुहम्मद अहसन नानौतवी, सफा २१७)

मुद्दई लाख पे भारी है गवाही तेरी

[illegible] की यह शहादत है कि यह मदरसा खिलाफे सरकार नही बल्कि मुवाफिके सरकार मुमिद्द व मुआविने सरकार है।

अब आप ही इन्साफ कीजिए कि इस ब्यान के सामने अब उस अफसाने की क्या हक़ीकत है जिसका ढिंढोरा पीटा जाता है कि मदरसा देवबन्द अंग्रेजी सामराज के ख़िलाफ सियासी सरगर्मियो का बहुत बड़ा अड्डा था

मदरसए देवबन्द के क़दीम कारकुनों का अंग्रेजों के साथ किस दर्जा खैर ख्वाहाना और नियाज मन्दाना तअल्लुक था उसका अन्दाजा लगाने के लिए खुद कारी तय्यब साहेब मोहतमिम दारूल उलूम देवबन्द का यह तहलका खेज ब्यान पढिये फ़रमाते हैं।

मदरसा देवबन्द के कारकुनों में (अकसरियत) ऐसे बुजुर्गों की थी जो गवर्नमेन्ट के क़दीम मुलाज़िम और हाल पेशेनज़र थे जिन के बारे मे गवर्नमेन्ट को शक व शुब्हा करने की कोई गुंजाइश ही न थी। (हाशिया सवानेह क़ासिमी, सफ़ा: २४७, जिल्द: २).

आगे चलकर उन्ही बुजुर्गों के मुतअ़ल्लिक़ लिखा है कि मदरसए देवबन्द में एक मौक़ा पर गर्वनमेन्ट की जब इन्कवायरी आई तो

उस वक़्त यही हज़रात आगे बढ़े और अपने सरकारी एतमाद को सामने रख कर मदरसा की तरफ़ से सफ़ाई पेश की जो कारगर हुई। (हाशिया सवानेह क़ासिमी)

घर का राज़दार होने की हैसियत से क़ारी तय्यब साहब का बयान जितना बा वज़न हो सकता है वह मोहताज बयान नहीं है।

अब आप ही फ़ैसला कीजिए कि जिस मदरसा के चलाने वाले अंग्रेजों के वफ़ा पेशा नमकख़्वार हों उसे बाग़ियाना सरगर्मियों का अड्डा कहना आँखों में धूल झोंकने के मुतरादिफ है या नही?

अब अंग्रेज़ों के खिलाफ देवबन्दी अकाबिर के अफ़सानए जिहाद व बग़ावत की पूरी तारीख उलट देने वाली एक ससनी खेज़ कहानी और सुनिए।

स्वानेह कासिमी मे मौलवी कासिम साहब नानौतवी के एक हाज़िर बाश मौलवी मंसूर अली खाँ की जबानी यह किस्सा ब्यान किया गया है। वह कहते हैं कि एक दिन मौलाना नानौतवी के हमराह मैं नानौत जा रहा था कि अस्नाए राह मे मौलाना का हज्जाम उफ्तां व ख़ेजां आता हुआ मिला और उस ने खबर दी कि नानौत के थानेदार ने औरत के भगाने के इल्ज़ाम मे मेरा चालान कर दिया है ख़ुदारा मुझे बचाईये।

मौलवी मंसूर अली खाँ का बयान है कि नानौता पहुँचते ही मौलाना ने अपने मख़सूस कारिंदा मुंशी मुहम्मद सुलैमान को तलब किया और पुरजलाल आवाज़ में फ़रमाया।

उस ग़रीब को थानेदार ने बेकसूर पकड़ा है। तुम उस से कह दो कि यह (हज्जाम) हमारा आदमी है उस को छोड़ दो वर्ना तुम भी न बचोगे। उसके हाथ में हथकड़ी डालोगे तो तुम्हारे हाथ में भी हथकड़ी पड़ेगी। (सवानेह क़ासिमी,जिल्द: १, सफ़ा: ३२१, ३२२)

लिखा है कि मुंशी मुहम्मद सुलैमान ने मौलाना नानौतवी का हुक्म हूबहू थानेदार तक पहुँचा दिया, थानेदार ने जवाब दिया कि अब क्या हो सकता है रोज़ नामचा में उसका नाम लिख दिया गया है।

मौलाना नानौतवी ने इस जवाब पर हुक्म दिया कि थानेदार से जाकर कह दो कि उसका नाम रोज़ नामचा से काट दो। मंसूर अली खाँ का बयान है कि मौलाना का यह हुक्म पाकर सरा सीमगी की हालत में थानेदार खुद उनकी ख़िदमत में हाज़िर हुआ और अर्ज किया।

> हज़रत नाम निकालना बड़ा जुर्म है। अगर नाम उसका निकाला तो मेरी नौकरी जाती रहेगी। फ़रमाया उसका नाम (रोज़नामचा से) काट दो। तुम्हारी नौकरी नही जाएगी।(स्वानेह क़ासिमी, जिल्दः १, सफ़ाः ३२३)

वाक़ेआ का रावी कहता है कि "मौलाना के हुक्म के मुताबिक़ थानेदार ने हज्जाम को छोड़ दिया और थानेदार ही रहा।

मुझे इस वाक़िआ पर बजुज़ इसके और कोई तबसिरा नहीं करना है कि मौलवी क़ासिम साहेब नानौतवी अगर अंग्रेज़ी हुकूमत के बाग़ियों में थे तो पुलिस का मोहक्मा इस कदर उनके ताबे फ़रमान क्यों था? और थानेदार को यह धमकी कि उसे छोड़ दो वर्ना तुम भी न बचोगे वही दे सकता है जिसका साज़ बाज़ ऊपर के मर्कज़ी हुक्काम से हो। अंग्रेज़ी क़ौम की बारगाह में नियाज़ मंदाना ज़हन का एक रुख़ और मुलाहिज़ा फ़रमाइए इस सिलसिले में सवानेह क़ासिमी के मुसन्निफ़ की एक अजीब व ग़रीब रिवायत सुनिए फ़रमाते हैं कि:

अंग्रेजों के मुक़ाबले में जो लोग लड़ रहे थे उनमें हज़रत मौलाना शाह फ़ज़लुर्रहमान गंज मुरादाबादी रहमतुल्लाहि अलैहि भी थे अचानक एक दिन मौलाना को देखा गया कि ख़ुद भागे जा रहे हैं और किसी चौधरी का नाम लेकर जो बाग़ियों की फ़ौज की अफ़सरी कर रहे थे कहते जाते थे कि लड़ने का क्या फ़ाएदा? ख़िज़र को तो मैं अंग्रेज़ों की सफ़ में पा रहा हूँ। (हाशिया स्वानेह क़ासिमी जिल्द:२, सफ़ा: १०३)

अंग्रेजों की सफ़ों में हज़रते ख़िज़र की मौजूदगी अचानक नहीं पेश आ गई थी बल्कि वह "नुस्रते हक़" (ख़ुदाई मदद) की अलामत बनकर अंग्रेज़ी फ़ौज के साथ एक बार और देखे गए थे जैसा कि फ़रमाते हैं।

ग़दर के बाद जब गंज मुरादाबाद की वीरानी मस्जिद में हज़रत मौलाना (शाह फ़ज़लुर्रहमान साहेब) जाकर मुक़ीम हुए तो इत्तिफ़ाक़न उसी रास्ते से जिस के किनारे मस्जिद है किसी वजह से अंग्रेज़ी फ़ौज गुज़र रही थी। मौलाना मस्जिद से देख रहे थे अचानक मस्जिद की सीढ़ियों से उतर कर देखा गया कि अंग्रेज़ी फ़ौज के एक साइस से बाग डोर खूँटे बग़ैर घोड़े का लिए हुए था उस से बातें कर के फिर मस्जिद वापस आ गए अब याद नहीं रहा कि पूछने पर या ख़ुद बख़ुद फ़रमाने लगे कि साइस जिस से मैंने गुफ़्तगू की यह ख़िज़र थे मैं ने पूछा यह क्या हाल है तो जवाब में कहा कि हुक्म यही हुआ है। (हाशिया स्वानेह क़ासिमी,जिल्द: २. सफ़ा: १०३)

यहाँ तक तो रिवायत थी अब इस रिवायत कि तौसीक़ व

तशरीह मुलाहेजा फरमाईये लिखते हैं:

> बाकी खुद खिज़र का मतलब क्या है? नुसरते हक की मिसाली शकल थी जो इस नाम से जाहिर हुई। तफसील के लिए शाह वलीउल्लाह वगैरा कि किताब पढिये। गोया जो कुछ देखा जा रहा था उसी के बातनी पहलू का यह मुकाशिफा था। (हाशिया सवानेह कासमी)

बात खत्म हो गई लेकिन यह सवाल सिर पर चढ़ कर आवाज दे रहा है कि जब हजरते खिज़र की सूरत में नुसरते हक अंग्रेजी फौज के साथ थी तो उन बागियों के लिए क्या हुक्म है जो हजरते खिजर के मुकाबले में लड़ने आए थे? क्या अब भी उन्हे गाजी और मुजाहिद कहा जा सकता है? .

अपने मौज़ू से हट कर हम बहुत दूर निकल आए लेकिन आप की निगाह पर बार न हो तो इस बहस के ख़ातमें पर अकाबिरे देवबन्द की एक दिलचस्प दस्तावेज़ और मुलाहेज़ा फ़रमाइए।

देवबन्दी हल्के के मुमताज मुसन्निफ मौलवी आशिक इलाही मेरठी अपनी किताब तजकिरतुर्रशीद में अंग्रेज़ी हुकूमत के साथ मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही के नियाज मंदाना जज़बात की तस्वीर खीचते हुए एक जगह लिखते हैं।

> "(आप) समझे हुए थे कि मैं जब हकीक़त में सरकार का फरमाँ बरदार हूँ तो झूठे इल्जाम से मेरा बाल बेका न होगा और अगर मारा भी गया तो सरकार मालिक है उसे इख्तियार है जो करे"। (तज़किरतुर्रशीद, जिल्द:१ सफा:८०)

कुछ समझा आपने? किस इलज़ाम को यह झूठा कह रहे हैं। यही कि अंग्रेज़ों के ख़िलाफ उन्होंने अ़लम जिहाद (झंडा) बुलन्द किया था। मैं कहता हूँ कि गंगोही साहेब की यह पुर

खुलूस सफ़ाई कोई माने या न माने लेकिन कम अजकम उनके मोतक़ेदीन को तो ज़रूर मानना चाहिये लेकिन गजब खुदा का इतनी शद्दोमद के साथ सफ़ाई के बावजूद भी उनके मानने वाले यह इलजाम उन पर आज तक दोहरा रहे हैं कि उन्होने अंग्रेज़ो के ख़िलाफ़ अलमे जिहाद बुलन्द किया था। दुनिया की तारीख में इसकी मिसाल मुश्किल ही से मिलेगी कि किसी फ़िर्के के अफराद ने अपने पेशवा की इस तरह तकजीब की हो।

और सरकार मालिक है सरकार को इख्तियार है यह जुम्ला उसी की ज़बान से निकल सकता है कि जो तन से लेकर मन तक पूरी तरह किसी के जजबए गुलामी में भीग चुका हो।

आह! दिलों की बदबख्ती और रूहो की शकावत का हाल भी कितना इबरत अंगेज होता है सोचता हूँ तो दिमाग फटने लगता है कि खुदा के बागियों के लिए तो जज़बए अकीदत का यह एतराफ है कि वह मालिक भी है और मुख्तार भी। लेकिन अहमदे मुजतबा और महबूबे किब्रिया सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की जनाब में उन हज़रात के अक़ीदे की ज़बान यह है।

> जिसका नाम मुहम्मद या अली है वह किसी चीज का मुख्तार (मालिक) नहीं। (तक्वियतुल ईमान)

बेशक यह बताने का हक़ मख़लूक को है कि उसका मालिक कौन है कौन नहीं है। जो मालिक था उसके लिए एतिराफ़ की ज़बान खुलनी थी खुल गई और जो मालिक नहीं था उसका इन्कार ज़रूरी था हो गया अब यह बहस बिल्कुल अबस (बेकार) है कि किसका मुक़द्दर किस मालिक के साथ वाबस्ता हुआ।

यहाँ पहुँच कर हमें कुछ नहीं कहना है तस्वीर के दोनों रुख आपके सामने हैं माद्दी मनफअ़त की कोई मस्लेहत माने न हो तो अब आप ही फ़ैसला कीजिए कि दिलों की अकलीम पर किसकी बादशाहत का झंडा गड़ा हुआ है। सुलतानुल अम्बिया का या

ताजे बर्तानिया का।

बात चली थी घर के मुकाश्फ़ा की और घर ही के दस्तावेज़ पर ख़त्म हो गइ। अब फिर किताब के अस्ले मौज़ की तरफ़ पलटता हूँ। आप भी अपने ज़ेहन का रिश्ता वाक़िआत के सिलसिले से मुंसलिक कर लीजिए।

ग़ैबी इदराक के समुन्दर म तलातुम

मौलवी भुनाजिर अहसन साहेब गीलानी ने अपनी किताब सवानेह कासिमी में अरवाहे सलासा के हवाले से एक निहायत हैरत अंगेज़ वाकिआ नकल किया है लिखते हैं कि छत्ता की मस्जिद वाकेए देवबन्द में कुछ लोग जमा थे उस मजमा में एक दिन मौलवी याक ब साहेब नानौतवी मोहतमिम मदरसा देवबन्द फरमाने लगे।

> भाई आज सुबह की नमाज़ में हम मरजाते बस कुछ ही कसर रह गई। लोग हैरत से पुछने लगे आख़िर क्या हादिसा पेश आया। सुनने की बात यही है जवाब में फरमा रहे थे कि आज सुबह मैं सूरए मुज्ज़म्मिल पढ़ रहा था कि आचानक उलूम का इतना अज़ीमुश्शान दरिया मेरे दिल के ऊपर गुज़रा कि मैं तहम्मुल न कर सका और क़रीब था कि मेरी रूह परवाज कर जाए। कहते थे कि वह तो ख़ैर गुजरी कि वह दरिया जैसा कि एक दम आया था वैसा ही निकला चला गया। इसलिए मैं बच गया। कहते थे कि उलूम का यह दरिया जो अचानक चढ़ता हुआ उनके दिल पर से गुज़र गया यह क्या था? खुद ही उसकी तशरीह भी उन्हीं से बई अल्फ़ाज़ इसी किताब में पाई जाती है कि नमाज़ के बाद मैंने ग़ौर किया कि यह क्या मामला था तो ज़ाहिर हुआ कि हज़रत मौलाना

नानौतवी इन साअतों में मेरी तरफ मेरठ में मुतवज्जह हुए थे। यह उनकी तवज्जह का असर है कि उलूम के दरिया दूसरों के कुलूब पर मौज मारने लगे और तहम्मुल दुश्वार हो जाए। (सवानेह कासिमी, जिल्द: १, सफा ३४५)

अस्ले वाकिआ नकल करने के बाद लिखते है।

खुद ही बताइए कि फिकरी व दिमागी उलूम वाले भला इसका क्या मतलब समझ सकते है? कहाँ मेरठ और कहाँ छत्ता की मस्जिद। मेरठ से देवबन्द तक का मकानी फासला दर्मियान में हाएल नही हुआ। (सवानेह कासिमी, जिल्द: १, सफा: ३४५)

बताइये! अब इस अनकही को क्या कहा जाए यह मोअम्मा तो गीलानी साहेब और उनकी जमाअत के उल्मा ही हल कर सकते हैं कि जो फासलाए मकानी इन हजरात के नजदीक अम्बिया और सय्यदुल अम्बिया तक पर हाएल रहता है वह नानौतवी साहेब पर क्यों नहीं हाएल हुआ।

और मौलवी याकूब साहेब की गैबी कुव्वते इदराक का क्या कहना कि उन्होंने तो देवबन्द में बैठे बैठे मौलवी कासिम साहेब नानौतवी की वह गैबी तवज्जह तक मालूम कर ली जो उनहोंने मेरठ से उनकी तरफ मबजूल की थी और वह भी इतना झट पट कि नमाज़ के बाद ग़ौर किया और सारा मामला उसी लम्हे मुंकशिफ़ हो गया। दिनों, हफ़्तों और महीनों की बात तो अलग रही। घंटे आधे घंटे का भी वक़्फ़ा न गुजरा। लेकिन शर्म से सिर झुका लीजिये कि घर के बुजुर्गों का तो यह हाल बयान किया जाता है और रसूले मुजतबा सल्लल्लाहु तआ़ला अलैहि वसल्लम के हक मे पूरी जमाअ़त का अक़ीदा यह है।

"बहुत से उमूर में आप का खास एहतमाम से तवज्जह फरमाना बल्कि फ़िकर व परेशानी में वाके होना और बावजूद इस के फिर मखफ़ी रहना साबित है। किस्सए इफ्क मे आपकी तफ़तीश व इनकेशाफ़ बा बलग वजह सहा मे मजकूर है मगर सिर्फ तवज्जह से इनकेशाफ नहीं हुआ। बाद एक माह के वही के जरिये इतमीनान हुआ। (हिफजुल इमान, सफ़ा ७, मुअल्लिफ मौलवी अशरफ अली साहेब थानवी)

अब इस बेवफा का इन्साफ तो रसूले अ़र्बी की वफादार उम्मत ही करेगी कि खुद तो यह हजरात आने वाहिद में सैकड़ों मील की मुसाफत (दूरी) से दिलों की मखफियात पर मुत्तला हो जाते हैं लेकिन रसूले अनवर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के लिए एक माह की तवील मुद्दत में भी किसी मखफी अम्र के इन्किशाफ की कुव्वत (छुपी बातों के मालूम करने की ताकत) तस्लीम नहीं करते।

क्या इतनी खुली हुई शहादतों के बाद भी हक़ व बातिल की राहो का इम्तियाज महसूस करने के लिए मजीद किसी निशानी की जरुरत बाकी रह गई है।

महशर की तपती हुई सरजमीन पर रसूले अर्बी की शफाअत के उम्मीद वारो। जवाब दो?

किसी भी किताब के कारेईन के लिए वह मरहला सख़्त अजमाइश का होता है जब दयानत और इंसाफ का तकाजा पूरा करने के लिए अपने मम्दूह कि ख़िलाफ़ फैसला करना होता है।

गैबी कुव्वते इदराक के तसर्रुफ़ का एक अ़जीब व गरीब वाकिआः -

अरवाहे सलासा में मौलवी क़ासिम साहेब नानौतवी के एक शागिर्द मौलवी मंसूर अली खाँ मुरादाबादी की एक जुनून अंगेज़

आपबीती "नक़ल की गई है। खुद मौलवी मसूर अली खा की ज़बानी यह दिल चस्प और पुरअसर किस्सा सुनिये। बयान करते हैं कि:

"मुझे एक लड़के से इश्क़ हो गया और इस कद्र उसकी मुहब्बत ने तबइय्यत पर गलबा पाया कि रात दिन उसी के तसव्वुर मई गुज़रने लगे। मेरी अजीब हालत हो गई। तमाम कामों में इख़्तिलाल होने लगा। हजरत (मौलाना नानौतवी) की फ़रासत ने भाप लिया। लेकिन सुबहान अल्लाह तर्बिय्यत व निगरानी इसे कहते है कि निहायत बेतकल्लुफ़ी के साथ हजरत ने मेरे साथ दोस्ताना बरताव शुरू किया और उसे इस कद्र बढ़ाया कि जैसे दो दोस्त आपस में यहाँ तक कि खुद ही इस मुहब्बत का ज़िक्र छेड़ा फरमाया हाँ भाई वह तुम्हारे पास आते भी है या नहीं? मैं शर्म व हिजाब से चुप रह गया तो फरमाया नहीं भाई यह हालात तो इन्सान ही पर आते है इसमे छुपाने की क्या बात है। गर्ज़ इस तरीक से मुझ से गुफ़तगू की कि मेरी ही जबान से उसकी मुहब्बत का इकरार करा लिया और कोई ख़फगी और नाराजगी नही ज़ाहिर की बल्कि दिल जो फरमा । (अरवाहे सलासा, सफ़ाः २४६)

इस के बाद लिखा है कि जब मेरी बेचैनी बहुत ज्यादा बढ गई और इश्क़ के हाथों में बिल्कुल तग आ गया तो नाचार एक दिन मौलाना नानौतवी की ख़िदमत में हाजिर हुआ और अर्ज किया:

"हज़रत। लिल्लाह मेरी एआनत फरमाइये मै तग आग या हूँ और आजिज़ हो चुका हूँ ऐसी दुआ फरमा दीजिए कि इस लड़के का ख्याल तक मेरे क़ल्ब से महव हो जाए. तो हंस कर फ़रमाया कि बस मौलवी साहेब क्या थक गए। बस जोश ख़त्म होगया? मैंने अ़र्ज किया:

कि हजरत। मैं सारे कामों से बेकार हो गया। निकम्मा हो गया, अब मुझ से यह बर्दाश्त नहीं हो सकता खुदा के लिए मेरी इमदाद फरमाइए। फ़रमाया बहुत अच्छा, बाद मगरिब जब मैं नमाज़ से फ़ारिग़ हूँ तो आप मौजूद रह (अरवाहे सलासा, सफ़ा: २४७)

अब नमाज के बाद का वकिआ सुनिये मुब्तिलाए ग़मे जानां ब्यान करता है कि

"मैं मगरिब की नमाज पढ़ कर छत्ता की मस्जिद में बैठा रहा जब हजरत सलातुल अव्वाबीन से फ़ारिग हुए तो आवाज दी मौलवी साहेब? मैं ने अर्ज़ किया हज़रत हाजिर हूँ। मैं सामने हाजिर हुआ और बैठ गया फ़रमाया कि हाथ लाओ मैने हाथ बढाया मेरा हाथ अपने बाएँ हाथ की हथेली पर रखकर मेरी हथेली को अपनी हथेली से इस तरह रगडा जैसे बान बटे जाते हैं खुदा की क़सम मैंने बिल्कुल अयानन (खुली आँखों से) देखा कि मैं अर्श के नीचे हूँ और हर चहार तरफ़ नूर और रौशनी ने मेरा एहाता कर लिया है गोया मैं दरबारे इलाही में हाज़िर हूँ। (अरवाहे सलासा, सफ़ा: २४७)

आलमे गैब की नक़ाब कुशा की जरा यह शान मुलाहिजा फरमाइए कि पारस पत्थर की तरह हथेली पर हथेली रगड़ते ही आँख रौशन हो गई और अर्श तक के सारे हिजाबात आने वाहिद मे उठ गए और सिर्फ़ उठ ही नहीं गए बल्कि अपने रंगीन मिज़ाज शार्गिद को पलक झपकते वहाँ पहुँचा दिया जहाँ बजुज़ सय्यदुल अम्बिया सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के आलमे गीती का को इन्सान अब तक नहीं पहुँच सका।

आलमे गैब पर अपने इक़तिदार के तसल्लुत का तो यह

हाल ब्यान किया जाता है कि जिसे चाहा गैब दान बना दिया लेकिन महबूबे किबरिया सल्लल्लाहु तअला अलैहि वसल्लम के हक़ में बयक ज़बान सब मुत्तफ़िक हैं कि किसी और को हरम सराए ग़ैब का महरम बनाना तो बड़ी बात है कि वह खुद गैब की बात नहीं जानते और अर्श का तो पूछना ही क्या है कि फर्श भी उनकी निगाह से ओझल है।

आप ही इन्साफ़ से कहिए कि क्या यही शेवए इस्लाम और तक़ाज़ए कल्मागोई है?

(७)

देवबन्दी मकतबे फिक्र की बुनियाद हिला देने वाली एक कहानी:

मौलवी मनाज़िर अहसन साहब गीलानी ने उनही मौलवी क़ासिम साहब नानौतवी के मुतअल्लिक अपनी किताब स्वानेह क़ासिमी में अचम्भे में डाल देने वाली एक हिकायत ब्यान की है। लिखते हैं कि एक बार मौलाना मौसूफ का किसी ऐसे गाँव मे गुज़र हुआ जहाँ शीओं की कसीर आबादी थी। सुन्नियों को जब उनकी आमद की ख़बर हुई तो मौका गनीमत जाना और उनके वाअज़ का एलान कर दिया। एलान सुनते ही शीओ मे खलबली मच गई। उन्होंने जलसए वाज को नाकाम बनाने के लिए लखनऊ से चार मुजतहिद बुलवाए और प्रोग्राम यह तय पाया कि मजलिसे वाज़ में चारों कोनों पर यह चार मुजतहिद बैठ जाएँ और चालिस ऐतराजात मुंतखब करके दस-दस ऐतराज़ चारों पर बाँट दिए गये कि असनाए वाज में हर एक मुजतहिद अलग अलग एतराज़ करे और इस तरह जलसएवाज को दर्हम बर्हम कर दिया जाए। अब इसके बाद का वाकिआ खुद स्वानेह निगार के अलफ़ाज़ में सुननिये. लिखते हैं कि:

हजरत वाला की करामत का हाल सुनिये कि हज़रत ने वाज शुरू फ़रमाया जिस में गाँव की तमाम शिआ़ बेरादरी भी जमा थी और वह वाज उसी तरतीब से ऐतराजो के जवाब पर मुश्तमिल शुरू हुआ जिस तरतीब से ऐतराजात लेकर मुजतहेदीन बैठे थे गोया तरतीब के मुताबिक जब कोई मुजतहिद ऐतराज करने के लिए गर्दन उठाता तो हजरत उसी एतराज़ को खुद नक़ल कर के जवाब देना शुरू फरमाते यहाँ तक कि वाज पूरे सुकून के साथ पूरा हुआ। (हाशिया स्वानेह कासिमी जिल्द.२, सफ़ा: ७१)

इस वाकिआ के बाद जो वाकिआ़ पेश आया वह इस से भी ज्यादा इबरत नाक और दिलचस्प है लिखते हैं कि:

मुजतहेदीन और मुकामी शिया चौधरियों की इस में अपनी इन्तहाई सुबकी और खिपफत महसूस हुई तो उन्होंने हरकते मजबूही के तौर पर इस शर्मिनदगी को मिटाने और हजरते वाला के असरात का इज़ाला करने के लिए यह तदबीर की कि एक नौजवान का फ़र्ज़ी जनाजा बनाया और हजरत से आकर अर्ज़ किया कि हजरत नमाज़े जनाजा आप पढ़ा दें।

प्रोग्राम यह था कि जब हज़रत दो तकबीर कह लें तो साहेब जनाजा एक दम उठ खड़ा हो और इस पर हज़रत के साथ इस्तेहज़ा और तमस्खुर किया जाए। हज़रत वाला ने माज़ेरत फ़रमाई कि आप लोग शिआ हैं और मैं सुन्नी हूँ उसूले नमाज़ अलग–अलग है आपके जनाज़े की नमाज मुझसे पढ़वानी कब जाइज़ होगी शीओं ने अर्ज़ किया कि हज़रत बुजुर्ग हर कौम का बुजुर्ग ही होता है आप तो नमाज़ पढ़ा ही दें। हज़रत ने उनके इसरार पर

मंजूर फरमा लिया। और जनाज़े पर पहुँच गए। मजमा था हज़रत एक तरफ़ खड़े हुए थे कि चेहरे पर गुस्से के आसार देखे गए।। आँखें सुर्ख़ थीं और अलकबाज चेहरे से ज़ाहिर था। नमाज के लिए कहा गया तो आगे बढ़े और नमाज शुरू कर दी। दो तकबीर कहने पर जब तयशुदा प्रोग्राम के मुताबिक़ जनाज़े में हर्कत न हुई तो पीछे से किसी ने हूँ न हूँ" के साथ सिसकारी दी। मगर वह न उठा।

हजरत ने तकबीराते अरबा पूरी करके उसी ग स्से के लहजे में फरमाया कि अब यह क़यामत की सुबह से पहले नही उठ सकता देखा गया तो वह मुर्दा था। शीओं में रोना पीटना पड़ गया" (हाशिया सवानेह क़ासिमी,जिल्द २ सफा ६१)

क़सम है आप को जलालते खुदा वन्दी की जिसकी हैबत से मोमिन का कलेजा लरजता रहता है। हक के साथ इन्साफ़ करने में किसी की पासदारी न कीजिए गा।

यह दोनों वाक़िए आपके सामने है। पहले वाकिआ में नानौतवी साहेब के लिए गैबी इलम व इदराक की वह अजीम क.व्वत साबित की गई है जिसके जरिये उन्होंने अलग अलग मुजतहेदीन के दिल में छुपे ऐतराजात को उसी तर्तीब के साथ मालूम कर लिया जिस तर्तीब के साथ वह अपने दिलों मे छुपा कर लाए थे।

घर के बुजुर्गों के लिए तो जज़बए ऐतराफ़ की यह फरावानी है कि दिलों के छुपे हुए ख़तरात आईने की तरह उनके पेशे नज़र हैं अपने मौलाना के लिए इस ग़ैबी कुव्वते इदराक (गैब जानने की शक्ती) का ऐतेराफ़ करते हुए न शिर्क का कोई कानून दामनगीर हुआ और न मश्रबे तौहीद से कोई इन्हेराफ़ नज़र आया। लेकिन अम्बिया व औलिया के हक़ में इसी गैबी

क़ुव्वते इदराक के सवाल पर उन हज़रात के अक़ीदे की ज़बान यह है.

> "कुछ इस बात मे उनको बड़ाई नही है कि अल्लाह ने गैब दानी इख्तियार में दे दी हो कि जिसके दिल का अहवाल जब चाहें मालूम करलें या जिस गैब का अहवाल जब चाहे मालूम कर ले कि वह जीता है या मर गया या किस शहर में है। (तक़वियतुल ईमान, सफ़ा: २५)

इन्साफ व दियानत की रौशनी में चलने की तमन्ना करने वालो! हक़ व बातिल की राहों का इम्तियाज़ महसूस करने के लिये क्या अब भी किसी मजीद निशानी की ज़रूरत है?

एक वाक़िआ पर तबसिरा ख़त्म हुआ अब दूसरे वाक़िआ पर अपनी तवज्जह मबज़ूल फरमाईये। वाक़िआ की यह तफसील तो अपनी जगह पर है कि नमाज़े जनाज़ा के लिए खड़े हुए तो फ़र्ते गज़ब से आँखें सुर्ख थी। जिस का मतलब यह है कि मौसूफ़ को अपनी गैबी क़ुव्वते इदराक के ज़रिये पहले ही यह मालूम हो गया था कि ताबूत के अन्दर का जनाज़ा मुर्दा नहीं बल्कि ज़िन्दा है। और सिर्फ़ अज़राहे तमस्ख़ुर उन्हें नमाज़े जनाज़ा पढ़ाने के लिए कहा गया है। लेकिन कहानी का नुक़्तए ऊरूज (चर्म सीमा) यह है कि उन्होंने तकबीराते अर्बा पूरी करने के बाद उसी गुस्से के लहजे में फ़रमाया कि अब यह क़यामत की सुबह से पहले नहीं उठ सकता इस फ़िक़रे का मुद्दआ सिवा इसके और क्या हो सकता है कि मौसूफ़ की क़ुव्वत तसर्रुफ से अचानक उसकी मौत वाक़े हो गई और मअन उसका इल्म भी उन्हें हो गया।

अब ठीक इस रिवायत की दूसरी सम्त में देवबन्दी मज़हब की बुनियादी किताब तक़वियतुल ईमान की यह इबारत पढ़िये

और दरियाए हैरत में गोता लगाइए।

> आलम–में इरादा से तसर्रुफ करना और अपना हुक्म जारी करना और अपनी ख्वाहिश से मारना और जिलाना यह सब अल्लाह ही की शान है और किसी अम्बिया व औलिया की पीर व मुर्शिद की भूत व परी की यह शान नहीं। जो कोई किसी को ऐसा तसर्रुफ साबित करे सो वह शिर्क हो जाता है। (तकवियतुल ईमान, सफा १०)

एक तरफ़ देवबन्दी मजहब का यह अकीदा पढ़िये और दूसरी तरफ़ नानौतवी साहेब का वह वाकिआ पढ़िये साफ अयां हो जाएगा कि इन हज़रात के यहाँ शिर्क की सारी बहसे सिर्फ अम्बिया व औलिया की हुर्मतो से खेलने के लिए है वर्ना हर शिर्क अपने घर के बुजुर्गों के हक मे ऐने इस्लाम है।

अकीदए तौहीद के साथ तसादुम का एक और वाकिआ

बात चल पडी तो अकीदए तौहीद के साथ तसादुम का अब इससे भी ज्यादा खून रेज वाकिआ मुलाहिजा फ़रमाइए। मौलवी अशरफ अली साहब थानवी के स्वानेह निगार ख़्वाजा अजीजुल हसन ने अपनी किताब मे थानवी साहेब के अहबाब का तजकिरा करते हुए यह वाकिआ नक़ल किया है। मौसूफ लिखते है कि

> "हज़रत हाफिज़ अहमद हुसैन साहेब शाहजहाँ पूरी जो बावजूद शाहजहाँ पूर के बडे रईस होने के साथ साहिबे सिलसिला बुजुर्ग भी थे। एक बार किसी के लिये बददुआ की तो वह शख़्स दफ़अतन मर गया बजाए इसके कि अपनी इस करामत से खुश होते डरे और बजरियए तहरीर हज़रत वाला (थानवी साहेब) से मसला पूछा कि मुझे कतल का गुनाह तो नहीं हुआ? (अशरफुस्सवानेह जिल्द: १, सफा:१२५)

थानवी साहेब का यह ईमान शिकन जवाब दीदए हैरत से पढ़ने के क़ाबिल है। तहरीर फ़रमाया कि:

> "अगर आप में कुव्वते तसर्रुफ़ है और बद्दुआ करने के वक़्त आप ने कुव्वत से काम लिया था यानी यह ख़्याल क़स्द और क़ुव्वत के साथ किया था कि यह शख़्स मर जाए तब तो कतल का गुनाह हुआ। और चूँकि यह क़तल शियहे अमद है इसलिए दियत और कफ़्फ़ारा वाजिब होगा। (अशरफुस्सावानेह जिल्दः १, सफ़ाः१२५)

अब इसी के साथ देवबन्दी मजहब की बुनियादी किताब तक़वियतुल ईमान की यह इबारत पढ़िये। अम्बिया व औलिया की क़ुव्वते तसर्रुफ़ पर बहस करते हुए लिखते हैं:

> और इस बात की उनमें कोई बड़ाई नहीं कि अल्लाह ने उन को आलम में तसर्रुफ करने की कुछ कुदरत दी हो कि जिसको चाहे मार डाले। (तकवियतुल ईमान, सफ़ाः२५)

देख रहे हैं आप? तसर्रुफ की यही क़ुव्वत अम्बिया व औलिया के लिए तसलीम करना देवबन्दी मज़हब में शिर्क है। और उनके तईं यह शान सिर्फ़ अल्लाह की है जो कोई किसी को ऐसा तसर्रुफ साबित करे सो वह मुशरिक हो जाता है। लेकिन यह कैसी क़ियामत है कि इसी शिर्क को अपने गले का हार बना लेने के बावजूद थानवी साहेब और उनके मुत्तबेईन रूए ज़मीन के सब से बड़े तौहीद परस्त कहलाने के मुद्दई हैं।

(८)

अपने बुजुर्गों के लिए एक शर्म नाक दावाः-

मौलवी अनवारूल हसन हाशमी मुबल्लिग़ दारूल उलूम

देवबन्द ने मुबश्शेराते दारूल उलूम के नाम से एक किताब लिखी है जो दारूल उलूम के मोहकमए नश्र व इशाअत की तरफ़ से शाये की गई है। किताब के पेशे लफ्ज़ का यह हिस्सा ख़ास तौर पर पढ़ने के क़ाबिल है लिखते हैं कि।

"बाज़ कामेलुल ईमान बुजुर्गों को जिन की उमर का बेश्तर हिस्सा तज़कियए नफ़्स और रूहानी तर्बिय्यत मे गुज़रता है बातेनी और रूहानी हैसियत से उनको मिन जानिब अल्लाह ऐसा मल्कए रासिखा हासिल हो जाता है कि ख़्वाब या बेदारी में उन पर वह उमूर खुद–ब–खुद मुंकशिफ हो जाते हैं जो दूसरों की नज़रो से पोशीदा हैं। (मुबश्शिराते दारूल, सफ़ाः १२)

लेकिन गैरते इस्लामी को आवाज़ दीजिए कि कश्फ का यही मलकए रासिख़ा जो देवबन्द के कामेलुल ईमान बुर्जुर्गो को तज़कियए नफ़्स की बदौलत हासिल हो जाता है और जिसके ज़रिये मख़्फ़ी उमूर (छुपे हुए भेद) उन पर खुद–ब–खुद मुकशिफ हो जाया करते हैं। वह रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हक़ में यह हजरात तसलीम नहीं करते। जब उन से कहा जाता है कि तसव्वुफ कि मुस्तनद किताबों में जब उम्मत के बाज़ औलिया के लिए कशफ़ का सबूत मिलता है तो रूए जमीन के इल्म के सिलसिले में अगर सरदार अम्बिया व औलिया हुज.र अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के लिये भी कश्फ़ मान लिया जाए तो क्या क़यामत लाज़िम आती है।? तो इस का जवाब यूँ इनायत फ़रमाते हैं:

"इन औलिया को हक़ तआला ने कश्फ़ कर दिया कि उनको यह हुजूरे इल्म हासिल हो गया अगर अपने फ़ख़्रे आलम अलैहिस्सलाम को भी लाख गुना इस से

ज्यादा अता फरमा दे मुमकिन है। मगर सबूते फेली इसका के अता किया किस (दलील) से साबित है कि इस पर अकीदा किया जावे। (बराहीने कातेआ, सफा: ५२)

गिरोही पासदारी के जजबे से बालातर होकर फैसला कीजिए कि रसूलुस्सकलैन सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम का कश्फ तो अल्लाह की अता पर मौकूफ रखा गया लेकिन देवबन्द के कामेलुल ईमान बुजुर्गों को रियाज़त और तजकियए नफ्स के बल पर यह कश्फ खूद-ब-खूद हासिल हो जाता है अब सवाल है कि हूसूले कश्फ का जरिया अगर तजकियए नफ्स और रियाजत ही है जैसा कि ऊपर गुजरा तो इस तफरीक की वजह सिवाए इसके और क्या हो सकती है कि यह हजरात अपने बुजुर्गों को रियाजते नफ्स में मआजल्लाह रसूले अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से भी अफजल व बर्तर समझते है।

फिर मजकूरा बाला दोनो इबारतों को एक साथ नजर में रखने के बाद एक तीसरा सवाल यह भी पैदा होता है कि अपने बुजुर्गों के हक में मल्कए रासिख़ा के नाम से कश्फ़ की एक ऐसी दाएमी और हमा वक्ती कुव्वत मान ली गई जिसके बाद अब फरदन फरदन एक एक मख़फी चीज के इल्म के सबूत की ऐहतियाज ही बाकी नहीं रह जाती बल्कि तनहा यही क़ुव्वत सारे मख्फ़ियात के इन्किशाफ़ के लिए काफी हो जाती है।

लेकिन बुरा हो तंगिए दिल का कि इल्म व न्किशाफ़ का यही मल्कए रासिखा रसूले मुजतबा सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम के हक़ में तस्लीम करते हुए इन हज़रात को शिर्क का आज़ार सताने लगता है। यहां फरदन फरदन एक एक शै के इल्म के बारे में दलीले ख़ास का मुतालेबा करते हैं कि खुदा ने अता किया हो तो इसका सबूत पेश कीजिये। जाते नबवी को

मंशए इल्म तस्लीम करने से इन्कार करते हुए क़ारी तय्यब साहब लिखते हैं।

> "यह सूरत न थी कि आप को नबुव्वत के मुकामे रफी पर पहूंचा कर बयक दम और अचानक जाते पाके नबवी को मंशए इल्म बना दिया गया हो और ज़रुरतों और हवादिसों के वक्त "खुद ब खुद" आपके अन्दर से इल्म उभर आता हो। (फारान कराची का तौहीद नम्बर सफ़ा:११३)

यह खुद ब खुद घर के बुर्जुगों के लिए भी और खुद ब खुद यहां भी है लेकिन वहां इल्मी रुत्बा बढ़ाने के लिए था और घटाने के लिए है।

अब आप ही इन्साफ से कहिये कि अकीदए निगाह का यह फ़र्क क्या इस गुबारे खातिर का पता नहीं देता जो किसी के दिल में किसी की तरफ से पैदा हो जाने के बाद एतराफे हकीकत की राह मे दीवार बनकर हाइल हो जाता है।

लगातार ग़ैबी मुशाहेदात: -

अब जैल मे दारूल उलूम देवबन्द के कामेलुल ईमान बुजुर्गों की ग़ैब दानी से मुतअल्लिक वह वाकिआत मुलाहेजा फरमाइये जिन की तशहीर के लिए यह किताब लिखी गई है।

दारूल उलूम देवबन्द की एक इमारत के मुतअल्लिक मौलवी रफीउद्दीन साहेब साबिक मुहतमिम का यह कश्फ ब्यान किया गया है कि

> "हज़रत मौलाना शाह रफीउद्दीन साहेब मुहतमिम दारूल उलूम देवबन्द ने अपने कश्फ़ से मालूम करके इर्शाद फरमाया कि नौदरे की वस्ती दर्सगाह से अर्श मुअल्ला तक मैं ने नूर का एक सिलसिला देखा है। (मुबश्शिरात, सफ़ा:३१)

अब देवबन्द के क़ब्रस्तान के मुतअ़ल्लिक़ एक दूसरा कश्फ़ मुलाहिज़ा फ़रमाइए।

> "ख़तीरए कुदसिया या ख़ित्तए सालेहीन यानी जिस क़ब्रस्तान में हज़रत मौलाना नानौतवी रहमतुल्लाहि अलैहि शैखुल हिन्द हजरत मौलाना महमूदुल हसन साहेब रहमतुल्लाहि अलैहि फख्रूलहिन्द हज़रत मौलाना हबीबुर्रहमान साहेब रहमतुल्लाहि अलैहि मुफ़्तिए आज़म हज़रत मौलाना अजीज रहमान साहेब रहमतुल्लाहि अलैह और सैकड़ों उल्मा व त़लबा मदफ़ून हैं उस हिस्से के मुतअल्लिक हजरत मौलाना शाह रफीउद्दीन साहेब का कश्फ़ था कि इस हिस्से में मदफ़ून होने वाला इन्शाअल्लाह मग़फ़ूर है। (मुबश्शिरात, सफ़ा:३१)

वाज़ेह रहे कि "इन्शाअल्लाह" की यह क़ैद महज़ सुखने तकिया के तौर पर है वर्ना इन्शाअल्लाह की क़ैद के साथ तो हर क़ब्रस्तान मग़फिरत का मदफ न याफ़्ता है।फिर देवबन्दी क़ब्रस्तान के मुतअल्लिक कश्फ की खुसूसियत क्या रही?

मदीने की जन्नतुल बक़ीअ के साथ हमसरी का यह दावा जिस कश्फ के जरिए किया गया है वह बेहतरीन कारोबारी ज़हानत का आइनादार है।

अब अखीर में मौलवी क़ासिम साहेब नानौतवी की क़ब्र के मुतअल्लिक़ एक अजीब व ग़रीब कशफ मुलाहिज़ा फ़रमाईये।

> "हजरत मौलाना रफीउद्दीन साहेब मुजद्देदी नक़्श बन्दी साबिक़ मोहतमिम दारूल उलूम का मुकाशिफ़ा है कि हज़रत मौलान मुहम्मद क़ासिम साहेब नानौतवी बानी दारूल उलूम देवबन्द की क़ब्र ऐन किसी नबी की क़ब्र में है। (मुबश्शिरात, सफ़ा: ३६)

समझ में नहीं आता कि इस कश्फ़ से मौसूफ़ की क्या मुराद है? क्या देवबन्द में किसी नबी की क़ब्र पहले से मौजूद थी जिसे खाली कराया गया और नानौतवी साहेब को वहाँ मदफ़न किया गया अगर ऐसा है तो उस नबी की क़ब्र की निशान देही किसने की और अगर ऐसा नहीं है तो फिर इस कश्फ से मौसूफ की क्या मुराद है?

अगर लफ़्ज़ों के उलट फेर से सर्फेनजर कर लिया जाए तो हो सकता है कि ग़ैर वाजेह अलफाज में वह ये जाहिर करना चाहते हैं कि नानौतवी साहेब की कब्र ऐन किसी नबी की कब्र है और यही ज़्यादा क़रीनए क़ियास भी मालूम होता है। क्योंकि नानौतवी साहेब के हक़ में अगर चे खुल कर नबुव्वत का दावा नहीं किया गया है लेकिन दबी जबान से यह रिवायत जरूर नकल की गई है कि उन पर कभी कभी नुजेल वही की कैफ़िय्यत तारी होती थी। जैसा कि गीलानी साहेब ने अपनी किताब स्वानेह क़ासिमी मे लिखा है कि एक दिन मौलाना नानौतवी ने अपने पीर व मुर्शिद हजरत हाजी इमदादुल्लाह साहेब से शिकायत की कि:

> ''जहाँ तस्बीह लेकर बैठा बस एक मुसीबत होती है।इस क़दर गिरानी कि जैसै सौ सौ मन के पत्थर किसी ने रख दिये हों ज़बान व क़ल्ब सब बस्ता हो जाते हैं।
>
> (स्वानेह क़ासिमी, जिल्द १, सफा: २५८)

इस शिकायत का जवाब हाजी साहेब की जबानी यह नकल किया गया है:

> "यह नबुव्वत का आपके क़ल्ब पर फ़ैज़ान होता है और यह वह सिक़ल (गिरानी) है जो हुज़ूर

सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को वही के वक़्त महसूस होता था तुम से हक़ तआला को वह काम लेना है जो नबीयों से लिया जाता है। (स्वानेह क़ासिमी, जिल्दः१, सफ़ाः २५६)

नबूव्वत का फ़ैजान वही की गिरानी और कारे अम्बिया की सुपुरदगी इन सारे लवाजिमात के बाद न भी सरीह़ लफ़्ज़ों में दावए नबुव्वत (खुले शब्दो में नबी होने का एलान) न किया जाए जब भी अस्ले मुदआ अपनी जगह पर है।

इस किताब का पहला बाब जो बानिए दारूल उलूम देवबन्द मौलवी क़ासिम नानौतवी साहेब के वाक़िआत व ह़ालात पर मुश्तमिल था यहाँ पहुँच कर तमाम हो गया।

जिस तस्वीर का पहला रूख़ किताब के इब्तेदाई ह़िस्से में आप की नजर से गुजर चुका है यह उसका दूसरा रूख़ था। अब चन्द लम्हे की फ़ुर्सत निकाल कर ज़रा दोनों रूख़ों का मवाजिना कीजिए और इन्साफ़ व दियानत के साथ फ़ैसला दीजिए कि तस्वीर के पहले रूख जिन अ़क़ाएद व मसाएल को तस्वीर के दूसरे रूख में उन्होने सीने से लगा लिया तो अब किस मुँह से यह अपने आप को मुवह्हिद और दूसरों को मुश्रिक क़रार देते हैं।

दुनिया की तारीख़ में दूसरों को झुठलाने की एक से एक मिसाल मिलती है लेकिन अपने आप को झुठलाने की इससे ज़्यादा शर्मनाक मिसाल और कहीं न मिल सकेगी।

तरफ़ए तमाशा यह है कि अक़ीदए तौहीद के साथ तसादुम (टकराव) के यह वाक़िआत सिर्फ़ मौलवी क़ासिम साहेब नानौतवी ही तक महदूद (सीमित) नहीं है कि उसे हुस्ने इत्तिफ़ाक़ पर महमूल कर लिया जाए बल्कि देवबन्दी जमाअ़त के जितने मशाहीर हैं कम व–बेश सभी इस इल्ज़ाम में मुलव्विस नज़र आते हैं जैसा कि आइन्दा औराक़ में आप पढ़कर हैरान व शश्दर रह जाएँगे।

दूसरा बाब

देवबन्दी जमाअ़त के मज़हबी पेशवा जनाब मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही के ब्यान मे

इस बाब में पेशवाए देवबन्द मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही के मुतअल्लिक़ देवबन्दी लिटरेचर से ऐसे वाकिआत व हकाइक़ जमा किये गये हैं जिन में अक़ीदए तौहीद से 'तसादुम उसूलों से इन्हिराफ़' मज़हबी खुदकुशी और मुँह बोले शिर्क को अपने हक़ में ईमान व इस्लाम बना लेने की हैरत अंगेज़ मिसालें वर्क़ वर्क़ पर बिखरी हुई हैं।

इन्हें चश्मे हैरत से पढ़िए और ज़मीर का फ़ैसला सुन्ने के लिए गोश बर आवाज़ रहिए।

सिलसिलए वाकिआत

गैबदानी और दिलों के खतरात पर मुत्तिला होने के आठ वाकिआत:-

देवबन्दी मजहब के सरगर्म हामी मौलवी आशिक इलाही मेरठी ने तजकिरतुर्रशीद के नाम से दो जिल्दो मे मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही की स्वानेह हयात लिखी है जेल के अकसर वाकिआत उनही की किताब से लिए गये है

(1)

दिलो के खतरात पर मुत्तला होने और मखफी उमूर के मुशाहिदात मे मुतअल्लिक अब जैल मे वाकिआत का सिलसिला मुलाहिजा फरमाईए:-

पहला वाकिआ

वली मुहम्मद नाम का एक तालिबे इल्म जो मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही की खानकाह मे पढ़ता था इस के मुतअल्लिक तजकिरतुर्रशीद के मुसन्निफ यह वाकिआ ब्यान करते हैं कि:

"एक बार मकान से खर्च आने मे देर हुई और इनको एक या दो फाके की नौबत आ पहुँची। मगर न तो उन्होंने किसी से जिकर किया न किसी सूरत यह हाल किसी पर ज़ाहिर हुआ इसी हालत में सुबह के वक्त बगल में किताब दबाए पढ़ने के वास्ते हजरत की खिदमत में आ रहे थे कि रास्ते में हलवाई की दुकान पर गरम गरम हल्वा पक रहा था। यह कुछ देर वहाँ खड़े रहे कि कुछ पास हो तो खाऐं मगर पैसे भी न थे इसलिए सबर करके चल दिये और खानकाह में पहुँचे। हज़रत गोया उनके मुंतज़िर ही बैठे थे। सलाम

का जवाब देते ही फ़रमाया मौलवी वली मोहम्मद! आज तो हल्वा खाने को हमारा जी चाहता है लो यह चार आने ले आओ और जिस दुकान से तुम को पसद है वहीं से लाओ। ग़र्ज़ वली मुहम्मद इसी दुकान से हल्वा ख़रीद कर लाए और हज़रत के सामने रख दिया। हजरत ने इर्शाद फ़रमाया मियाँ वली मुहम्मद! मेरी ख्वाहिश है कि इस हल्वे को तुम ही खा लो। (तज़किरतुर्रशीद, जिल्दः २, सफाः २२७)

यहाँ तक तो वाक़िआ था जिसमे हुस्ने इत्तिफाक को भी दख़ल हो सकता है लेकिन गगोही साहेब की हमा वक्ती (हरसमय) गैबदानी के मुतअल्लिक जरा इसी तालिबे इल्म के यह तअस्सुरात मुलाहिजा फरमाईये लिखते है कि—

"मौलवी वली मुहम्मद इस किस्से के बाद फ़रमाया करते थे कि हजरत के सामने जाते मुझे बहुत डर मालूम होता है क्योकि कल्ब के वसाविस (वसवसे) इख़्तियार में नही और हजरत इन पर मुत्तला हो जाते हैं।(सफा २२७)

मक़सद यह जाहिर करना है कि दिलों के खतरात से बाख़बर होने की यह कैफ़िय्यत इत्तिफाकी नही बल्कि दाएमी थी यानी जो उस पंजेगान की तरह वह हर वक़्त इस क़ुव्वत से काम लेने पर क़ादिर थे।

अपने घर के बुज़ुर्गों की ग़ैबदानी का तो यह हाल ब्यान किया जाता है लेकिन अम्बिया व औलिया की जनाब मे इन हजरात के अक़ीदे की आम जबान यह है:—

"(जो कोई किसी के मुतअल्लिक यह समझे) जो बात मेरे मुँह से निकलती है वह सब सुन लेता है और

जो ख़्याल व वहम उसके दिल में गुज़रता है वह सब से वाक़िफ़ है सो इन बातों से मुश्रिक हो जाता है। और इस किस्म की बातें सब शिर्क हैं। (तकवियतुल ईमान, सफ़ा:१०)

अब इस बेइन्साफ़ी का शिकवा किस से किया जाए कि एक ही अक़ीदा जो अम्बिया व औलिया के बारे में शिर्क है वही घर के बुज़ुर्गों के हक़ में इस्लाम व ईमान बन गया है।

क्या अब भी हक़ व बातिल की राहों का इम्तियाज़ महसूस करने के लिए मज़ीद किसी निशानी की ज़रूरत बाक़ी रह जाती है? अपने ज़मीर की आवाज पर फ़ैसला कीजिए।

-:दूसरा वाक़िआ:-

दिलों के ख़तरात पर मुत्तला होने का एक और वाक़िआ सुनिये लिखते हैं कि:-

"एक मर्तबा उस्ताजी मौलाना अब्दुल मोमिन साहेब हाज़िरे ख़िदमत थे दिल में वस्वसा गुज़रा कि बुज़ुर्गों की हालात में ज़ुहद और फ़क्र व तंग दस्ती ग़ालिब देखी गई है और हज़रत के जिस्मे मुबारक पर जो लिबास है वह मुबाह व मशरूअ है मगर बेश क़ीमत है।

हज़रत इमामे रब्बानी (मौलाना गंगोही इस वक़्त किसी से बातें कर रहे थे दफ़अतन इधर मुतवज्जह होकर फ़रमाया कि अर्सा हुआ मुझे कपड़ा बनाने का इत्तिफ़ाक़ नहीं होता।लोग खुद बना-बना कर भेज देते हैं और इसरार करते हैं कि तूही पहनना। उनकी ख़ातिर से पहनता हूँ चुनांचे जितने कपड़े हैं सब दूसरों के हैं। (तज़किरह, जिल्द: २,सफ़ा: १७३)

इस वाक़िआ का यह रूख़ ख़ास तौर पर महसूस करने के

किसी ख़ास तवज्जह की भी ज़रूरत नहीं पेश आई। दूसरे शख्स के साथ गुफ्तगू में मशगूल होते हुए भी वह मौलवी अब्दुल मोमिन साहेब के दिल के वस्वसे से बाखबर हो गए। इस वाकिआ से उन हमा जेहती आगही (हर तरफ़ की मालूमात) का पता चलता है। और मेरा ख्याल अगर गलत नहीं है तो यह शान सिर्फ खुदा की है। क्योकि इन्सान के बारे में तो हमेशा यही तसव्वुर रहा है कि इस की क ब्वते इद्राक एक वक्त में एक ही तरफ मुतवज्जह हो सकती है।

अब चश्मे इबरत से लहू टपकने की बात यह है कि देवबन्दी हजरात के इमामे रब्बानी तो बगैर किसी खास तवज्जह के भी फिलफौर दिल के मख्फी हाल पर मुत्तला हो गए लेकिन इमामुल अम्बिया सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मुतअल्लिक इन हजरात के अकीदे की जबान यह है।

> बहुत से उमूर में आपका खास एहतेमाम से तवज्जह फरमाना बल्कि फ़िक्र व परेशानी मे वाकिअ होना और बावजूद इसके फिर मख्फी रहना साबित है। (हिफ्ज़ुल ईमान, सफ़: ७)

अब आप ही फ़ैसला कीजिए। यह सर पीट लेने की बात है या नहीं कि गैबी इद्राक की जो कुव्वत उन हजरात के नजदीक एक अदना उम्मती के लिए साबित है वह खुदा के महबूब पैग़म्बर
और इमामुल अम्बिया के लिए साबित नहीं है। फातबेरू या ऊलिल अबसार।

-:तीसरा वाकिआ:-

लिखते हैं कि:-

"मौलवी नजर मुहम्मद खाँ साहेब फ़रमाते हैं कि मेरी अहलिया जिस वक्त आपसे बैअत हुई तो चूँकि मुझे तबई तौर पर गैरत ज़्यादा थी इसलिए औरत को बाहर आना या किसी अजनबी मर्द को आवाज़ सुनाना भी गवारा न था उस वक्त भी यह वस्वसा जहन में आया कि हजरत मेरी अहलिया की आवाज़ सुन गे मगर यह हजरत की करामत थी कि कश्फ से मेरे दिल का वस्वसा दरियाफत कर लिया और यूँ फ़रमाया कि अच्छा! मकान के अन्दर बैठा कर कियाड़ बन्द करदो (तजकिरतुर्रशीद, जिल्द २, सफ़ा: ५२)

इस वाक़िआ के अन्दर बिल्कुल सराहत है इस अम्र की गंगोही साहेब ने उनके दिल का यह वस्वसा इल्हामे खुदा वन्दी के जरिए नहीं बल्कि अपनी कुव्वते कश्फ के जरिये दर्याफ़्त फ़रमा लिया है लेकिन सद हैफ कि यही कुव्वते कश्फ़ पैग़म्बरे आज़म सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हक़ में तस्लीम करते हुए उन हजरात को शिर्क का आजार सताने लगता है। और दीवानो की तरह शोर मचाने लगते है कि ये तो खुदा के साथ बराबरी हो गई कि एक पैगंबर को खुदा का मन्सब दे दिया गया।

:-चौथा वाक़िआ:-

लिखते हैं कि:-

"मौलाना अली रज़ा साहेब हजरत के शागिर्द हैं फरमाते हैं कि ज़मानए तालिबे इल्मी में मुझे ऐसा मर्ज लाहिक़ हुआ कि वुजू क़ाएम नहीं रहता था। बाज़ नमाज़ के लिए तो कई कई बार वुजू करना पड़ता था।

एक मर्तबा ऐसा इत्तिफ़ाक़ हुआ कि फ़ज्र की नमाज़ को बन्दा मस्जिद में सवेरे आ गया। सर्दी का

मौसम था और उस दिन इत्तिफाक़ से जाड़ा भी ज्यादा था बार–बार वुज़ू करने में बहुत तकलीफ होती थी. जी चाहता था कि किसी तरह जल्द नमाज से फरागत हो जाए तक़दीरी बात कि इमामे रब्बानी ने उस दिन मामूल से भी ज्यादा देर लगा । मै कई मर्तबा सख्त सर्दी में वुजू करने से परेशान हुआ और वस्वसा गुजरा कि ऐसी भी क्या हनफिय्यत है? हजरत अभी इस्फार ही के मुतजिर है और हम वुजू करते करते मरे जाते हैं लहजा दो लहजा के बाद हजरत तश्रीफ़ लाए और जमाअत खड़ी हो गई। फरागत के बाद हस्बे मामूल दिगर अशखास के हमराह मैं भी हज़रत के पीछे–पीछे हुज़रा शरीफ तक गया जब सब लोग लौट गये और हजरत ने दरवाजा बन्द करना चाहा तो मुझे पास बुला कर इर्शाद फरमाया भाई। यहाँ के लोग नमाजे फज्र के वास्ते ताखीर करके आते हैं इस वजह से मै भी देर करता हूँ। यह फरमा कर हजरत हुज़रा में तशरीफ ले गए और मैं नदामत से पानी–पानी हो गया। (तजकिरतुर्रशीद. जिल्द:२, सफा: २४४)

इसलिए कि ग़ैब दान शख़्स पर दिल की चोरी खुल गई वर्ना आप ही बताइये कि दिल के वस्वसे के सिवा शेख की बारगाह का और को दूसरा जुर्म ही क्या था।

पाँचवा वाकिआ:-

लिखते हैं:-

"एक मर्तबा मौलवी (विलायत हुसैन) साहेब को वस्वसा हुआ कि हज़रत मुजद्दिद साहेब अपने बाज़

मकतुबात में ज़िक्र जहर को बिदअ़त फ़रमाते हैं हज़रत की ख़िदमत में हाज़िर हुए तो उन्ही को मुखातब बना कर हजरत ने इर्शाद फरमाया: ज़िक्र जहर की इजाज़त बाज वक्त हजराते नक्शबन्दिया भी देते हैं। (तज़किरए. जल्द, २ सफ़ा: २२६)

देख रहे हैं आप? लगातार दिल की बातों पर मुत्तिला होने की यह शान! इधर ख्याल गुजरा उधर बा ख़बर। लेकिन इन हजरात की बुनयादी किताब 'तकवियतुल मान' के हवाले से अभी आप पढ़ चुके है कि यह शान सिर्फ़ खुदा की है जो ग़ैरे खुदा के लिए इस तरह की बात साबित करता है वह मुश्रिक हो जाता है अब इस इल्जाम का जवाब हमारे सिर नहीं है कि एक ही अक़ीदा जो गैरे खुदा के हक में शिर्क था वह घर के बुजुर्ग के हक में इस्लाम क्यो कर बन गया?

-:छटा वाकिआ:-

यहाँ तक तो दिलों के खतरात पर मुत्तला होने की बात भी अब आम तौर पर ग़ैब दानी की शान मुलाहिज़ा फरमाइए लिखते हैं कि:–

"एक मर्तबा दो अजनबी शख़्स आपकी ख़िदमत में हाजिर हुए और सलाम व मुसाफ़ा के बाद बैअ़त की तमन्ना जाहिर की आपने फ़रमाया दो रकअ़त नमाज़ पढ़ो। हज़रत के इस इर्शाद पर थोड़ी देर दोनों गर्दन झुकाए बैठे रहे फिर चुपके ही से उठकर चल दिये।

जब दरवाज़े से बाहर हुए तब हज़रत ने फरमाया दोनों शिया थे मेरा इम्तिहान लेने आए थे। हाज़ेरीन में से बाज़ आदमी उनकी तहकीक को उनके पीछे गए और मालूम किया तो वह वाक़ई राफज़ी थे। (तज़किरतुर्रशीद, जिल्द: २ सफ़ा: २२७)

सातवाँ वाकिआ

अर्वाहे सलासा के मुसन्निफ़ अमीर शाह खाँ अपनी किताब में मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही के मुतअल्लिक़ यह वाकिआ ब्यान करते हैं कि:-

"हज़रत गंगोही रहमतुल्लाह अलैहि ने मौलवी मुहम्मद यहया साहेब कांधलवी से फरमाया कि फलाँ मसअला शामी में देखो। मौलवी साहेब ने अर्ज़ किया कि हजरत वह मसअला शामी में तो है नही है फरमाया यह कैसे हो सकता है? लाओ। शामी उठा लाओ। शामी लाई गई। हजरत उस वक़्त आँखों से माज़ूर हो चुके थे। शामी के दो सुलुस (दो तिहा) अवराक दाएं जानिब कर के और एक सुलुस (एक तेहा) बाऐं जानिब कर के अन्दाज से एक दम किताब खोली और फरमाया कि बाएं तरफ के सफ़े पर नीचे की जानिब देखो। देखा तो वह मसअला उसी सफ़े में मौजूद था। सब को हैरत हुई हजरत ने फरमाया कि हक तआला ने मुझ से वादा फरमाया है कि मेरी ज़बान से गलत नहीं निकलवाएगा। (अर्वाहे सलासा, सफ़ा: २९२)

अब इस वाकिआ पर जनाब मौलवी अशरफ अली साहेब थानवी का एक हाशिया पढ़िये लिखते है.-

"वही मुकाम निकल आना गो इत्तिफाकन भी हो सकता है मगर क़राइन से यह बाबे कश्फ़ से मालूम होता है वर्ना जज़्म के साथ न फ़रमाते कि फलाँ मौके पर देखो। (हाशिया अर्वाहे सलासा)

ज़रा गौर फरमा ये। यह वाकिआ को चीसतान (पहेली) तो

था नही जिसके हल के लिए हाशिया चढ़ाने की ज़रूरत थी। मगर ऐसा मालूम होता है कि थानवी साहेब ने ख़्याल किया होगा कि लोग कहीं इसे हुस्ने इत्तिफ़ाक़ ही पर महमूल न करलें इस लिऐ "बाबे कश्फ" से कह कर लोगों की तवज्जह उनकी गैबदानी की तरफ़ मबज ल करादी।

इस वाकिआ में गंगोही साहेब के इस जुमले पर कि "हक़ तआला ने मुझसे वादा फ़रमाया है कि मेरी जबान से ग़लत नही निकलवाएगा" कई सवालात पैदा होते हैं।

पहला सवाल तो यह है कि खुदा के साथ उन्हें हमकलामी (बात करने) का शरफ़ कब और कहाँ हासिल हुआ कि उसने उन से यह वादा फ़रमाया

दूसरा सवाल यह है कि क्या जज़्म व यक़ीन के साथ यह दावा किया जासकता है कि गंगोही साहेब की जबान व क़लम से सारी उमर कोई गलत बात नही निकली? एक नबी के बारे मे तो अलबत्ता ऐसा सोचना सही है लेकिन मैं यक़ीन करता हूँ कि बड़े से बड़ा उम्मती भी ज़बान व क़लम की लगजिशों से मासूम नही करार दिया जा सकता।

पस ऐसी हालत में क्या बअल्फाजे दिगर वह खुदाए कुद्दूस की तरफ़ यह इल्ज़ाम नहीं मंसूब कर रहे हैं कि उसने मआजल्लाह अपने वाद की खिलाफ़ वर्ज़ी की।

तीसरा सवाल यह है कि इस एलान से आखिर गंगोही साहेब का मुद्दआ क्या है? काफ़ी ग़ौर व फ़िक्र के बाद मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि उन्होंने आम लोगों को यह तअस्सुर देने की कोशिश की है कि खुदा के यहाँ उनका मक़ाम "बशरिय्यत" की सतह से भी ऊँचा है क्योंकि नबी भी अगरचे बशर ही होते हैं लेकिन देवबन्दी हज़रात के तई उनसे भी गलती वाक़े हो सकती है जैसा कि थानवी साहेब अपने फ़त्वा में इर्शाद फ़रमाते हैं:-

"तहक़ीक़ की ग़लती विलायत बल्कि नबुव्वत के साथ जमा हो सकती है"(फ़तावा इमदादिया, जिल्द: २ सफ़ा: ६४)

अब इस मुक़ाम पर मैं आपको एक सख़्त किस्म के इम्तिहान में मुबतला करके आगे बढ़ता हूँ। यह फ़ैसला करना अब आप ही की ग़ैरते इमानी का फ़रीज़ा है कि अपने पैगम्बर के साथ वफ़ादारी का शेवा क्या है? खुदा करे फ़ैसला करते वक़्त आपका दिल किसी जज़बए पासदारी का शिकार न हो।

आठवां वाकिआ

यही अर्वाहे सलासा के मुसन्निफ़ अमीर शाह खाँ गगोही साहेब के मुतअल्लिक़ इस वाकिआ के भी रावी हैं ब्यान करते हैं कि:–

"एक दफ़ा हज़रत गगोही रहमतुल्लाह अलैहि जोश मे थे और तसव्वुरे शैख का मसला दर पेश था। फ़रमाया कह दूँ? अर्ज किया गया कि फरमा ये। फिर फरमाया कह दूँ? अर्ज़ किया गया फ़रमा ये। फिर फ़रमाया कह दूँ? अर्ज किया गया फ़रमा ये। तो फ़रमाया तीन साल कामिल हज़रत इमदाद का चेहरा मेरे क़ल्ब में रहा मैं ने उनसे पुछे बगैर को काम नहीं किया फिर और जोश आया फ़रमाया कह दूँ? अर्ज़ किया गया कि हज़रत ज़रूर फ़रमा ये।

फ़रमाया कि इतने साल हजरत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मेरे क़ल्ब में रहे और मैंने को बात बगैर आप के पूछे नहीं की। यह कहकर और जोश हुआ। फ़रमाया कह दूँ? अर्ज़ किया गया कि फरमा ये। मगर ख़ामोश हो गए लोगों ने इसरार किया तो फ़रमाया कि बस रहने दो। (अर्वाहे सलासा, सफ़ा २६२)

यानी मआज़ल्लाह! अब ख़ुदा का चेहरा दिल म था। वाज़ेह रहे कि यहाँ बात मजाज़ व इस्तेआरा की ज़बान में नहीं है जो कुछ कहा गया है वह क़तअन अपने जाहिर पर महमूल है। इसलिए कहने दिया जाए कि यहाँ हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से मुराद हुज़ूरे अकरम का नूर नहीं है बल्कि हुज़ूर से खुद हुज़ूर ही मुराद हैं क्यों कि नूर एक जौहरे लतीफ़ का नाम है उसके साथ हम कलाम (बात) होने के को माना ही नहीं।

अब अहले नजर के लिए यहाँ काबिले ग़ौर नुक्ता यह है कि बात अपनी फजीलत व बुजुर्गी की आ गई है तो सारे मुहालात मुमकिन ही नहीं बल्कि वाके हो गए हैं अब यहाँ किसी तरफ़ से यह सवाल नहीं उठता मआजल्लाह जितने दिनों तक हुजूर आपके दिल में मुकीम रहे इतने दिनो तक यह अपनी तुर्बते पाक मे मौजूद थे या नही? अगर नहीं थे तो क्या इतने दिनों तक तुर्बते पाक खाली पड़ी रही? और अगर मौजूद थे तो फिर थानवी साहब के इस सवाल का क्या जवाब होगा जो उन्होंने महफिल मीलाद में हुजूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तशरीफ आवरी के सवाल पर उठाया है कि

'अगर एक वक्त मे कई जगह महफ़िल मुनअक़िद हो तो आया सब जगह आप तशरीफ ले जावेंगे या कहीं यह तो तरजीह बिला मुरज्जह है कि कहीं जावें कहीं न जावें। और अगर सब जगह जावे तो वजूद आपका वाहिद है हज़ार जगह किस तौर जा सकते हैं? (फतावा इमदादिया, जिल्द:४, सफा: ५८)

जावियए निगाह का यह फर्क़ किसी हाल में नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता कि अपनी रूहानी बरतरी और ग़ैबी क़ुव्वते इदराक के सवाल पर ज़हन के भरपूर एतराफ़ के साथ सब खामोश रहे और बात महबूबे किरदिगार की आ गई तो

अक्ल फ़ितना परवर ने ऐसी ऐसी बाल की खाल निकाली कि आदमी का यक़ीन व ऐतमाद घायल हो के रह गया अगर इन्साफ़ का जज़बा शरीके नज़र रहा तो देवबन्दी हज़रात का मख़सूस अन्दाज़े फ़िक्र आप इस किताब में जगह-जगह महसूस करेंगे और गंगोही साहेब के इस वाक़ेआ का एक रुख तो इतना इश्तिआल अंग्रेज़ है कि सोचता हूँ तो आंखों से खून टपकने लगता है। यह कह कर कि कोई काम उन्होंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से पूछे बग़ैर नहीं किया दूसरे लफ़्ज़ो मे अपने जिस्म व जवारेह और ज़बान व कलम की सारी तकसीरात (गलतियों) को उन्होंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तरफ़ मसूब कर दिया। क्यों कि यह दावा हरगिज़ साबित नहीं किया जा सकता कि इन अय्याम में उनसे कोई वह ख़िलाफ़े शरअ़ काम सादिर नहीं हुआ और जब हुआ तो उन्हीं के मुताबिक़ मान्ना पड़ेगा कि मआज़ल्लाह वह खिलाफ़ शरअ काम भी उन्हों ने हुज़ूर ही के ईमा (मर्ज़ी) से किया।

-:चन्द और इबरत अंगेज़ कहानियाँ:-

आपकी निगाहो पर बार न हो तो तज़किरतुर्रशीद मे गंगोही साहेब से मुतअल्लिक़ मुश्रिकाना इख़्तियारात और पैगम्बराना तअल्लियों की जो कहानियाँ नक़ल की गई हैं उनमे से दो चार कहानियाँ नमूने के तौर पर मुलाहिज़ा फ़रमाएं।

पहली कहानी

तज़किरतुर्रशीद के मुसन्निफ़ ब्यान करते हैं कि बारह अपनी ज़बाने फ़ैज़ तर्जुमान से यह कहते सुना गया।

> "सुन लो हक़ वही है जो रशीद अहमद की ज़बान से निकलता है और ब क़सम कहता हूँ कि मैं कुछ नहीं हूँ मगर इस ज़माने में हिदायत व नजात मौक़ूफ़ है मेरी इत्तिबा पर। (तज़केरतुर्रशीद, जिल्दः २, सफ़ाः १७)

पासदारी के जजबे से अलग हो कर सिर्फ़ एक लम्हे के लिए सोचिए! वह ये नहीं कह रहे हैं कि रशीद अहमद की ज़बान से जो कुछ निकलता है वह हक़ है बल्कि उनके जुम्ले का मफ़हूम यह है कि हक़ रशीद अहमद ही की जबान से निकलता है। दोनो का फर्क यू महसूस कीजिए कि पहले जुम्ले को सिर्फ़ खिलाफ़े वाकिआ कहा जा सकता है लेकिन दूसरा जुम्ला तो खिलाफ़े वाकिआ होने के साथ साथ उस दौर के तमाम पेशवायाने इस्लाम की हक गोई को एक खुला हुआ चैलेंज भी है। यानी मतलब यह है कि उस जमाने में मौलवी रशीद अहमद साहेब के अलावा किसी कि ज़बान भी कलमए हक़ से आशना नहीं हुई।

अफसोस कि गगोही साहेब के इस दावे को मुशतहर करते हुए देवबन्दी उल्मा ने कतअन यह महसूस नहीं किया कि इसमे दूसरे हक परस्त उल्मा की कितनी सरीह (खुली) तौहीन मौजूद है।

और आख़िर का यह जुम्ला कि "इस ज़माने में हिदायत व निजात मौकूफ़ है मेरे इत्तिबा पर" पहले से भी ज्यादा ख़तरनाक और गुमराह कुन है। गोया हुसूले नजात के लिए अब रसूले अर्बी फ़िदाहो अबी व उम्मी का इत्तिबा ना काफी है।

और सोचने की बात यह है कि किसी की इत्तिबा पर नजात मौकूफ (निर्भर) हो यह शान सिर्फ़ अर्बी की हो सकती है। नाएबे रसूल होने की हैसिय्यत से उल्माए किराम का मंसब सिर्फ यह है कि वह लोगो को इत्तिबाए रसूल की दावत दें। अपने इत्तिबा की दावत देना कतअन उनका मंसब नहीं है। लेकिन साफ़ आया है कि गंगोही साहेब इस मंसब पर कनाअत नहीं करना चाहते।

फिर एक तरफ तो गगोही साहेब अपने इत्तिबा की दावत दे कर लोगों से अपना हुक्म और अपनी राह व रस्म मनवाना चाहते हैं। और दूसरी तरफ़ उनके मज़हब की बुनियादी किताब

तक्वियतुल मान का फ़रमान यह है:–

"किसी कि राह व रस्म को मान्ना और उसके कल्मे को अपनी सनद समझना यह भी उन्हीं बातों मे से है कि ख़ास अल्लाह तआला ने अपनी ताज़ीम के वास्ते ठहराये हैं। फिर जो कोई यह मामला किसी मख़लूक़ से करे तो उस पर शिर्क साबित होता है। (तक्वियतुल ईमान,सफ़ा:४२)

अब इस इल्ज़ाम का जवाब हमारे सर नही कि जो मामला किसी मख़लूक के साथ शिर्क था वही गंगोही साहेब के साथ अचानक क्यों कर मदारे नजात (मुक्ती का कारण) बन गया? कहीं नजात का दरवाजा बन्द और कहीं उसके बगैर नजात ही न हो। आख़िर यह मोअम्मा क्या है?

दूसरी कहानी

तज़किरतुर्रशीद के मुसन्निफ लिखते है कि:–

"मौलवी अब्दुस्सुबहान साहेब इन्सपेक्टर पुलिस ज़िला ग्वालियर फ़रमाते हैं कि मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहेब कमिश्नर बंदोबस्त रियासत ग्वालियर एक बार परेशानी में मुब्तला हुए और रियासत की तरफ से तीन लाख रूपिये का मुतालिबा हुआ। उनके भाई यह ख़बर पाकर हज़रत मौलाना फजलुर्रहमान साहेब रहमतुल्लाह अ़लैहि की ख़िदमत में गंज मुरादाबाद पहुँचे हजरत मौलाना ने तअ़ज्जुब के साथ फ़रमाया. गंगोह हज़रत मौलाना की ख़िदमत में क़रीब तर क्यों न गऐ। इतना दराज़ सफ़र क्यों इख़्तियार किया?

उन्होंने अर्ज़ किया कि हज़रत यहाँ मुझे अक़ीदत

लाई है मौलाना ने इर्शाद फ़रमाया तुम गंगोह ही जाओ तुम्हारी मुश्किल कुशाई हज़रत मौलाना रशीद अहमद साहेब की दुआ पर मौकूफ़ है और तमाम रूए ज़मीन के औलिया भी अगर दुआ करेंगे तो नफ़ा न होगा। (तजकिरतुर्रशीद, जिल्द:२, सफ़ा: २१५)

बात अपने शैख की फ़ज़ीलत व बर्तरी की आ गई है तो अब यहाँ कोई सवाल नहीं उठता कि मौलाना फ़ज़लुर्रहमान साहेब को पर्दए गैब का यह राज़ क्यों कर मालूम हो गया कि मुश्किल कुशाई मौलवी रशीद अहमद ही की दुआ पर मौकूफ़ है और किस इल्म के जरिये उन्हो ने तमाम रूएजमीन के औलिया की दुआओं का फ़रदन फरदन वह अन्जाम मालूम कर लिया जिसका तअल्लुक सिर्फ खुदा की ज़ात के साथ है और वह भी इतना झट पट कि इधर मुँह से बात निकली और उधर अर्श से लेकर फ़र्श तक ग़ैब व शहूद के सारे अहवाल मुनकशिफ हो गए।

मआजल्लाह अपने शैख़ की बरतरी साबित करने के लिए एक तरफ अपने अकीदे का खून किया गया । और दूसरी तरफ़ रूए जमीन के जुमला औलिया अल्लाह की अज़मतों को भी मजरूह कर दिया गया।

तीसरी कहानी

"तजकिरतुर्रशीद का मुसन्निफ लिखता है कि:–

"जिस जमाने में मसलए इमकाने किज़्ब पर आप के मुखालेफीन ने शोर मचाया और तकफ़ीर का फतवा शाया किया। साईं तवक्कल शाह अम्बालवी की मजलिस में किसी मौलवी ने हजरते इमामे रब्बानी कुद्दूसा सिर्रुहू (गंगोही साहेब) का ज़िक्र किया और कहा कि इमकाने किज़्ब बारी के क़ाएल हैं यह सुनकर साईं तवक्कल

शाह ने गर्दन झुका ली और थोडी देर मुराकिब रह कर मुँह ऊपर उठाकर अपनी पंजाबी जबान मे यह अल्फ़ाज़ फरमाये।

लोगो! तुम क्या कहते हो? मैं मौलवी रशीद अहमद का क़लम अर्श के परे चलता हुआ देख रहा हूँ। (तज़किरह, जिल्द २ सफा ३२२)

क्या समझे आप? कहने का मतलब यह नही कि मौलवी रशीद अहमद साहेब के कलम की लम्बाई अर्श की सरहद को पार कर गई थी बलिक इस जुम्ले की तशहीर (Publicity) से यह दावा करना मकसूद है कि तक़दीरे इलाही के नविश्ते आप ही के रुशहाते क़लम से मुरत्तब हो रहे थे। और कज़ा व कदर का मुहकमा आप ही के क़लम के ताबे कर दिया गया था।

और सा[illegible] की निगाह की दूररसी का क्या कहना कि फर्श पर बैठे बैठे उसने अर्श के उस पार का नज्जारा कर लिया।

और इस किस्से मे सब से ज्यादा दिलचस्प तमाशा तो यह है कि "दानिशवराने देवबन्द" ने एक दिवाने की बात को नजर अन्दाज़ करने की बजाए उसे कुबूल भी कर लिया और कुबूल ही नहीं किया बल्कि उसे अपना अकीदा बना लिया जैसा कि इस किताब का मुसन्निफ इस वाकिआ का भी रावी है कि.

"मौलवी विलायत हुसैन साहेब फरमाते हैं कि मेरे अल्लाह सफ़रे हज में एक हकीम साहेब साकिन अम्बाला थे जो आला हज़रत हाजी (इम्दादुल्लाह) के मुरीद थे इसी तअ़ल्लुक से उनको हज़रत इमामे रब्बानी के साथ तआरुफ बल्कि गायत अक़ीदत थी यह फरमाने लगे मेरा तो यह अक़ीदा है कि मौलाना की ज़बान से जो बात निकलती है तकदीरे इलाही के मुताबिक है। (तज़किरतुर्रशीद, जिल्दः २. सफ़ाः ११६)

यह खबर अगर सही है तो इसके सेहत की दो ही सूरतें हो सकती है या तो गंगोही साहेब जुमला मुकद्देराते इलाही पर मुत्तेला थे कि जबान उसके खिलाफ खुलती ही नहीं थी या फिर उनके मूह मे जबान ही नही थी बल्कि "कुन" की कुजी थी कि जो बात मुँह से निकली वह काएनात का मुकद्दर बन गई।

इन दोनो बातों में से जो बात भी इख्तियार की जाए देवबन्दी मजहब पर दीन व दियानत का एक खून जरूरी है।

-:चौथी कहानी:-

मुख्लेसुर्रहमान नामी गंगोही साहेब के एक मुरीद थे उनके मुतअल्लिक तजकिरतुर्रशीद के मुसन्निफ का यह ब्यान पढ़िए लिखते है कि–

> "एक रोज खानकाह में लेटे हुए अपने शुगल में मशग़ूल थे कि कुछ सुकर पैदा हुआ और हजरत शाह वलीउल्लाह क़ुद्देसा सिर्रुहू को देखा कि सामने तशरीफ ले जा रहे हैं चलते–चलते उनको मुख़ातब बनाकर इस तरह अमर फरमाया कि देखो। जो चाहो हजरत मौलाना रशीद अहमद साहेब से चाहना"
>
> (तजकिरतुर्रशीद, जिल्दः २ सफाः ३०६)

शाह वलीउल्लाह साहेब और उनका घराना हिन्दुस्तान में अकीदए तौहीद का सब से बड़ा मुहाफिज समझा जाता है लेकिन सख्त तअज्जुब है कि उन्होंने खुदा को छोड़ कर मौलवी रशीद अहमद से सब कुछ चाहने की हिदायत फरमाई! शाह साहेब की तरफ इतना बड़ा शिर्क मंसूब करते हुए वाकिआ के राविओं को कुछ तो शर्म महसूस करनी चाहिए थी। एक तरफ तो "अपने मौलाना को बा– इख़्तियार और साहेबे तसर्रूफ साबित करने के लिए शाह वलीउल्लाह साहेब की ज़बानी यह

कहलवाया जाता है और दूसरी तरफ़ अपनी तौहीद परस्ती का ढोंग रचाने के लिए अक़ीदा यह ज़ाहिर किया जाता है।

"हर किसी को चाहिए अपनी हाजत की चीजें अपने रब से माँगे यहाँ तक कि नून (नमक) भी उसी से माँगे और जूती का तस्मा (फीता) जब टूट जाए वह भी उसी से माँगे" (तक़वियतुल ईमानः सफ़ा ३४)

और इस वाकिआ में मुरीद का मुशाहिदए गैब भी कितने ज़ोर का है कि सर की आँखों से वह एक वफ़ात–याफ़्ता बुज़ुर्ग को देख लेता है और उनसे हम कलामी (बात करने) का शर्फ़ भी हासिल करता है। न उनकी निगाह पर आलमे बर्ज़ख़ का कोई हिजाब हाएल होता और न शाह साहेब को अपनी लहद से निकल कर उसके रूबरू जाने से कोई चीज़ माने होती है।

देख रहे हैं आप! तौहीद के इन इजारा दारों ने कितनी तरह की शरीअतें गढ़ रखी हैं। अम्बिया व औलिया के लिए कुछ! अपने घर के बुज़ुर्गों के लिए कुछ! है कोई इन्साफ़ का ख़ूगर जो इस ज़ोरे बे अमाँ का इन्साफ़ करे। और हक़ पस्तों को उनका वह हक़ दिलाए जो मज़हबे इस्लाम ने उन्हे दिया है।

-:पाँचवीं कहानी:-

आगरा के कोई मुंशी अमीर अहमद थे तज़किरतुर्रशीद के मुसन्निफ़ उनकी ज़बानी उनका एक अजीब व गरीब ख़्वाब नक़ल किया है। मौसूफ़ ब्यान करते हैं कि:–

"गंगोह का एक शख़्स शिया मज़हब मर गया और मैं ने उसे ख़्वाब में देखा फ़ौरन उसके हाथ के दोनों अंगूठे मैं ने पकड़ लिये वह घबरा गया और परेशान होकर बोला जल्दी पूछो जो पूछना हो मुझे तकलीफ़ है। मैं ने कहा अच्छा बताओ कि मरने के बाद तुम पर

क्या गुजरी और अब किस हाल में हो?

उसने जवाब दिया कि अजाबे अलीम में गिरफ्तार हूँ। हालत बीमारी मे मौलाना रशीद अहमद साहेब देखने तशरीफ लाए थे जिस्म के जितने हिस्से पर मौलवी साहेब का हाथ लगा बस उतना ही जिस्म तो अजाब स बचा है। बाकी जिस्म पर बड़ा अज़ाब है। उसके बाद ऑख खुल गई।" तजकिरह, जिल्दः २ सफाः ३२४)

बात आ गई है तो उसी तजकिरतुर्रशीद के मुसन्निफ ने इसी किस्म का एक ख्वाब मौलवी इस्माईल नामी " एक देवबन्दी बुज र्ग क किसी खादिम के मुतअल्लिक नकल किया है। लगे हाथो जरा उसे भी पढ लीजिए लिखते हैं कि:–

"एक ख़ादिम था मौलवी इस्माईल साहेब का जब उसका इन्तेकाल हो गया तो किसी ने उसको ख़्वाब में देखा कि सारे बदन मे आग लगी हुई है मगर हथेलियाँ सालिम और महफूज है उसने पूछा क्यों भाई क्या हाल है? उसने कहा क्या कहू आमाल की सजा मिल रही है। सारे बदन को तकलीफ है ये मगर हाथ हजरते मौलाना के पाओं को लगे थे इसलिए हुक्म हुआ कि उनमें आग लगाते हमे शर्म आती है"(तजकिरह, जिल्दः २ सफाः ७२)

देख रहे है आप! दरबारे इलाही मे इन हज़रत की बुलन्दी व मकबूलियत का आलम? अज़ाबे आख़िरत से छुटकारा दिलाने के लिए जुबान हिलाने की भी जरूरत नहीं पेश आई। सिर्फ़ हाथ लगा देना काफी हो गया। और शिया जैसा बागिए हक़ भी हाथों की बर्कत से महरूम नहीं रहा।

एक यह हज़रात हैं कि आलमे असफल ही नहीं आलमे बाला में भी इनकी शौकत व सतवत के डंके बज रहे हैं। लेकिन

रसूले ख़ुदा महबूब किबरिया के मुतअल्लिक इन हजरात के अक़ीदे की ज़बान यह है:–

> "अल्लाह साहब ने अपने पैगम्बर को हुक्म दिया कि लोगों को सुना देवें कि मैं तुम्हारे नफा व नुक्सान का कुछ मालिक नहीं और तुम जो मुझ पर ईमान लाए और मेरी उम्मत में दाखिल हुए सो इस पर मगरूर हो कर हद से मत बढना कि हमारा पाया मजबूत है और हमारा वकील ज़बरदस्त है और हमारा शफी बड़ा महबूब। सो हम जो चाहें सो करें वह हम को अल्लाह के इताब से बचा लेगा। क्यों कि यह बात महज गलत है। इस वास्ते कि मैं आप ही डरता हूँ और अल्लाह से वरे कहीं बचाओ नही जानता सो दूसरे को क्या बचा सकूँ?" (तकवियतुल ईमान, सफा ४८)

इस मुक़ाम पर मै इससे ज्यादह और कुछ नहीं कहना चाहता कि आप ही अपने ईमान को ग्वाह बना कर फैसला कीजिए कि क़लम के इस तेवर से रसूले अर्बी के वफादारो की दिल आजारी होती है या नही?

ज़िम्नी तौर पर दर्मियान मे यह बात निकल आई थी अब फिर अपने अस्ले मौज़ू की तरफ़ वापस लौटता हूँ।

गंगोही साहब की गैबी क़ुव्वते इदराक का एक हैरत अंगेज वाक़िआ।

हाजी दोस्त मुहम्मद खाँ कोई कोतवाल थे। तजकिरतुर्रशीद के मुसन्निफ़ उनके लड़के के मुतअल्लिक यह वाक़िआ नक़ल करते हैं कि:

> "हाजी दोस्त मुहम्मद खाँ साहब के साहब जादे अब्दुल वहहाब ख़ाँ शख़्स के मोतक़िद हो गए और

बैअत का कस्द किया। वह शख़्स जिस से बैअ़त होना चाहते थे महज सूरत के दुर्वेश थे और वाक़ेअ में पक्के दुनियादार इसलिए दोस्त मुहम्मद ख़ाँ को साहब ज़ादे की यह कजी पसन्द न आई और कई बार मना किया कि उस शख़्स से मुरीद न हो। (तज़किरह जिल्दः २ सफ़ाः २१५)

हजार रोकने के बावजूद अब्दुल वहाब ख़ाँ अपने इरादों से बाज न आया और आख़िर एक दिन मुरीद होने की निय्यत से चल खड़ा हुआ इसके बाद का वाक़िआ सुनने के क़ाबिल है। लिखा है कि:—

आखिर हाजी साहेब ने जब बेटे का इसरार देखा ना ब क्तिजाए मोहब्बत दस्त व दुआ हुए और मुराक़िब होकर हजरते (गगोही) की जानिब मुतवज्जह होकर ख़लवत में जा बैठे। (सफ़ा २१५)

इधर बाप अपने पीर को हाज़िर व नाज़िर तसव्वुर करके मशरूफ़े मुनाजात था और उधर बेटे का क़िस्सा सुनिए। लिखते हैं कि:—

"अब्दुलवहहाब अपने पीर के पास आए और मुअदब दो ज़ानू बैठ गए। बेइख़्तियार पीर की जबान से निकला अव्वल बाप से इजाज़त ले आओ उसके बग़ैर बैअ़त मुफ़ीद नहीं ग़र्ज़ हाथ बैअत कि लिए थाम कर छोड़ दिये और इन्कार फरमा दिया" (सफ़ाः २१६)

अब उसके बाद स्वानेह निगार यह तहल्का खेज़ ब्यान चश्मे हैरत से पढ़ने के क़ाबिल है। लिखते हैं कि:—

"(जो को किसी) की सूरत का ख़्याल बान्धे और यूँ समझे कि जब मैं उसका नाम लेता हूँ ज़बान से या दिल से या उसकी सूरत या उसकी कब्र का ख़्याल बाँधता हूँ वो वहीं उसको ख़बर हो जाती है————

सो इन बातों से मुश्रिक हो जाता है और इस किस्म की बात सब शिर्क है। ख़्वाह यह अकीदा अम्बिया [illegible] औलिया से रखे ख़्वाह पीर व शहीद से ख़्वाह इमाम [illegible] इमाम जादा से ख़्वाह भूत व परी से। ख़्वाह यूँ [illegible] कि यह बात उनको अपनी जात से है ख़्वाह [illegible] के देने से। ग़र्ज इस अकीदे से हर तरह शिर्क [illegible] होता है। (तकवियतुल मान, सफा ८)

[illegible] सिलसिले मे सब से ज्यादा दिलचस्प चीज तो [illegible] अहमद साहेब गंगोही का यह फतवा है जो [illegible] शाए किया गया है कि –

[illegible] ने [illegible] सवाल दर्यापत किया कि तसव्वुर [illegible] औलिया अल्लाह का मुराकिबा मे कैसा है? और [illegible] कि इनका तसव्वुर बाँधते है तो वह हमारे [illegible] मौजूद हो जाते है और हम को मालूम हो जाते [illegible] एतकाद करना कैसा है?

[illegible] ऐसा तसव्वुर दुरूस्त नही अन्देशा शिर्क [illegible] (फतावा रशीदिया, जिल्द १, सफा ८)

[illegible] था यह अकीदा है। और दोनो के दर्मियान जो [illegible] तज़ाद है वह मुहताजे ब्यान नही

अब इसका शिकवा किस से किया जाए कि सही और गलत दुरूस्त और न दुरूस्त को नापने के लिए देवबन्दी हजरात के यह अलग–अलग पैमाने क्यो है? है को हक का हामी? जो हक के साथ इन्साफ करे?

(३)

-:इस बात का इल्म कि कौन कब मरेगा:-

मौलवी आशिक़ इलाही मेरठी ने तज़किरतुर्रशीद में कई ऐसे वाक़िआत नक़ल किए हैं जिन से पता चलता है कि गंगोही साहेब को अपनी और दूसरों की मौत का भी इल्म था कि कौन कब मरेगा। ज़ैल में चन्द वाक़िआत मुलाहिज़ा फरमाए ।

-:पहला वाक़िआ:-

लिखा है कि एक बार नवाब छतारी सख़्त बीमार हुए। यहाँ तक कि सब लोग उनकी जिन्दगी से ना उम्मीद हो गए। हर तरफ से मायूस हो जाने के बाद एक शख़्स को गंगोही साहब कि ख़िदमत मे भेजा गया कि वह नवाब साहेब के लिए दुआ करें। क़ासिद ने वहाँ पहूँच कर उनसे दुआ की दरख़्वास्त की। अब इसके बाद का वाक़िआ खुद स्वानेह निगार की जबानी सुनिए। लिखते है कि--

> "आपने हाज़िरीने जलसा से फरमाया भाई दुआ करो" चूँकि हजरत ने खुद दुआ का वादा नही फरमाया। इसलिए फिक्र हुई और अर्ज किया गया कि हजरत आप दुआ फरमादेंव उस वक्त आपने इर्शाद फरमाया। अम्र मुकद्दर कर दिया गया है और उनकी जिन्दगी के चन्द रोज बाकी हैं। हजरत के इस इर्शाद पर अब किसी अर्ज मारूज की गुंजाईश न रही और नवाब साहेब की हयात से सब को ना उम्मीदी हो गई। (तज़किरतुर्रशीद, जिल्द:२ सफा २०६)

मगर क़ासिद को गंगोही साहेब के "कुन" पर कितना एतमाद था उसका इज़हार करते हुए लिखते हैं.–

"ताहम क़ासिद ने अर्ज़ किया कि हज़रत यूँ दुआ फरमाइए कि नवाब साहेब को होश आजाए और वसिय्यत व इन्तिजामे रियासत के मुतअल्लिक़ जो कुछ कहना सुन्ना हो कह सुन लें। आपने फ़रमाया खैर इस का मुज़ाएक़ा नहीं इस के बाद दुआ फ़रमा और यूँ इर्शाद फरमाया इन्शाअल्लाह इफ़ाक़ा हो जाएगा। (तज़किरा, सफ़ाः २०६)

इसके बाद स्वानेह निगार लिखता हैः–

"चुनाचे ऐसा ही हुआ कि नवाब साहेब को दफ़अतन होश आगया और ऐसा इफ़ाक़ा हुआ कि आफ़ियत व सेहत खुशखबरी की दूर दूर पहूँच गई। किसी को ख्याल भी न रहा कि क्या होने वाला है? अचानक हालत फिर बिगड़ी और मुखय्यर व दरिया दिल नेक नफ्स सखी रईस ने इन्तिक़ाल बा आलम आख़िरत किया। (तज़किरा, सफ़ाः २०६)

देख रह हैं आप। अम्रे इलाही में तसर्रुफ़ व इख़्तियार का आ़लम!! जैसे मुकद्दर के सारे नविशते पेश नज़र हैं यहाँ तक मालूम है कि क्या हो सकता है और क्या नहीं हो सकता। किस अम्र में मुज़ाएक़ा है किसम नहीं। गोया क़ज़ा व क़दर का मुहकमा बिल्कुल अपने घर का कारोबार हो गया हो।

सोचने की बात तो यह है कि एक त़रफ़ तो देवबन्दी उल्मा की नजर में अपने घर के बुज़ुर्गों का मुक़ाम यह है और दूसरी तरफ़ महबूबे किबरिया सल्लल्लाहु तआ़ला अलैहि वसल्लम के हक़ में उनके अक़ीदे की ज़बान यह है।

"सारा कारोबार जहाँ का अल्लाह ही के चाहने से होता है रसूल के चाहने से कुछ नहीं होता। (तकवियतुल इमान, सफ़ा: २२)

अब आप ही इन्साफ़ कीजिये कि एक उम्मती के लिए यह डूब मरने की जा है या नहीं

-:दूसरा वाकिआ:-

मौलवी सादेक [illegible] ल यक़ीन नाम के का [illegible] साहेब मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही के दोस्तों में थे उनके मुतअल्लिक तज़किरतुर्रशीद के मुसन्निफ मौलवी [illegible] इलाही मेरठी यह वाकिआ नक़्ल करते है।

हजरत मौलाना सा[illegible]
अलैहि एक बार सख्त [illegible]
यह खबर सुनकर परेशान [illegible]
किया दुआ फरमा [illegible]
टाल दिया। जब [illegible]
तसल्ली दी और [illegible]
अगर मरेगे तो मेरे बाद।

चुनाचे ऐसा ही [illegible] हासिल हो गई और हजरत के [illegible] व माह शव्वाल हज्जे बैतुल्लाह के [illegible] मुअज्जमा में बीमार हुए मर्ज ही मे [illegible] सफर किया यहाँ तक कि शुरू मुहर्रम मे वासिले बहक़ होकर जन्नतुल मुअल्ला में मदफ़न हुए। (तजकिरा जिल्द २ सफा २०६)

मुलाहिज़ा फरमाइए सिर्फ इतना ही नही मालूम था कि वह अभी नहीं बल्कि यह भी मालूम था कि वह कब मरेंगे वह मेरे बाद मरेंगे इस एक जुम्ले ने दोनों का हाल जाहिर कर दिया

अपना भी और उनका भी। इसे कहते हैं ग़ैब दानी। न जिबर ल का इन्तेजार न खुदा के बताने की एहतेयाज!!

—:तीसरा वाक़िआ:—

मौलवी नजर मुहम्मद खान नामी को शख़्स थे जो गंगोही साहेब के दरबार के हाज़िर बाश थे उनके मुतअ़ल्लिक़ तजकिरतुर्रशीद के मुसन्निफ का यह ब्यान पढ़िये लिखते हैं कि:—

> मौलवी नजर मुहम्मद ख़ाँ ने एक मर्तबा परेशान होकर अर्ज किया हजरत फ़लाँ शख़्स जो वालिद साहेब से अदावत रखता था उनके इन्तेक़ाल के बाद अब मुझ से नाहक़ अदावत रखता है बेसाख़्ता आपकी ज़बान से निकला यह कब तक रहेगा चन्द रोज़ गुजरे थे कि दफ़अतन वह शख़्स इन्तेक़ाल कर गया। (तज़किरा), जिल्द २, सफ़ा: २१४)

चाहे तो यह कहा जाए कि गंगोही साहेब को उसकी ज़िन्दगी के [illegible] मालूम हो गए थे और उन्होंने सवालिया लहजे मे उसे ज़ाहिर कर दिया था फिर यह कहा जाए कि गंगोही साहेब के मुँह से निकलते ही उस ग़रीब की मौत वाजिब हो गई और चार व नाचार उसे मरना पड़ा। दोनों रास्तों में से जो भी रास्ता इख़्तियार किया जाए देवबन्दी मजहब पर शिर्क से छुटकारा मुमकिन नही है।

—:चौथा वाक़िआ:—

अब तक तो दूसरो की मौत के इल्म से मुतअल्लिक़ वाकिआत ब्यान हुए अब खुद मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही का अपना वाकिआ सुनिये। उनका स्वानेह निगार उन्की मौत की असली तारीख़ यूँ नक़ल करता है।

बा इख़्तिलाफ़े रिवायत ८, ६ जुमादियुस्सानी मुताबिक ११ अगसत १६०५ ० को यौमे जुम्आ बाद अजान साढ़े बारह बजे आपने दुनिया को अलवेदा कहा (तज़किरा, सफ़ा: ३३१)

इसके बाद यह ब्याब पढ़िये।

हज़रत इमाम रब्बानी कुद्देसा सिर्रहू को छे रोज पहले से जुम्आ का इन्तेजार था व यौम शम्बा दर्याफ्त फ़रमाया कि आज क्या जुम्आ का दिन है? खुद्दाम ने अर्ज़ किया कि हजरत आज तो शम्बा है उसके बाद दर्मियान में भी कई बार जुम्आ को याद किया। हत्ता कि जुम्आ के दिन जिस रोज विसाल हुआ सुबह के वक्त दर्याफ्त किया कि क्या दिन है? और जब मालूम हुआ कि जुम्आ का दिन है तो फरमाया इन्ना लिल्लाहे व इन्ना इलैहि राजेऊन। (तज़किरा, जिल्द:२ सफ़ा: ३३१)

इस ब्यान से पता चलता है कि छै दिन क़ब्ल ही आप को अपनी मौत का इल्म हो गया था और यह इल्म इतना यकीनी तौर पर था कि जब जुम्आ का दिन आया तो आपने कल्मए तरजी (इन्ना लिल्लाहे—— पढ लिया।

मुलाहिजा फ़रमाईए। एक तरफ़ तो घर के बुजर्गों के लिए इन्तेहा फ़राख़ दिली के साथ यह जजबए एतेराफ़ है और दूसरी तरफ़ उसी मौत के इल्म से मुतअल्लिक अम्बिया व औलिया के हक़ में अक़ीदे की जबान यह है।

इसी तरह जब को अपना हाल नहीं जान सके और जब अपने मरने की जगह नहीं जानता तो और किसी का क्यों जान सके। और जब अपने मरने की जगह नहीं

जानता तो और किसी के मरने की जगह या वक़्त क्यों कर जान सके। (तक़वियतुल ईमान, सफ़ाः २३)

अब आप ही फ़ैसला कीजिए कि मज़कूरा बाला वाक़िआत से क्या यह हक़ीक़त बिल्कुल बेनक़ाब नहीं हो जाती कि शिर्क और इन्कार की यह सारी ताज़ीरात जो देवबन्दी लिटरेचर में फ़ैली हुई हैं सिर्फ़ अम्बिया व औलिया के हक़ में हैं घर के बुज़ुर्गों पर क़तअन उनका इतलाक़ नहीं होता।

4) ग़ैबी क़ुव्वते इदराक का एक अजीब ग़रीब क़िस्साः-

अब तज़किरतुर्रशीद के मुसन्निफ़ की ज़बानी आप उमूरे ग़ैबिया के मुशाहिदए ख़बर से मुतअल्लिक़ गंगोही साहेब का एक हैरत अंगेज़ क़िस्सा सुनिये। मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही के अक़ीदत मन्दों में मीर वाजिद अली क़न्नौजी कोइ शख़्स गुज़रे हैं उन्हीं से यह रिवायत नक़ल की गई है। लिखा है किः—

मीर वाजिद अली क़न्नौजी फ़रमाते हैं कि .मेरे मुर्शिद हज़रत मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहेब ने मुझ से ब्यान फ़रमाया कि मै एक मर्तबा गंगोह गया ख़ानक़ाह में एक कोरा बदना रखा हुआ था मैं ने उसको उठाकर कुआँ से पानी खींचा और उसमें भर कर पिया तो पानी कड़वा था, ज़ुहर की नमाज के वक़्त हज़रत से मिला और यह क़िस्सा भी अर्ज़ किया। आपने फ़रमाया कि कुवें का पानी तो मीठा है, कड़वा नहीं हैं मैंने वह कोरा बदना पेश किया। जिसमें पानी भरा था हज़रत ने भी पानी चखा तो बदस्तूर तल्ख़ था। आपने फ़रमाया अच्छा इसको रख दो। यह फ़रमा कर ज़ुहर की नमाज़ में मशगूल हो गए सलाम फेरने के बाद हज़रत ने नमाज़ियों से फ़रमाया कि कल्मा तय्यिब जिस क़दर जिससे पढ़ा जाए पढ़ो और ख़ुद भी

हज़रत ने पढ़ना शुरू किया। थोड़ी देर बाद हज़रत ने दुआ के लिए हाथ उठाए और निहायत खुज़ू व खुशु के साथ दुआ माँग कर हाथ मुँह पर फेर लिए। उसके बाद बदना उठाकर पानी पिया तो शीरीं था। उस वक़्त मस्जिद में जितने नमाज़ी थे सब ने चखा किसी क़िस्म की तलख़ी और कड़वाहट न थी तब हज़रत ने फ़रमाया कि इस बदने की मिट्टी उस क़ब्र की है जिसे अज़ाब हो रहा था। अलहम्दो लिल्लाह कल्मा की बर्कत से अज़ाब रफ़ा हो गया।(तज़किरह, जिल्दः २ सफ़ाः २१२)

यह वाक़िआ भी आलमे बरज़ख़ के हालाते ग़ैब से ही तअ़ल्लुक़ रखते हैं। अपनी ग़ैबदानी का यक़ीन दिलाने के लिए इतना ही बता देना क्या कम था लेकिन आप ने तो यहाँ तक बता दिया कि इस बदने की मिट्टी उस क़ब्र की है जिस पर अज़ाब हो रहा था और साथ ही यह भी मालूम कर लिया कि अब अज़ाब उठ गया। इसे कहते है मुतलक़ ल एलान ग़ैबदानी की जिधर निगाह उठी मस्तूर हक़ीक़तों के चेहरे खुद ब खुद बेनक़ाब होते चले गए। अपनी ग़ैबदानी का तो यह हाल ब्यान किया जाता है लेकिन सय्यदुल अम्बिया सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के हक़ में यही गंगोही साहेब तहरीर फ़रमाते है। खून नाब आँखों से यह इबारत पढिये।

"यह अक़ीदा रखना कि आप (हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इल्म ग़ैब था सरीह शिर्क है"। (फ़तावए रशीदिया, जिल्द २. सफ़ा १४१)

अब इस खुली हुई बेवफ़ाई का फ़ैसला आप ही के वफ़ा शआरान दिल पर छोड़ता हूँ।

अक़ीदए तौहीद से इन्हिराफ़ का एक इबरत अंगेज़ वाक़िआ

ज़िला जालंधर में मुंशी रहमत अ़ली नाम के कोई साहेब किसी सरकारी स्कूल में मुलाज़िम थे। तज़किरहतुर्रशीद के मुसन्निफ़ ने उनके मुतअ़ल्लिक़ लिखा है कि इब्तिदा में यह साहेब ग़ाली दर्जे के बिदअ़ती थे। उन्हें हज़रत पीराने पीर सय्यद अब्दुल क़ादिर जीलानी क़ द्देसा सिर्रुहू से ग़ायत दर्जा अक़ीदत थी। हाफिज़ मोहम्मद सालेह नाम के एक देवबन्दी मौलवी की ख़िदमत में रह कर कुछ दिनों तक उन्हें इस्तिफादा का मौक़ा मिला जिससे बहुत हद तक उनके अक़ाएद व ख्यालात में तबदीली वाक़े हो गई। अब इसके बाद का वाक़िआ ख़ुद मुसन्निफ़ की जबानी सुनिये लिखते हैं कि:–

"हाफिज मुहम्मद सालेह दामत मजदुहू की शागिर्दी के जमाने मे अकसर .हजरत मौलाना गंगोही कुद्देसा सिर्रुहु के महामिद व मनाकिब उनके कान में पड़ते मगर यह मुतअस्सिर न होते और यूँ ख़्याल किये हुए थे कि जब तक हजरत पीराने पीर रहमतुल्लाह अ़लैहि ख्वाब मे तशरीफ़ लाकर खुद इर्शाद न फरमा देंगे कि फला शख्स से बैअत हो उस वक्त तक बज़ाते खुद किसी से बैअत न करुगा। इसी हालत में एक मुद्दत गुजर गई कि यह अपने ख्याल में जमे रहे।आखिर एक शब हजरत पीराने पीर कुद्देसा सिर्रुहु की ज़ियारत से मुशर्रफ हुए हजरत शेख ने यूं इर्शाद फ़रमाया कि इस जमाने मे मौलाना रशीद अहमद गंगोही को हक़ तआ़ला ने यह इल्म दिया है कि जब कोई हाज़िर होने वाला अस्सलामु अलैकुम कहता है तो आपके इरादे से वाक़िफ़ हो जाते हैं और जो जिकर शुगल उसके मुनासिब होता है वही बतलाते हैं। (तजकिरह, जिल्द: १ सफ़ा: ३१२)

देख लिया आपने? सिर्फ अपने शेख़ की ग़ैब दानी का सिक्का चलाने के लिए हज़रत सय्यदुल औलिया सरकार ग़ौसुल वरा रज़िअल्लाहु तआला अन्हो की ज़बानी एक ऐसे अक़ीदे की तशहीर की जा रही है जो देवबन्दी मज़हब में क़तअन शिर्क है। और तुर्फ़ए तमाशा यह है कि ब्यान का लब व लेहजा तरदीदी भी नहीं है कि इल्ज़ाम अपने सिर से टाल सके।

अब एक तरफ़ यह वाक़िआ नज़र में रखिए और दूसरी तरफ़ तक़विय्यतुल ईमान की यह इबारत पढ़िए तौहीद परस्ती का सारा भरम खुल जाएगा।

> "(जो कोई किसी के मुतअल्लिक यह तसव्वुर करे) कि जो बात मेरे मुँह से निकलती है वह सब सुन लेता है और जो ख़्याल व वहम मेरे दिल मे गुज़रता है वह सब से वाकिफ है सो इन बातों से मुश्रिक हो जाता है और इस किस्म की बातें सब शिर्क है।"
> (तक़विय्यतुल ईमान, सफ़। ८)

दिल पे हाथ रख कर सोचिए कि गंगोही साहेब के अन्दर ग़ैबी कुव्वते इदराक साबित करने के लिए इन हज़रात को शिर्क के कितने मराहिल से गुज़रना पड़ा।

पहला शिर्क यह है कि हुज़ुर ग़ौसुल वरा अगर ग़ैबदान नहीं थे तो उन्हें क्यों कर मालूम हुआ कि हमारा फलाँ मोतक़िद मुरीद होने के लिए हमारी बशारत का मुंतज़िर है और दूसरा शिर्क यह है कि उनके अन्दर यह कुव्वते तसर्रुफ़ भी मान ली गई कि वफ़ात के बाद भी जिस किसी की भी मदद फ़रमाना चाहे फ़रमा सकते हैं। तीसरा शिर्क यह है कि सलाम के बाद अगर गंगोही साहेब के दिल की कैफ़िय्यत उनके पेशे नज़र नहीं थी तो उन्हे किस तरह मालूम हुआ कि मौलवी रशीद अहमद साहेब को हक

तआला ने ऐसा इल्म बख्शा है कि आप सलाम करने के इरादे से भी वाकिफ हो जाते हैं लेकिन यह सारा शिर्क सिर्फ इसलिए गवारा कर लिया गया कि अपने मौलाना की अज़मत व बुजुर्गी के लिए इस वाकिआ को दस्तावेज बनाना मकसूद था वर्ना जहाँ तक मानने का तअल्लुक है यह हजरात सरकारे गौसुल वरा रजिअल्लाहो तआला अन्हो के हक में इस तरह की गैबी कुव्वते इदराक के हरगिज़ काएल नहीं हैं बल्कि इसके इस्बात(मानने) को शिर्क करार देते हैं जैसा कि यही गंगोही साहेब निदाए या शेख अब्दुल कादिर जीलानी शैअन लिल्लाही (यानी ए शेख अब्दुल कादिर जीलानी खुदा के लिए कुछ अता कीजिए) के मुतअल्लिक तहरीर फरमाते है।

> इस कलाम का पढना किसी वजह से जाएज नही, अगर शैख कुद्देसा सिर्रुहू को आलेमुल गैब मुतसर्रिफ मुस्तकिल जान कर कहता है तो खुद शिर्क महज़ है और जो यह अकीदा नहीं तो नाजाएज़ है। (?) क्योंकि इस सूरत मे गो यह निदा शिर्क न हुआ लेकिन मुशाबेह शिर्क है। (फतावए रशीदिया, जिल्द: १, सफा ५)

ज़रा मुलाहिज़ा फरमाइए कि यहाँ सरकारे गौसुल आज़म के रूहानी तसर्रुफ और गैबी कुव्वते इदराक के सवाल पर कितने एहतिमालात पैदा कर दिए गये और कैसी बाल की खाल निकाली गई। लेकिन अपनी अजमत व बुजुर्गी की बात आ गई तो अब उन्हीं सरकारे गौसुल वरा के इल्म व इख्तियार पर कोई शुबहा वारिद (शक) नहीं किया गया।

(६)

गंगोही साहेब के एक मुरीद पर मुसीबात का

इन्किशाफ़:-

तज़किरतुर्रशीद के मुसन्निफ़ गंगोही साहेब के एक मुरीद का हाल ब्यान करते हुए लिखते हैं कि:-

> "एक शख़्स बज़रियए ख़त आप से बैअ़त हुए और तहरीरी तालीम पर ज़िक्र में मश्गूल हुए। चन्द रोज़ में उन पर यह कैफ़िय्यत तारी हुई कि औलियाए सलासिल की अरवाहे तय्यिबात से लिक़ा हासिल हुई और फिर यकेबाद दीगरे अम्बिया अलैहिस्सलाम की पाक रूहों से मुलाक़ात हुई। रफ़ता रफ़ता यूँ महसूस होता था कि सर से लेकर कदम तक रग रग बाल बाल में अरवाहे तय्यबात से वाबस्तदगी है। इसी हालत में एक दिन मदहोशी और सकर का आ़लम पैदा होता जिस में मुग़ीबात का इन्किशाफ़ और मजलिसे सरवरे आलम सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम की दरबानी का एजाज हासिल होता। (तज़किरा जिल्दः २, सफाः १२३)

अब फ़िकर व दानिश के इस अफ़लास का शिकवह किस से किया जाए कि दरबान का तो यह हाल जाहिर किया जाता है कि आलमे ग़ैब का कोई परदा उसकी निगाह पर हाएल नहीं है। बिल्कुल पड़ोस में रहने वाले दोस्तों की तरह अम्बिया व औलिया की रूहों से मुलाकात का सिलसिला जारी है। बरज़ख़ ग़ैब के असरार पैकरे महसूस की तरह पेशे नजर है लेकिन आक़ा के बारे में अक़ीदे की ज़बान क्या है जरा उसे भी मुलाहिज़ा फरमाइए।

> "किसी अम्बिया व औलिया या इमाम व शहीद की जनाब में हरगिज़ यह अक़ीदा न रखे कि वह ग़ैब की बात जानते हैं बल्कि हज़रत पैग़म्बर की जनाब में भी यह

अकीदा न रखे और न उनकी तारीफ़ में ऐसी बात कहे।
(तक़वियतुल ईमान, सफ़ाः २६)

(७)

अक़ीदे से तसादुम का एक अजीब वाक़िआः-

हाजी दोस्त मुहम्मद खाँ मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही के एक निहायत मुख्लिस ख़ादिम थे। एक बार उनकी अहलिया की तबइय्यत सख्त खराब हो गई। अब उसके बाद का वाक़िआ खुद तज़किरतुर्रशीद के मुसन्निफ़ की जबानी सुनिये। अलालत (बीमारी) की संगीनी का हाल बयान करते हुए लिखते हैं किः-

"हाथ पाँव की नबजें छूट गईं। गशी तारी हो गई और तमाम जिस्म ठंडा हो गया। हाजी साहेब को अहलिया के साथ मुहब्बत ज्यादा थी बेकरार हो गए पास आकर देखा तो हालत गैर थी सिर्फ सीने में साँस चलता हुआ महसूस होता था ज़िन्दगी से मायूस हो गए रोने लगे और सिरहाने बैठ कर यासीन शरीफ़ पढ़नी शुरू कर दी चन्द लम्हे गुजरे थे कि दफ़अतन मरीज़ा ने आँखें खोल दीं और एक लम्बा साँस लेकर फिर आँख बन्द करली सब ने समझ लिया कि अब वक्त आखिर है। हाजी दोस्त मुहम्मद खाँ इस हसरत नाक नज्जारा को देख न सके बे इख्तियार वहाँ से उठे और मुराकिब होकर हज़रत इमाम रब्बानी की तरफ़ मुतवज्जह हुए कि वक़्त आ गया हो तो ख़ातिमा बिलखैर हो और ज़िन्दगी बाकी है तो यह तकलीफ जो मुतवातिर तीन दिन से हो रही है रफ़ा हो जाए।मुराकिबा करना था कि मरीज़ा ने आँखें खोलदी और बातें करनी

शुरू कर दी नबज़े ठिकानें आ लगीं और इफ़ाक़ा हुआ। दो तीन दिन में कुव्वतें भी आ गई और बिल्कुल तंदरुस्त हो गई। (तज़किरा, जिल्दः २ सफ़ाः ३२१)

इस वाक़िआ के बाद स्वानेह निगार का यह ज़लज़ला खेज ब्यान पढ़िये और दरयाए हैरत में गोता लगाईए। लिखे हैं कि:-

"हाजी साहेब मरहूम फरमाते थे कि जिस वक्त मुराक़िब हुआ हज़रत को अपने सामने पाया। और फिर तो यह हाल हुआ कि जिस तरफ निगाह करता हज़रत इमामे रब्बानी को बहैअत असलिया मौजूद देखता था। तीन शबाना व रोज़ यही हालत रही। (तज़किरा, जिल्दः २,सफ़ाः २२१)

निगाह पर बार न हो तो उसी के साथ जरा खुद गंगोही साहब का यह फतवा भी पढ़ लीजिए।

"किसी ने यह सवाल दरयाफ़्त किया कि तसव्वुर करना औलियाअल्लाह का मुराक़िबा मे कैसा है? और यह जानना कि जब हम उनका तसव्वुर बांधते है तो वह हमारे पास मौजूद हो जाते और हम को मालूम हो जाते हैं ऐसा एतक़ाद करना कैसा है?
अलजवाबः-ऐसा तसव्वुर दुरुस्त नहीं। इस में अन्देशा शिर्क का है।(फ़तावए रशीदिया, जिल्द १, सफा ८)

इस मुक़ाम पर इस से ज़्यादा और हमे कुछ नही कहना है कि औलिया अल्लाह के बारे में यह अक़ीदा है और अपने शैख के बारे में वह वाक़िआ।

एक ही बात एक ही जगह शिर्क है और दूसरी जगह क़ाबिले तहसीन वाक़िआ! जाविए निगाह के इस फ़र्क की माक़ूल वजह क्या हो सकती है अगर इन्साफ़ का जजबा

शरीक हाल हो तो ख़ुद ही फैसला कीजिए।

फिर देवबन्दी अक़ीदे की बुनियाद पर यह सवाल भी अपनी जगह पर कि आख़िर एक ही शख़्स को हर तरफ अस्ली शक्ल व सूरत में देखना क्यों कर मुमकिन है? लेकिन तौहीद के इजारा दारो को मुबारक हो कि यह ना मुमकिन भी उन्होंने अपने मौलाना के लिए मुमकिन ही नहीं बल्कि अमरे वाक़िआ बना लिया।

अब लगे हाथो उसी के साथ उन्हीं गंगोही साहेब का वाक़िआ और सुन लीजिए। यही तज़किरतुर्रशीद के मुसन्निफ़ मौलवी आशिक इलाही मेरठी कस्बा नगीना के मौलवी महमूद हसन नामी किसी शख़्स से रिवायत करते हुए लिखते हैं कि:-

> 'मौलवी महमूद हसन साहेब नगीनवी फरमाते हैं कि मेरी खुश दामन साहिबा जो अपने वालिद के हमराह मक्का मुअज़्ज़मा में बारह साल तक मुक़ीम रही निहायत पारसा और आबिदा, ज़ाहिदा थी। सैकड़ों अहादीस भी उनको हिफ्ज थीं।
>
> उन्हो ने मुझ से फ़रमाया कि बेटा! हज़रत (गंगोही) के बहुत शागिर्द हैं मगर किसी ने हज़रत को नही पहचाना। जिन अय्याम में मेरा क़याम मक्कए मुअज़्ज़मा में था रोजाना मैंने सुबह की नमाज़ हज़रत को हरम शरीफ़ में पढ़ते देखा और लोगों से सुना भी कि यह हज़रत मौलाना रशीद अहमद गंगोही हैं। गगोह से तश्रीफ़ लाया करते हैं। (तज़किरा, जिल्द:२, सफा: २१२)

रोजाना का लफ़्ज़ बता रहा है कि किसी दिन भी वह सुबह की नमाज़ हरम शरीफ़ में नागा नहीं करते थे और उनकी मुद्दते क़याम के मुताबिक यह सिलसिला बारह साल तक जारी रहा।

इख़्तिलाफ़ मुतालेअ की बुनियाद पर अगर हिन्दुस्तान और मक्का के वक़्त में चन्द घंटों का फ़र्क़ भी मान लिया जाए जब भी २४ घंटों में से किसी न किसी वक़्त मुअय्यन पर हरम शरीफ़ में पहुँचने के लिए उनका घर से ग़ायब होना अज बस ज़रूरी रहा था लेकिन मुशिकल यह है कि उन्ही मौलवी आशिक इलाही ने अपनी इसी किताब में उनके मामूलात शबाना रोज़ का जो गोशवारा पेश किया है उसमें उन्हें चौबीस घंटे गंगोह में मौजूद दिखलाया है।

फिर बारह साल तक रोज़ाना एक वक़्त मोकर्ररह पर अपने घर से ग़ाएब हो जाना और फिर वापिस लौट आना ऐसी चीज़ नहीं थी जो लोगों से छुपी रह जाती और उसकी शोहरत न होती।

इसलिए लामोहाला तसलीम करना पडेगा कि वह एक ही वक़्त मक्के में भी मौजूद होते थे और गंगोह मे भी हाजिर रहते थे। अब हाजी दोस्त मुहम्मद खाँ का वह मुशाहिदा जो अभी गुज़रा और देवबन्द की पारसा ख़ातून की यह रिवायत दोनों नज़र में रखिए तो वाज़ेह तौर पर साबित हो जाता है कि मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही एक ही वक्त में कई जगह मौजूद हैं लेकिन यह सुनकर आप शश्दर रह जाऐंगे कि जिस वस्फ़े कमाल को देवबन्दी हज़रात अपने पीरे मुगां के लिए वाकेअ मान रहे हैं उसे रसूले अनवर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लिए मुमकिन भी नहीं तस्लीम करते।

चुनान्चे महफ़िले मीलाद में हुज़ रे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तशरीफ़ आवरी के इमकान पर बहस पेश करते हुए देवबन्दी मज़हब के पेशवा मौलवी अशरफ़ अली थानवी लिखते हैं:-

"अगर एक ही वक्त में कई जगह मुंअकि़द हो तो आया सब जगह तशरीफ ले जावेंगे या कहीं? यह तो तरजीह बिला मुरज्जह है कि कहीं जावें कहीं न जावें और अगर सब जगह जावें तो वजूद आपका वाहिद (एक) है। हजारो जगह किस तौर पर जा सकते हैं।?
(फतावए इम्दादिया, जिल्दः २, सफाः ५८)

जेहन की क व्वते फैसला अगर किसी गै़र की मुट्ठी में रेहन नहीं है तो अपने रसूल के जजबए अकीदत के साथ इन्साफ कीजिए और इसी आइने मे उन सारे इख़्तिलाफ़ात की नौइय्यत भी पढ लीजिए जो अहले सुन्नत और देवबन्दी हज़रात के दरमियान निस्फ सदी से जारी है।

(7)

गुजिश्ता वाकिआत का इल्मः-

मौलवी आशिक इलाही मेरठी ने अपनी किताब मे ऐसे मुतअद्दिद वाकिआत नकल किये हैं जिन से पता चलता है कि मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही को गैबी तौर पर बगै़र किसी की इत्तिला के गुजारे हुए वाकिआत की भी ख़बर हो जाती थी। चुनान्चे नमूने के तौर पर जेल मे एक वाकिआ मुलाहिज़ा फरमाईए।

मुशी निसार अली और गौहर खाँ नाम के दो शख्स अग्रेजों की पलटन में मुलाजिम थे उनके मुतअल्लिक यह वाकिआ ब्यान करते हैं:—

(८)

"मुशी निसार अली और गौहर अली खाँ मुलाज़िम पलटन नम्बर ६५ रूख्सत लेकर ब इरादा बैअत लखनऊ से गंगोह रवाना होने को तय्यार हुए। दरवाज़े

पर सवारी तक आखड़ी हुई। इत्तिफ़ाक़ से किसी हाकिम की आमद का तार आया और ऐन वक़्त पर उनको अफसर के हुक्म से रुकना पड़ा।

दस दिन के बाद फ़ारिग़ होकर गंगोह पहुँचे तो हज़रत ने साफ़ इर्शाद फ़रमाया कि तुम दोनों साहेब फलाँ रोज़ रवाना होना चाहते थे मगर रोक लिए गए।

और जब खाना दसतरख़्वान पर आया तो कहने लगे कि आप के साथ दो टट्टू भी तो हैं आख़िर वह भी मेरे मेहमान हैं अव्वल उनको घास दाना पहुँचाना चाहिए हालाँकि दोनों टट्टूओं पर सवार होकर आने की इत्तिला आपको किसी आदमी ने नहीं दी थी''

(तज़किरा, जिल्दः २ सफाः २३४)

यह इज़ाफा कि हालाँकि दोनो टट्टूओं पर सवार होकर आने की इत्तिला आपको किसी ने नहीं दी थी''। सिर्फ इसीलिए किया गया है कि ख़ूब अच्छी तरह जाहिर हो जाए कि यह गैब की ख़बर थी और किसी तरह यह शुबहा नहीं किया जाए कि किसी ने उनको इत्तिला कर दी होगी।

(६)

आइन्दा वाक़िआत का इल्मः

अब आइन्दा (यानी कल) और उसके बाद के इल्म से मुतअ़ल्लिक़ वाक़िआत का सिलसिला मुलाहिजा फरमाइए।

-:पहला वाक़िआ:-

मौलवी सादेक़ ल यक़ीन नाम के कोई साहेब थे उनके बाप सुन्नी थे लेकिन वह देवबन्दी उल्मा के ज़ेरे असर रहकर बदअक़ीदा हो गए थे जिस के सबब से उनके बाप अकसर नाराज़ रहा करते थे। जब बाप बेटे के दरमियान कशीदगी बहुत

ज्यादा बढ गई तो मौलवी सादेक़ ल यक़ीन गंगोह चले गए अब इसके बाद का वाक़िआ खुद मौलवी आशिक़ इलाही मेरठी की ज़बानी सुनिए लिखा है कि:-

> "गगोह आने को तो आ गए मगर वालिद साहेब की नाराजगी का अकसर ख्याल आता था (एक दिन हज़रत की ख़िदमत मे हाजिर थे। यकायक हज़रत ने उनसे इर्शाद फरमाया कि मैंने तुम्हारे वालिद की तरफ़ ख्याल किया था उनके क़ल्ब मे तुम्हारी मुहब्बत जोश मार रही थी और यह खफगी सिर्फ़ ज़ाहेरी है उम्मीद है कल परसो तक तुम्हारे बुलाने को उनका ख़त भी आजाए चुनान्चे दूसरे ही दिन शाह साहेब का ख़त आया।" (तज़किरा, जिलद: २, सफा: २२०)

गैबदानी की यह शान क़ाबिले दीदनी है कि कल की भी ख़बर दे दी और सैकड़ो मील की मुसाफ़त से दिल के मख्फ़ी हाल का भी मुशाहेदा फरमा लिया। न क़ुर्आन की कोई आयत इस दावे पर असर अन्दाज़ हुई और न अकीदए तौहीद को कोई ठेस पहुँची।

-: दूसरा वाक़िआ: -

सूफ़ी करम हुसैन नाम के कोई साहेब थे जो मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही की ख़ानक़ाह के हाज़िरे बाश थे उनके मुतअल्लिक़ तजकिरतुर्रशीद के मुसन्निफ यह वाकिआ नक़्ल करते है कि -

> "सूफी करम हुसैन साहेब एक मर्तबा बीमार हुए चन्द रोज के बाद सेहत होगई। उनके मकान से तलबी का खत पहुँचा तो उन्हों ने रवानगी का क़सद किया हज़रत से जब रुख़सत होने लगे तो ख़िलाफ़े

हज़रत फ़रमाने लगे करम हुसैन कल को मत जाओ तीन रोज़ के बाद जाना। इरादा का फ़स्ख़ तबअ को गिरॉं तो हुआ मगर ठहर गए अगले दिन दफ़अतन तप व लरज़ा आया और वह भी इस शिद्दत के साथ कि इशा के वक़्त तक उठ ही न सके। उस वक़्त ख़्याल हुआ कि आज रास्ता में होते तो क्या मज़ा आता। तज़किरा, जिल्दः २, सफ़ा २२६)

यानी गंगोही साहेब को मालूम था कि कल बुख़ार आएगा।

-:तीसरा वाक़िआः-

तज़किरतुर्रशीद के मुसन्निफ़ ने मौलवी मुहम्मद यासीन नाम के एक शख़्स के मुतअ़ल्लिक़ जो मदरसए देवबन्द में मुदर्रिस थे लिखा है कि वह एक बार गंगोह हाज़िर हुए उन्हें देवबन्द वापिस जाना था वापसी की इजाज़त तलब करने के लिए वह दोपहर के वक़्त मौलवी रशीद अहम साहिब के पास गए और उनसे इजाज़त तलब की। लेकिन बेहद इसरार के बावजूद उन्होंने वापिस होने की इजाज़त नही दी जब कोई उज्र कारगर नहीं हुआ तो आख़िर में उन्होने कहा कि –

"कल को बन्दा का मदरसा मे हाज़िर होना ज़रूरी है हज़रत ने फ़रमाया कि मदरसा के हर्ज का तो मुझे भी बहुत ख़्याल है लेकिन तुम्हारी तकलीफ़ की वजह से कहता हूँ कि नाहक़ रास्ते में मारे मारे फिरोगे सख़्त तकलीफ़ उठाओगे बावजूद हज़रत के बार बार इस फ़रमाने के हमें मुतलक़ ख़्याल न हुआ कि शेख़ हर चे गोयद दीदह गोयद (यानी शेख़ जो कुछ कहता है देख कर कहता है।) अपनी ही कहे गए। (तज़किरा, जिल्दः२, सफ़ाः १२२)

इसके बाद उन्होंने अपनी रवानगी और रास्ते की परेशानियों और रात भर मारे मारे फिरने की तफ़सील ब्यान की है।

यहाँ सोचने की बात है कि शेख़ हर चे गोयद दीदह गोयद का जो अक़ीदा देवबन्दी हज़रात अपने बुज़ुर्गों के लिए रवा रखते हैं वही सय्यदुल अम्बिया सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के हक़ में शिर्क अज़ीम समझते हैं।

-: चौथा वाक़िआ: -

अरवाहे सलासा नामी किताब के वाक़िआत का एक रावी अमीर शाह ख़ाँ गंगोही साहेब के सफ़र हज का ज़िक्र किया है लिखते है कि उनका जहाज़ जब जद्दह पहुँचा तो वहाँ के अफ़सरों ने उतरने की इजाजत नहीं दी। और करनतीना के लिए उन्हे कामरान वापिस जाने का हुक्म दिया। उसके बाद उन ही की ज़बानी पूरा वाक़िआ सुनिए। लिखा है कि:–

"थोड़ी देर में एक अरब साहेब तशरीफ़ लाए और उन्होंने कहा गोदी के अफ़सर रिश्वत खोर है और कुछ लेने के लिए हुज्जाज को रोक रहे है तुम जल्दी कुछ चन्दा कर दो उन्हें दिला कर राजी कर लूँगा।

> जब यह ख़बर मौलाना (गंगोही) को पहुँची तो आपने फ़रमाया कि यह शख़्स बिल्कुल झूठा है कोई उसे कुछ न दे। हम को कामरान वापिस होना नहीं पड़ेगा, हम यहीं उतरेंगे। चुनान्चे दूसरे रोज़ यह हुक्म हो गया कि हाजियों को उतर जाना चाहिए। (अरवाहे सलासा, स २८६)

कई सफ़हों पर फैला हुआ आप गंगोही साहेब की जबान से कल की ख़बरों का सिलसिला पढ़ चुके उनके मुतअ़ल्लिक़ इस ग़ैबी इल्म के मुज़ाहिरे पर आज तक कोई मोतरिज़ न हुआ कि ग़ैरुल्लाह के हक़ में इस किस्म का एतक़ाद क़ुरआन के

खिलाफ़ है लेकिन बुरा हो तंगिए दिल का कि यही कल के इल्म व ख़बर का सवाल जब महबूबे किबरिया सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम के लिए पैदा होता है तो हर देवबन्दी फ़ाज़िल की ज़बान पर क़ुरआन की यह आयत होती है (वमा तदरी नफ्सुन माज़ा तक्सिबु ग़दन) कोई जानदार नहीं जानता कि वह कल क्या करेगा।

इस किताब का दूसरा बाब जो मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही के वाक़िआत व हालात पर मुश्तमिल था यहाँ पहुँच कर तमाम होगया

जिस तस्वीर का पहला रुख़ किताब के इब्तिदाई हिस्सा में आपकी नज़र से गुज़र चुका है यह उसका दूसरा रुख था। अब चन्द लम्हे की फ़ुर्सत निकाल कर ज़रा दोनों का मुवाज़ना कीजिए और इन्साफ़ व दियानत के साथ फ़ैसला कीजिए कि तस्वीर के पहले रुख़ में जिन अक़ाएद व मसाइल को इन हज़रात ने शिर्क क़रार दिया था जब उन्ही अक़ाएद व मसाएल को इन्हों ने अपने हक़ में क़ बूल कर लिया तो अब किस मुँह से वह अपने आप को मुवहहिद और दूसरो को मुश्रिक क़रार देते हैं। अब किताब का वर्क़ उलटिये और तीसरा बाब पढ़िये

तीसरा बाब

देवबन्दी जमाअत के मज़हबी व पेश्वा जनाब मौलवी अश्रफ अली थानवी के ब्यान में

इस बाब मे ज़नाब मौलवी अश्रफ़ अ़ली साहेब थानवी के मुतअ़ल्लिक़ देवबन्दी लिटेरचर से ऐसे वाक़आत व हक़ाइक़ पेश किए गये हैं जिनमें अकीदए तौहीद से तसादुम अपने मज़हब से इन्हिराफ़ और मुँह बोले शिर्क को अपने हक़ में इस्लाम व ईमान बना लेने की इबरत अंगेज मिसाल वर्क़ वर्क़ पर बिखरी हुई है।

उन्हे चश्मे हैरत से पढ़िये और वफ़ा आश्ना जमीर का फैसला सुनने के लिए गोश बर - आवाज़ रहिए।

सिलसिलए वाकिआत

थानवी साहेब के हक़ में ग़ैब दानी का साफ़ व सरीह दावा:-

थानवी साहेब के खलीफ़ए ख़ास मौलवी अब्दुल माजिद साहेब दरिया बादी ने अपनी किताब 'हकीमुल उम्मत' में उनकी एक मज्लिस का हाल लिखते हुए अपने जिन तअस्सुरात का इज़्हार किया है वह देवबन्दी मज़हब की तरफ़ से हुसने ज़न रखने वालों को चौका देने के लिए काफी है लिखते है कि –

> "बाज़ बुजुर्गो के हालात हजरत ने अपनी जबान से इस तरह इर्शाद फरमाए कि गोया 'दर्स हदीसे दिगरां' बेऐनही हम लोगो के जजबात व ख्यालात की तर्जुमानी हो रही है। दिल ने कहा कि देखो रोशन ज़मीर है न सारे हमारे मख्फियात उन पर आइना होते जा रहे हैं।साहबे कश्फ व करामात उन से बढ़ कर कौन होगा।
>
> (चन्द सतरों के बाद) खैर इस वक्त तो गहरा असर इस गैबदानी और कश्फे सदर का लेकर उठा मजालिस बरख़स्त हुई।" (हकीमुल उम्मत: २४)

आख़िर का यह जुमला दो बारा पढ़िये। यहाँ बात एक दम खुल कर सामने आ गई है। मजाज व इस्तिआरा के इब्हाम से हट कर बिल्कुल सराहत के साथ (इशारे से हट कर साफ़ लफ़्ज़ों मे) थानवी साहेब के हक में 'गैबदानी' का लफ्ज इस्तेमाल किया गया हालाँकि यही वह लफ़्ज है जिस पर पचास बरस से यह हज़रात जंग करते आ रहे हैं कि लफ्ज का इतलाक रसूले अकरम सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम की जात पर कतअन कुफ्र और शिर्क है जैसा कि देवबन्दी जमाअत के मुसतनद इमाम

मौलवी अब्दुल शकूर साहेब काकौरवी अपनी किताब में तहरीर फ़रमाते हैं:—

> "हम यह नहीं कहते कि हुज़ूर गैब जानते थे। या गैबदान थे बल्कि यह कहते हैं कि हुज़ूर को ग़ैब की बातों पर इत्तिला दी गई फोकहाए हंफ़िया कुफ़्र का इतलाक उसी ग़ैबदानी पर करते है न कि इत्तेला याबी पर। (फतह हक्कानी सफा २५)

देख रहे है आप। इन हजरात के नज़दीक फ़िकहाए हंफिया कुफ़्र का इतलाक जिस गैब दानी पर करते है वोह एकरारी कुफ़्र अपने थानवी साहब के हक में कितनी बशाशत के साथ कुबूल कर लिया गया है। थानवी साहब की गैबदानी के सवाल पर न इस्लाम की कोई दीवार मुन्हदिम हुई और न कुर्आन के साथ किसी तरह का तसादुम लाज़िम आया है।

अब यहीं से समझ लिजिये कि इन हजरात की किताबों में कुफ़्र व शिर्क के जो मबाहिस सैकड़ों सफहात पर फैले हुए हैं इस के पीछे असल मुदआ क्या है? तौहीद परस्ती का जज़बा अगर खुलूस पर मबनी होता तो कुफ़्र व शिर्क के सवाल पर अपने और बेगाने की यह तफरीक हरगिज़ रवा न रखी जाती।

(2)

ब यक वक्त मुतअद्दिद मुकामात पर थानवी साहब की मौजूदगी का एक हैरत अंगेज वाकिआ:-

ख्वाजा अजीज ल हसन साहब ने अशरफुस्सवानेह के नाम से तीन जिल्दो मे थानवी साहब की सवानेह हयात लिखी है। जो खानकाहे इमदादिया थाना भवन जिला मुज़फ्फर नगर से शाए की गई है। उन्हों ने अपनी किताब में थानवी साहब की एक अजीब व गरीब वाकिआ नकल किया है। लिखते हैं कि:—

अर्साए दराज़ हुआ एक साहब ने खुद अहकर से यही खानकाह में कई उनवान अपना वाकिआ बयान किया कि गो देखने में तो हज़रत वाला यहा बैठे हुए है लेकिन क्या खबर इस वक़्त कहां पर हों क्यू कि मैं एक बार खुद हज़रत वाला को बावजूद कि थाना भवन में होने के अलीगढ़ में देख चुका हूं जब कि वहा नुमाईश थी और उसके अन्दर सख्त आग लगी थी।

मैं भी इस नुमाईश में अपनी दुकान लेकर गया था जिस रोज आग लगने वाल थी उस रोज खिलाफे मामूल असर ही के वक़्त से मेरे कल्ब के अन्दर एक वहशत सी पैदा होने लगी थी जिस का यह असर हुआ कि बावजूद उसके कि अस्ले बिक्री का वक्त यही था लेकिन मैं ने अपनी दुकान का सारा साजो समान कबले अज वक़्त ही समेट कर बक्सों मे भरना शुरू कर दिया। जब बाद मगरिब आग लगने का शोर व गुल हुआ तो चूकि मैं अकेला ही था और बक्स भी भारी थे इस लिये मैं सख़्त परेशान हुआ कि या अल्लाह। दुकान से बाहर क्यूं कर ले जाऊ।

इतने में क्या देखता हूं दफअतन हजरत वाला नमूदार हुए और बक्सों में से एक एक बक्स के पास तशरीफ़ ले जाकर फ़रमाया कि जल्दी से उठाओ! चुनान्चे एक तरफ से तो उस बक्स को खुद उठाया और दूसरी तरफ़ मैंने उठाया। इसी तरह थोडी देर मे एक एक के सारे बक्स बाहर रखवा दिये उस आग से और दुकानदारों का तो बहुत नुकसान हुआ लेकिन बफ़ज़लेही तआला. मेरा सब सामान बच गया।

इस वाकिआ को सुन कर अहकर (यानी मुसन्निफ

> किताब) ने उन से पूछा कि आप कहां? इस पर उन्हों ने कहा कि अजी पूछने पूछने का मुझको इस वक्त होश ही कहा था। मैं तो अपनी परेशानी में मुबतिला था।(अशरफुस्सवानेह जिल्द ३ सफहा ७१)

हरान व शशदर न रह गए हों तो यह किस्सा एक बार और पढ़िये। शख्से वाहिद का कई जगह पर होने का जिकर यहां बिल्कुल सराहत के साथ है। कहीं से भी इस्तिआरात व केनायात का कोई इबहाम नहीं है। यहीं वह मंजिल है जहां फिर जी चाहता है कि महफिले मीलाद में हुजूर अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तशरीफ आवरी के इमकान पर थानवी साहब का वह सवाल दोहराऊँ।

> अगर एक वक्त में कई जगह महफिल मुअकिद हो तो सब जगह तशरीफ ले जावें गे या कहीं? यह तो तर्जीह बिला मुरज्जह है कि कहीं न जावें और अगर सब जगह जावें तो वजूद आपका वाहिद है हजार जगह कैसे तौर पर जा सकते हैं। (फतावए इमदादिया, जिल्द ४ सफा ५८)

किस तौर जासकते हैं? अब इस सवाल का जवाब देने की जरूरत बाकी नहीं है। वैसे हम इस बात के मुद्दई भी नहीं कि वह हर महफिल में तशरीफ ले जाते हैं। अलबत्ता कोई भी गैर जानिबदार शख्स थानवी साहब के इस वाकिआ के जिम्न में इन सवालात का सामना किये बगैर नहीं रह सकता जो अचानक जहन की सतह पर उभर आते हैं।

पहला सवाल-तो यही है कि देवबन्दी हज़रात के यहाँ सेहत व गलत के जाँचने का पैमाना अलग अलग क्यों है। बात अगर गलत है तो हर जगह गलत होनी चाहिए और अगर सही है तो

दूसरों के हक़ में भी इसकी सेहत क्यों नहीं तस्लीम की जाती। ऐसा क्यों है कि एक ही बात रसूले कौनेन सल्लल्लाहो अ़लैहि व सल्लम के हक़ में तो कुफ़्र है शिर्क है ना मुमकिन है लेकिन अपने घर के बुज़ुर्गों के हक़ में इस्लाम है मान है और अमरे वाकेआ है।

दूसरा सवाल यह है कि थाना भवन में मौजूद रहकर अलीगढ़ में पेश आने वाले हादसे को क़ब्लअज़ वक़्त मालूम कर लेना क्या ग़ैबी इदराक की वही कुव्वत नहीं है जिसका पैगम्बरे आज़म सल्लल्लाहो अ़लैहि वसल्लम के हक़ में देवबन्दी हज़रात मुसलसल इन्कार करते चले आ रहे हैं और इसी इन्कार की बुनियाद पर वह अपनी जमाअ़त को 'मुवहहेदीन' की जमाअत कहते हैं।

तीसरा सवाल यह पैदा होता है कि चश्मे ज़दन में एक मुक़ाम से दूसरे मुक़ाम पर पहुँच कर किसी मुसीबत ज़दा की मदद करना क्या देवबन्दी मज़हब की ज़बान में यह खुदा इख़्तियारात की चीज़ नहीं है?

और फिर जिस क़ुदरत व इख़्तियार और इल्म व इन्किशाफ़ का वह सय्यदुल अम्बिया सल्लल्लाहो अ़लैहि वसल्लम तक के हक़ में शिद्दत से इन्कार करते आ रहे हैं तअ़ज्जुब है कि उसको अपने हक़ में साबित करते हुए उन्हें ज़रा भी अ़क़ीदए तौहीद के तक़ाज़ों से इन्हिराफ़ नज़र नहीं आया। इन सवालात के जवाबात के लिए मैं आप ही के ज़मीर का इन्साफ़ चाहूँगा।

(३)

एक और इबरत अंगेज कहानी: -

तौहीद परस्ती के गुरूर में खुश अ़क़ीदा मुसलमानों को बेदरेग़ मुशरिक बिदअ़ती और क़ब्र परस्त कहने वालों की एक और इबरत खेज़ कहानी सुनिए।

उन्ही मौलवी अशरफ़ अली साहब थानवी के सवानेह निगार अशरफुस्सवानेह में थानवी साहेब के परदादा मुहम्मद फरीद साहेब की वफात का तजकिरा करते हुए लिखता है कि:-

"किसी बारात में तशरीफ ले जा रहे थे कि डाकुओं ने आकर बारात पर हमला किया उनके पास तीर व कमान भी थे उन्होने इन डाकुओं पर दिलेराना तीर बरसाना शुरू किये। चूँकि डाकुओं की तादाद कसीर थी और इधर से बेसर व सामानी थी यह मुकाबले में शहीद हो गये। (अशरफुस्सवानह, जिल्द १, सफा: १२)

इसके बाद का किस्सा चश्मे हेरत से पढ़ने के काबिल है लिखा है कि:-

'शहादत के बाद एक अजीब वाकिआ हुआ' रात के वक्त अपने घर मिसले जिन्दा के तशरीफ लाए और अपने घर वालों को मिठा लाकर दी और फरमाया कि अगर तुम किसी से जाहिर न करोगी तो इसतरह से रोज आया कर गे। लेकिन उनके घर के लोगों को यह अन्देशा हुआ कि घर वाले जब बच्चों को मिठा खाते देख गे तो मालूम नही क्या शुब्हा कर गे इस लिए जाहिर कर दिया और आप तशरीफ नहीं लाए यह वाकिआ खानदान म मशहूर है। (अशरफ स्सवानेह, जिल्द: १, सफा: १२)

अल्लाहु अकबर! हम अगर मुरसलीन व अम्बिया शोहदाए मुकर्रेबीन औलियाए कामेलीन की सिर्फ रूहों के बारे में यह अकीदा रख लें कि खुदा न कदीर में उन्हें आलमे बरज़ख में जिन्दों की तरह हयात और तसर्रुफ़ की कुदरत बख़्शी है तो

सियअ़त व शिर्क मुर्दा परस्ती और जाहेलिय्यत के तानों से हमारा जीना दूभर कर दिया जाता है। दारूल इफ़्ता बादल की तरह गरजने और बरसने लगते हैं।

लेकिन थानवी साहेब के 'जद्दे मक़तूल' के मुतअल्लिक इस वाक़िआत की इशाअ़त पर कि वह ज़िन्दों की तरह घर पलट कर वापिस आए रू ब रू बात की मिठा पेश की और इसी शान से हर रोज़ आने का मशरूत वादा किया और जब शर्त की ख़िलाफ़ वर्ज़ी की गई तो आना बन्द करदिया। इन तमाम बातो पर को भी गिरेबान नहीं थामता को भी इन चीजो को शिर्क नहीं ठहराता को यह नहीं पूछता की उनकी लहद में मिठा की दुकान किसने खोली और क़ुरआन व हदीस मे इस तरह के एख़्तियारात की दलील कहाँ से है। नीज यह बात उन तक कैसे पहुँची कि उकनी घर वाली ने उनके आने का राज फ़ाश कर दिया और उन्होंने आना बन्द कर दिया।

है को दियानत व इन्साफ़ का हामी जो देवबन्दी उल्मा से जाकर पूछे कि जो अक़ीदा रसूल व नबी गौस व ख़्वाजा और मख़दूम व क़ुतुब की बाबत शिर्क है वही थानवी साहेब के परदादा की बाबत क्यों कर इमान व इस्लाम बन गया है आँखों में धूल झोंक कर तौहीद परस्ती का यह स्वांग आख़िर कब तक रचाया जाएगा?

एक और ईमान शिकन वाकिआ: -

अब लगे हाथों इसी तरह का एक और वाकिआ मुलाहिजा फरमाइए जिसके रावी यही मौलवी अशरफ़ अली साहेब थानवी हैं। मौसूफ़ ब्यान करते हैं कि:-

> "मौलाना इसमा ल देहलवी के काफ़िले में एक शख़्स शहीद हो गए जिन का नाम बेदार बख़्त था।

यह मुजाहिद देवबन्द के रहने वाले थे उनकी शहादत की खबर आ चुकी थी। उनके वालिद हशमत अली खाँ साहेब हसबे मामूल देवबन्द में अपने घर में एक रात तहज्जुद की नमाज़ के लिए उठे तो घर के बाहर घोड़े की टापो की आवाज आ । उन्होंने दरवाजा खोला तो देख कर हैरान हुए कि उनके बेटे बेदार बख्त हैं। बहुत हैरानगी बढी कि यह तो बाला कोट में शहीद हो गए थे यहाँ कैसे आगए?

बेदार बख्त ने कहा जल्दी कोई दरी वगैरा बिछाइए हजरत मौलाना समाइल साहेब और सय्यद (अहमद) साहेब यहाँ तशरीफ ला रहे हैं हशमत खाँ ने फौरन एक बड़ी चटाइ बिछा दी। तने मे सय्यद साहेब और मौलाना शहीद और चन्द दूसरे रुफ़का भी आगए। हशमत खाँ साहेब ने मुहब्बते पिदरी की वजह से सवाल किया कि तुम्ह तलवार कहाँ लगी थी? बेदार बख्त ने सर से अपना ढाटा खोला और अपना निस्फ चेहरा अपने दोना हाथों में थाम कर अपने बाप को दिखाया कि यहां तलवार लगी थी। हशमत खां ने कहा बेटा यह ढाटा फिर से बाँध लो, मुझे यह नज्जारा नहीं देखा जाता। थोड़ी देर बाद यह तमात हजरात वापिस तशरीफ ले गए।

सुबह को हश्मत खाँ को शुब्हा हुआ कि यह कहीं ख्वाब तो नहीं था मगर चटाई को जो बगौर देखा तो खून के क़तरे मौजूद थे। यह वह क़तरे थे जो बेदार बख्त के चेहरे से गिरते हुए उसके वालिद ने देखे थे इन कतरों को देखकर हश्मत खाँ समझ गए कि यह बेदारी का वाक़िआ है। ख़्वाब का नहीं

आखिर में चन्द राविय़ों के नाम गिना कर फ़रमाते है कि इस

हिकायत के और भी बहुत से मोतबर रावी हैं। (मलफ़ूज़ाते मौलाना अशरफ अली थानवी, सफ़ा: ४०६, मतबूआ पाकिस्तान ब हवाला हफ्ते रोज़ा चट्टान २४ दिसम्बर १९६२)

इस अजीब व ग़रीब वाक़िआ पर को तबसिरा करने से पहले यह बता देना अपना अख़्लाक़ी फ़र्ज़ समझता हूँ कि देवबन्द के यह शहीदे आज़म जिन्होंने करिशमा साजी में दुनिया के तमाम शहीदों को अपने पीछे छोड़ दिया है किस तरह की जंग में क़त्ल किए गए थे यह कोई जेहाद फी सबीलिल्लाह था या जंगे आज़ादी थी। सच का बोल बाला और झूठ का मुंह काला हो कि यह बहस भी शैखे देवबन्द जनाब मौलवी हुसैन अहमद साहब ने तय कर दी है। जैसा कि अपनी खुद नविश्त स्वानेह हयात की दूसरी जिल्द में तहरीर फ़रमाते हैं कि -

"सय्यद साहेब का असल मक़सद चूंकि हिन्दुस्तान से अंग्रेज़ी तसल्लुत और इक्तिदार का खिला कमा करना था जिस के बाइस हिन्दु और मुसलमान दोनों ही परेशान थे। इस बिना पर आपने अपने साथ हिन्दुओं का शिर्कत की दावत दी और साफ–साफ उन्हे बता दिया कि आपका वाहिद मकसद मुल्क से परदेसी लोगों का इक्तिदार खत्म करना है। इस के बाद हुकुमत किस की होगी इस से आपको ग़र्ज़ नहीं है। जो लोग हुकूमत के अहल होंगे हिन्दू या मुसलमान या दोनों वह हुकूमत करेंगे। (नक़्शे हयात, जिल्द:२, सफ़ा: १३)

आप ही इन्साफ़ से बताइए! मज़कूरा हवाला की रोशनी में सय्यद साहेब के इस लश्कर के मुतअल्लिक़ सिवा इसके और क्या राय क़ाएम की जा सकती है कि वह ठीक इन्डियन नेशनल कांग्रेस के रज़ाकारों का एक दस्ता था जो हिन्दुस्तान में

सिकूलर स्टेट (लादीनी हुकूमत क़ाएम करने के लिए उठा था।

(१)

'तहरीके खिलाफ़त के मुसन्निफ़ जनाब क़ाज़ी अदील साहेब अब्बासी जो ख़ुद भी देवबन्दी हैं उन्होंने भी मौलाना हुसैन अहमद साहब के इस खत को तफसीली नक्ल फरमा कर यह बताया है कि हिन्दुस्तान मे मुत्तहेदा जम्हूरी हुकूमत का तखय्युल जिसमें हिन्दु मुस्लिम सभी शरीक है उनका मक़सद असली क्या था (देखिए तहरीके खिलाफ़त. सफहा: ७०–७१)

वैसे जहाँ तक शहीदो की हयात और उनकी रूहानी सतवत का तअल्लुक है तो इस पर कुरआन की बेशुमार आयतें शाहिद हैं लेकिन यह सारे फ़ज़ाएल उन मुजाहेदीन के हक़ मे हैं जो खुदा की ज़मीन पर खुदा के दीन की बादशाहत और इस्लाम का सियासी इक़्तेदार क़ाएम करने के लिए अपना खून बहाते हैं, ला दीनी हुकूमत और मिली जुली सरकार इस्लाम की फौज कहला सकती है और न उस फ़ौज के मक़तूल सिपाही को इस्लामी शहीद करार दिया जा सकता है।

लेकिन शख़्सियात परस्ती की यह सितम ज़रीफ़ी देखिए कि इस किस्से मे जगे आज़ादी के एक सियासी मकतूल को बद्र व उहुद के शहीदो से भी आगे बढा दिया गया है। क्योंकि इस्लाम के सारे शहीदों पर उन्हे बरतरी हासिल होने के बावजूद उनके मुतअल्लिक़ भी ऐसी कोई रिवायत नहीं मिलती कि वह अपना कटा हुआ सर लेकर जिन्दों की तरह अपने घर आए हों घर वालों से बिल मुशाफ़ा बात–चीत की हो।

देवबन्दी जहन की यह बुलअज़बी भी क़ाबिले दीद है कि कुदरत व इख़्तियारात की जो बात वह अपने एक सियासी मकतूल के लिए बे चूँ व चरा तसलीम कर लेते हैं उसी को हम

अगर हुनैन व कर्बला के शहीदों के लिए मान लें तो हमें मुश्रिक ठहराया जाता है और उनके अक़ीदए तौहीद की इजारादारी में कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता।

(४)

खुदबीनी की एक शर्मनाक कहानी

अब एक दिलचस्प वाक़िआ सुनिए। इसी अश्रफुस्सवानेह के मुसन्निफ़ थानवी साहेब के मुतअ़ल्लिक़ लिखते हैं कि:–

> "हज़रत वाला अपनी एक मुरीदनी का वाक़िआ ब्यान फ़रमाया करते हैं कि उसने सकरात के आलम में मेरा नाम लेकर कहा कि वह ऊँटनी लेकर आए है और कहते हैं कि इस पर बैठकर चल। फिर उसके बाद उसका इन्तेक़ाल हो गया। (अश्रफुस्सवानेहह्व जिल्द:३ सफ़: ८६)

अपनी ग़ैबदानी और क़ुव्वते तसर्रुफ़ की यह ख़ामोश तबलीग ज़रा मुलाहिजा फ़रमाइए। कोई दूसरा नहीं ख़ुद अपने मुतअ़ल्लिक़ आप ही ब्यान फ़रमा रहे हैं। कोई बेगाना सुने तो अलबत्ता इस वाक़िआ की सेहत पर शक कर सकता है लेकिन मुरीदनी व मोतक़ेदीन किस क़ल्ब व गोश के होते हैं यह बताने की ज़रूरत नहीं। पीर साहब इन्कार भी करदें तो वह उसे तवाज़ा पर महमूल करेंगे।

थानवी साहेब इस वाक़िआ के इज़हार से अपने हल्क़ा बगोशों को यह तअस्सुर देना चाहते है कि उन्हें अपनी मुरीदनी की मौत का वक़्त मालूम हो गया था वह उसे लेने के लिए ऊँट की सवारी लेकर उसके पास पहुँच गए।

इस वाक़िआ से जहाँ उनकी ग़ैबदानी पर रोशनी पड़ती है वहीं उनकी क़ुव्वते तसर्रुफ़ भी पूरे तौर पर नुमायां हो जाती है कि अपने वजूद को मुतअ़द्दिद

जगह पहुंचा देना किसी के लिये ना मुमकिन हो तो हो लेकिन उनके लिये अमरे वाक़िआ है।

एक और लतीफ़ा

इस वाकिए के बयान से किताब के मुसन्निफ़ ने यह मुद्दआ ज़ाहिर किया है कि वजूदे इन्सानी के हर मरहले में मुरीदीन व मुतवस्सेलीन के लिये कार साज व नजात देहिन्दा थे।

चनान्चे इस मुद्दआ को साबित करने के लिए साहिबे किताब ने मुतअद्दीद वाकिआत नक़ल किये हैं। नमूने के तौर पर किताब के चन्द इक्तिबासात ज़ैल में मुलाहिज़ा फ़रमाइए। लिखते हैं कि:–

> "हज़रत वाला के मुतवस्सेलीन के हुस्ने ख़ातिमा के बकसरत वाक़िआत हैं जिनसे मक़बूलियत व बरकत का सिलसिला जाहिर होता है चुनान्चे ख़ुद हज़रत वाला फ़रमाया करते हैं कि हज़रत हाजी (यानी थानवी साहेब के पीर)के सिलसिले की यह बर्कत है कि जो बिला वास्ता या बिल वास्ता हज़रत से बैअत हुआ उसका ब फज़लेही तआला ख़ातिमा बहुत अच्छा होता है। यहाँ तक कि बाज़ मुतवस्सेलीन जो मुरीद होने के बाद दुनिया दार ही रहे मगर उनका भी ख़ातिमा ब फ़ज़लेही तआला औलियाअल्लाह कासा हुआ। (अश्रफुस्सवानेह, जिल्द: २ सफा: ८६)

यहाँ सोचने की बात यह है कि औलिया अल्लाह की तरह खातिमा के लिए अब इबादत व तक़वा और आमाले सालेहा की कतअन जरूरत नहीं है। थानवी साहेब के हाथ सिर्फ मुरीद हो जाना इस बात की जमानत है कि औलियाअल्लाह का सा अन्जाम उसके हक़ में मुकद्दर हो गया।

अब इससे भी ज्यादा एक इबरत अंगेज़ किस्सा सुनिए।

किताब के मुसन्निफ़ लिखते हैं कि:–

> अहकर से मेरे मुतअद्दिद पीर भाइयों के अपनी मस्तूरात के हुस्ने खातिमा के अजीब व गरीब वाकिआत किये है जो हज़रत से मरीद थीं।
>
> "अहकर के एक बहनोई थे जो अर्सा दराज़ हुआ हज़रते वाला से कानपुर जाकर मुरीद हो आए थे। जबकि इत्तिफ़ाकन हज़तर वाला वहाँ तशरीफ लाए थे। बाद इन्तिकाल एक सालेह बीबी ने उनको ख़्वाब में देखा कि कह रहे हैं कि बहुत ही अच्छा हुआ जो मैं पहले से हजरत मौलाना से कानपुर जाकर मुरीद हो आया मैं यहाँ बड़े आराम मे हूँ
>
> (अश्रफुस्सवानेह, जिल्दः ३, सफा ८६)

मुलाहिज़ा फ़रमाईये सिर्फ़ हाथ थाम लेने की यह बर्कत ज़ाहिर हुई कि आलमे आख़िरत का सारा मामला दुरूस्त हो गया। उस आलम के किसी नौवारिद का यह कहना कि बहुत अच्छा हुआ जो मैं हज़रत मौलाना से मुरीद हो गया बिला वजह नही है यकीनन उसने वहाँ अपने पीर की निस्बते गुलामी का कोई एज़ाज़ ज़रूर देखा होगा। अब एक तरफ दरबारे ख़ुदावन्दी में थानवी साहेब के असर व रूसूख की यह शान देखिए कि उनका एक अदना मुरीद भी उनकी निस्बते गुलामी के एजाज से महरूम नहीं रहता और दूसरी तरफ़ महबूबे किबरिया सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हक़ में इन हज़रात के दिलो का बुख्ल मुलाहिज़ा फरमाइए। आँखों से लहू की बूँद टपक पडेगी।

तक्वीयतुल ईमान के मुसन्निफ़ लिखते हैं.–

> उन्होंने अपनी बेटी तक को खोलकर सुना दिया कि क़राबत का हक़ अदा करना इसी चीज़ में हो

> सकता है कि अपने एख़्तियार की हो और अल्लाह के यहाँ का मामला मेरे इख़्तियार से बाहर है। वहाँ मैं किसी की हिमायत नहीं कर सकता और किसी का वकील नहीं बन सकता। सो वहाँ का मामला हर कोई अपना दुरूस्त करले और दोजख़ से बचने की हर कोई तदबीर करले।
>
> (तकवियतुल ईमान मुलख़्ख़सन, सफ़ा ३८:)

(5)

नियाज़मंदों में थानवी साहेब की गैबदानी के अक़ीदे का चर्चा:-

थानवी साहेब की ग़ैबदानी से मुतअल्लिक उनके हाशिया नशीनों और मुरीदीन का जहन भी पढ़ने की चीज है। इससे इस माहोल का अन्दाजा होगा जिस पर किसी भी मज़हबी पेश्वा के मिजाज व ख्यालात का अक्स पडता है।अश्रफुस्सवानेह का मुसन्निफ़ लिखता है कि:–

> "इस अमर की तस्दीक़ बारह लोगों से सुन्ने में आई और ख़ुद भी बारहा इसका तजरबा हुआ कि जो दिल में लेकर आए या जो इश्काल क़ल्ब में पैदा हुई क़ब्ले इजहार ही उसका जवाब हज़रत वाला की जबाने फैज तर्जुमान से हो गया या बातनी परेशानी की हालत में हाज़िर हुए तो खिताबे ख़ास या ख़िताबे आम में कोई बात ऐसी फ़रमादी जिससे तसल्ली हो गई। (अशरफुस्सवानेह, फ़हा: ५६)

अब इसी के साथ लोग हाथों थानवी साहेब की ग़ैब दानी के मुतअल्लिक़ उनके एक हल्का ब गोश का जज़बाए यक़ीन और थानवी साहेब का दिलचस्प जवाब मुलाहिज़ा फरमा

लीजिए लिखते हैं कि:—

> 'एक मशहूर फाज़िल ने जज़मन अपना यही एतक़ाद (कि आप ग़ैब दान हैं) तहरीर फ़रमा कर भेजा तो हज़रत वाला ने उनके ख़्याल की नफ़ी फरमाई और जब फिर भी उन्हों ने न माना और उस नफ़ी को तवाज़ा पर महमूल किया तो हज़रत वाला ने तहरीर फ़रमाया कि वह ताजिर बड़ा खुश क़िस्मत है जो अपने सौदे का नाक़िस होना खुद ज़ाहिर कर रहा है लेकिन ख़रीदार फिर भी यही कह रहा है नहीं नाक़िस नही है। बहुत क़ीमती है। (अश्रफुस्सवानेह, जिल्द:३, सफहा ५६)

अब बताइए कौन बदबख़्त मुरीद है जो अपने पीर को ख़ुश क़िस्मत देखना नही चाहता।

इस जवाब में अपनी ग़ैबदानी का एतक़ाद रखने वालों के लिए ख़ामोश हौसला अफ़ज़ाई का जो कार फ़रमा है वह इतना नुमायां है कि उस पर कोई परदा नही डाला जा सकता। थानवी साहेब के बारे में ग़ैबदानी का अक़ीदा अगर शिर्क था तो यहाँ फतवा की ज़बान क्यों नहीं इस्तेमाल की गई।

और सब से संगीन इल्ज़ाम तो यह है कि थानवी साहेब के इन्कार को तो तवाज़ा पर महमूल कर लिया गया और उन्हो ने दबी ज़बान में खुद इसकी तौसीक़ भी फ़रमा दी लेकिन यह कैसा अन्धेर है कि बाज़ चीज़ों के इल्म व ख़बर के मुतअल्लिक़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के इन्कार को हजार फरहमाईश के बावजूद तवाज़ा पर महमूल नहीं किया जाता बल्कि निस्फ़ सदी से यही इसरार किया जा रहा है कि मआज़ल्लाह हक़ीक़तन वह मख़फ़िय्यात के इल्म व ख़बर से आरी थे।

अब इस मुकदमे का फ़ैसला भी आप ही के जज़बए इन्साफ़ पर छोडता हूँ।

(६)

एक और ईमान शिकन कहानी:-

अशरफ रसवानेह के मुसन्निफ़ ने थानवी साहेब के मुतअल्लिक़ क़ब्ले विलादत ही एक पेशीन गोई नक्ल की है। इबारत का यह टुकडा पढने के काबिल है।

> 'नामे नागी अशरफ़ अली है। यह नाम हज़रत हाफ़िज ग़ लाम मुर्तजा साहब पानी पती रहमतुल्लाह अलैहि ने जो उस ज़माने के मकबूले आम और मशहूर अनाम अहले खिदमत मजज़ूब थे कबले विलादत हज़रत वाला बल्कि इस्तिकरारे हमल ही बतौर पेशीनगोई तजवीज फरमा दिया था। (अशरफुस्सवानेह, सफा: ७)

थानवी साहेब ने मुकदेमा 'हिसामे इबरत' के नाम से ख़ुद भी अपना एक 'मीलाद नामा' मुरत्तब किया है जिसमें उन्होंने एक निहायत दिलचस्प रिवायत ब्यान की है जो पढ़ने के काबिल है। लिखते हैं कि:-

> 'उन्हों ने हज़रत हाफ़िज ग़ लाम मुर्तज़ा मजज़ूब पानी पती से शिकायत की कि हज़रत मेरी इस लड़की के लड़के ज़िन्दा नहीं रहते हाफ़िज़ साहेब ने - बतरीक़े मोअम्मा फरमाया कि उमर व अली की कशाकश मे मर जाते हैं अब की बार अली के सुपुर्द कर देना जिन्दा रहेगा। (चन्द सतरों के बाद) फिर फ़रमाया इसके दो लड़के होंगे, और ज़िन्दा रहेंगे एक का नाम अशरफ़ अली खाँ रखना, दूसरे का नाम अकबर अली खाँ। नाम लेते वक्त खाँ अपनी तरफ़

"फरमाया कि मौलाना शाह अब्दुलरहीम साहब रायपुरी का कल्ब बडा ही नूरानी था मै उनके पास बैठने से डरता था कि कही मेरे उयूब नुमाया न हो जाएँ। (अर्वाह सलासा, सफा. ४०१)

दीन व दयानत का खून इस से बढ कर क्या होगा कि एक उम्मती का कल्ब तो इतना नूरानी हो जाए कि आमाल व जवारेह की मानवी कैफिय्यत उससे मखफी न रह सके और वह छुपकर किए जाने वाले उयूब तक से बा खबर हो जाए। लेकिन यही अकीदा पैगम्बरों के हक मे लाइके गरदन जनी समझा जाए

सच पूछिए तो देवबन्दी हजरात के साथ मजहबी इख्तिलाफात की पूरी सरगुजश्त मे सारा मातम दिल की इसी हिर्मान नसीबी का है अपने बुजुर्गों के हक मे यह लोग जितना कुशादह दिल वाके हुए हैं उसके निन्नानवे हिस्से के बराबर भी अगर मदनी सरकार के हक मे उनके दिल का कोई गोशा नर्म हो जाता तो मुसालेहत की बहुत सी राहे निकल सकती थी।

अपनी जमाअत के दूसरे बुजुर्ग के हक मे इसी गैबदानी से मुतअल्लिक थानवी साहेब का एक और एतिराफ मुलाहिजा फरमाइए। उनके मलफूजात का मुरत्तिब लिखता है कि–

"(एक दिन थानवी साहेब ने) हजरत मौलान मुहम्मद याकूब साहब रहमतुल्लाह अलैहि की बाबत फरमाया कि उन्होंने खबर दे दी थी उस वबा की जिसमे उन के अइज्जह ने वफात पाई थी।

फिर फरमाया कि मौलाना थे बडे साहिबे कश्फ रमजान ही मे खबर दे दी थी कि एक बलाए अजीम रमजान बाद आवेगी। अभी आजाती लेकिन रमजान की बर्कत से रुकी हुई है अगर लोग बचना चाहें तो हर चीज मे सदकात दे दे। (हसनुल अजीज, जिल्द १ सफह २६३)

कल क्या होगा उसका तअल्लुक भी इल्म गैब से है। लेकिन आप देख रहे हैं कि बात यहाँ कल से भी आगे निकल गई है और इल्म भी है तो सिर्फ़ इतना ही नहीं है कि एक बला आने वाली है बल्कि यह भी मालूम है कि वह अभी आ जाती मगर रमज़ान की बर्कत से रूकी हुई है और लोग सदक़ा दे दें तो वापिस लौट जाएगी।

अब हमारी मज़लूमी के साथ इंसाफ़ कीजिए कि यही अकीदा अगर हम किसी नबी या वली के हक में जाइज़ तसव्वुर कर ले तो हमारा इमान व इस्लाम ख़तरे में पड़ जाता है और यह अपने सारे कबीले के हक़ में डंका पीट रहे हैं तो यहाँ सब ख़ैरिय्यत है।

छोटे मियाँ का किस्साः -

अब तक तो कबिले के शैख का तजकिरा था अब छोटे मियाँ का किस्सा सुनिये। अश्रफुस्सवानेह के मुसन्निफ ने थानवी साहब के ख़लीफाए मजाज हाफिज उमर अलीगढी के गैबी इन्किशाफ़ के मुतअल्लिक एक निहायत हैरत अगेज वाकेआ ब्यान किया है कि:-

> "एक बार हाफ़िज़ साहेब रात की रेल से थाना भवन हाज़िर हुए तो जब रेल (थानवी साहब की) खांकाह के महाज़ से गुज़री तो उन्होंने बेदारी में देखा कि मस्जिद ख़ानक़ाह के गुंबद से आसमान तक अनवार का एक तार लगा हुआ है। (अश्रफुस्सवानेह, जिल्दः २ सफ़हा ६)

एक तीर में दो निशाने इसी को कहते हैं। एक तरफ़ अपनी गैबी कुव्वते इन्किशाफ़ का दावा भी है कि नूर के इस सिलसिले का तअल्लुक आलमे गैब ही से था और दूसरी तरफ़ यह भी ज़ाहिर करना मकसूद है कि रूए ज़मीन

का खानए काबा और गुम्बदे ख़ज़रा की तरह थानवी साहेब की मस्जिद व ख़ानकाह का गुंबद भी गैबी अनवार व तजल्लियात के नुज ले इजलाल का मर्कज है।

और जब ख़लीफए मजाज की गैबी क़ व्वते इदराक का यह हाल है कि माथे की आँख से आलमे ग़ैब का मुशाहिदा कर रहे है तो इसी से हिसाब लगा लीजिए कि शेख की क़ व्वते इन्किशाफ़ का क्या आलम होगा।

चौथा बाब

शेखे देवबन्द जनाब मौलवी हुसैन अहमद साहेब (मदनी) के बयान में

इस बाब मे शैखे देवबन्द जनाब मौलवी ह सैन अहमद साहेब के मुतअल्लिक देवबन्दी लिटरेचर से यह वाक़िआत व हालात जमा किए गए हैं जिनमें अक़ीदए तौहीद से तसादुम अपने मज़हब से इन्हिराफ़ और मुँह बोले शिर्क को अपने हक़ में इस्लाम व ईमान बना लेने की शर्मनाक मिसालें वर्क़-वक़ पर बिखरी हुई हैं।

चश्मे इन्साफ़ खोल कर पढ़िये और ज़मीन का फ़ैसला सुन्ने के लिए गोश बर आवाज़ रहिये।

सिलसिलए वाकिआत

ग़ैबी इल्म और रूहानी तसर्रुफ की एक हैरत अंगेज़ कहानीः-

रोज नामा अलजमीअत देहली ने शेख़े देवबन्द मौलवी हुसैन अहमद साहेब के हालाते ज़िन्दगी पर शैख़ुल इस्लाम नम्बर के नाम से एक ज़खीम किताब शाए कि है। जमीअतुल उल्मा का आरगन होने की हैसिय्यत से उस अख़बार को अपनी जमाअत में जो हुस्ने एतमाद हासिल है वह मुहताजे ब्यान नही है

उसी शेख़ुल इस्लाम नम्बर में मौलवी हुसैन साहेब के फर्जन्द मौलवी असअद मियाँ की रिवायत से एक वाकिआ नक़ल किया गया है। करामत व मुकाशिफ़त के उनवाने जैल मे (शिर्षक के नीचे) उन्होंने लिखा है कि:-

> गजाली साहेब देहलवी ने मदीना तय्येबा में मुझ से ब्यान किया कि मैं देहली के एक सियासी जलसा में शरीक हुआ। हज़रत वाला भी उसमें शरीक थे वहाँ मैने देखा कि औरते भी स्टेज पर बैठी हुई थीं।
>
> दिल में ख्याल गुज़रा कि वह शख़्स क्या वली हो सकता है जो ऐसे मजमए आम में जहाँ औरतें भी मौजूद हों शिर्कत करे। यह ख़्याल आकर हजरत से इस दर्जा नफ़रत पैदा हुई कि मैं जल्सा से चला आया।
>
> उसी शब ख़्वाब में देखा कि हज़रत ने मुझे सीने से लगा लिया है चुनान्चे उसी वक़्त मेरा क़ल्ब ज़ाकिर होगया और वह नफ़रत अक़ीदत से बदल गई।
>
> (शैख़ुल इसलाम नः सफा:१६२)

ज़रा इस वाक़िआ में अजाएबात की फ़रावानी मुलाहिज़ा फ़रमाईए।

यह कितनी बड़ी ग़ैब दानी है कि मजलिस से रूठकर चले जाने वाले एक अजनबी शख़्स के दिल का हाल मालूम किया। और सिर्फ़ मालूम ही नहीं किया बल्कि एक पैकरे लतीफ़ में अपने आपको मुंतक़िल करके ख़्वाब में तशरीफ़ भी ले आए और एक ही निशाने में यह दूसरा तसर्रूफ़ मुलाहिजा फरमाईए कि सीने पर हाथ रखते ही अचानक वह नफ़रत भी अक़ीदत से बदल गई। और तीसरा तमाशा यह कि उसी वक़्त से सोने वाले के दिल के लताएफ़ भी जाग गए।

यह सारी बातें यह हैं कि अगर हम किसी नबी या वली के हक़ में इस तरह का अक़ीदा ज़ाहिर करदें तो इलज़ामात के बोझ से गर्दन टूट जाए।

लेकिन अपने शेख का मर्तबा दो बाला करने के लिए ईमान का ख़ून भी कर दिया जाए तो वहाँ सब रवा।

अपनी वफात का इल्म:-

मौलवी रियाज अहमद साहेब फ़ैज़ाबादी सदर जमीअ़तुल उल्मा मैसूर ने इसी शैख़ुल इस्लाम नम्बर में मौलवी हुसैन अहमद साहेब के साथ अपनी आखरी मुलाक़ात का ज़िक्र किया है। दमे रूख़्सत मौसूफ़ की यह गुफ़तगू खास तौर पर याद रखने के क़ाबिल है।

"मैं ने कहा कि हज़रत इन्शाअल्लाह इख़तितामे साल पर ज़रूर हाज़िर हूंगा फ़रमाया कह दिया कि मुलाक़ात नहीं होगी अब तो मैदाने आख़िरत ही मे इन्शाअल्लाह मिलोगे। मजमा मेरे जो क़रीब था। अहकर की मय्यित में आबदीदह हो गया। हज़रत ने फ़रमाया

कि रोने की क्या बात है? क्या मुझे मौत न आएगी? इस पर अहक़र ने इल्हा के साथ कुछ इल्म ग़ैब और ज्यादतिए उमर पर बात करनी चाहिए मगर फ़र्ते ग़म के बाइस बोल न सका। (शेख लइस्लाम नम्बरः १५६)

इस गुफतगू का हासिल सिवाए इसके और क्या हो सकता है कि मौलवी ह सैन अहमद साहब को कई माह पेशतर अपनी मौत का इल्म हो गया था और 'कह दिया कि मुलाकात नहीं होगी' यह लब व लेहजा शक और तज़बजुब का नहीं यकीन व इजआन का है मजमा आबदीदा हो गया। यह जुम्ला भी जाहिर करता है कि लोगो को सच मुच इस खबर का यकीन हो गया।

इस वाकिआ मे जो चीज खास तौर पर महसूस करने के काबिल है वह यह है कि मौत का इल्म यकीनी उमूरे ग़ैब ही से तअल्लुक रखता है। लेकिन क़ुरआन की कोई आयत और हदीस की कोई रिवायत न मौलवी ह सैन अहमद साहेब को इस इल्म के खुसूसी इद्दआ से रोक सकी और न ही इस खबर पर ईमान लाने वालों की राह में हाएल हुई। और अब इसकी इस तरह तश्हीर की जा रही है जैसे दुनिया की कोई मुसल्लेमा हकीकत बन गई हो।

(3)

इस इल्म का एक क़िस्सा कि बारिश कब होगी?:-

मौलवी जमीलुर्रहमान सिवहारी मुफ्ती दारूल उलूम देवबन्द ने इसी शैख ल इस्लाम नम्बर में सहसपुर ज़िला बिजनौर के एक जलसा का ज़िक्र किया है जो कांग्रेस की तरफ से मुंअक़िद किया गया था और जिसमे मौलवी ह सैन अहमद साहेब भी शरीक थे।

उन्होंने लिखा है कि ऐन वक़्त जलसा से कुछ पहले

आसमान अचानक अबर आलूद हो गया। मौसम का रंग देखकर मुतज़ेमीन जलसा सरासीमा हुए। अब इसके बाद का किस्सा ख़ुद वाकिआ निगार की ज़बानी सुनिए लिखा है कि:–

> "इस दौरान में जामे रिवायत गुफरालहु (यानी वाकिआ निगार) को जलसा गाह में एक बरहना सर मजज़ूबाना हैअत के ग़ैर मुतअर्रफ़ शख़्स ने अलाहिदा ले जा कर इन अलफ़ाज़ में हिदायत की कि "मौलवी हुसैन अहमद से कह दो कि इलाके का साहिबे ख़िदत मैं हूँ अगर वह बारिश हटवाना चाहते हैं तो यह काम मेरे तवस्सुत से होगा।
>
> राक़ेमुल हुरूफ़ उसी वक़्त ख़ीमा में पहुँचा जिस पर हज़रत वाला ने आहट पा कर वजह मालूम फ़रमाई और इस पैग़ाम को सुनकर एक अजीब पुर जलाल अन्दाज में बिस्तरे इस्तराहत ही से इर्शाद फ़रमाया जाइए कह दीजिए। बारिश नही होगी।
>
> (शैखुल इस्लाम नम्बर सफहा: १४७)

बिस्तरे इस्तिराहत ही से इर्शाद फ़रमाया यह जुमला बता रहा है कि उन्होंने "बारिश नहीं होगी" का हुक्म आसमान का रंग देखकर नहीं दिया था बल्कि इस हुक्म के पीछे उसी ग़ैबी इल्म व इदराक का इदेआ था जिसका तअल्लुक उमूरे गैब से है। यानी अपने उसी ग़ैबी इल्म के ज़रिए उन्होंने आइन्दा का हाल मालूम कर लिया था और जज़्म व यकीन के साथ कह दिया कि बारिश नहीं होगी।

या फिर इस वाकिआ में इस अम्र का इजहार मक़सूद है कि आलम के तक्वीनी इख्तियारात उस मजज़ूब के हाथ में नहीं बल्कि मेरे हाथ में है मैं बारिश रोकना चाहता हूँ तो

बिला शिर्कत ग़ैर खुदा भी इस की क दरत रखता हूँ।

बहर हाल दोनों में से कोई बात भी हो मज़हबी मोतक़ेदात से इन्हिराफ़ की बदतरीन मिसाल है जैसा कि देवबन्दी मज़हब की बुनियादी किताब तकवियतुल ईमान में है।

> "इसी तरह मेंह बरसने के वक़्त की ख़बर किसी को नहीं हालाँकि इसका मौसम भी बन्धा हुआ है और इन मौसमों पर वह बरसता भी है और सारे नबी और बादशाह और हकीम उसकी ख़्वाहिश भी रखते है। सो अगर उसका वक़्त मालूम करने की कोई राह होती तो कोई अलबत्ता पालेता। (तकवियतुल ईमान, सफ़हाः २२)

इस मुक़ाम पर फिर आपके ईमान की वह रग छेड़ना चाहता हूँ जहाँ से ग़ैरते इश्क़ को ज़िन्दगी मिलती है कि हक़ के साथ इन्साफ़ करने मे किसी की पासदारी न कीजिएगा।

एक तरफ़ कारोबारे आलम में शैखे देवबन्द का काएनातगीर इक़तिदार देखिए और दूसरी तरफ़ आलमी न के आक़ा मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की शाने महबूबियत पर इन हज़रात के तीशए क़लम की ज़र्ब मुलाहिज़ा फ़रमाइएः—

> "सारा कारोबार जहाँ का अल्लाह ही के चाहने से होता है रसूल के चाहने से कुछ नहीं होता। (तकवियतुल ईमान, सफ़हाः ५८)

मुक़देसाते इलाही में असर व रूसूख़ का एक अजीब वाक़िआः—

इसी शैखुल इस्लाम नम्बर में असद मियाँ ने अपने "बुज़ुर्गवार" के मुतअल्लिक़ साबर मति जेल का एक वाक़िआ नक़ल किया है।

यह उस ज़माने की बात है जब कि मौलवी ह सैन अहमद

साहेब भी उसी जेल में नज़र बन्द थे। उन्होंने लिखा है कि इसी दौरान जेल के एक क़ैदी को फाँसी की सज़ा हो गई यह सुनकर उसका ख़ून सूख गया।मुंशी मोहम्मद हुसैन नामी किसी क़ैदी के ज़रिये उसने मौलवी हु सैन अहमद साहेब से दुआ की दर्ख़ास्त कराई। अब आगे का वाक़िआ खुद वाकिआ निगार की ज़बानी सुनिए लिखा है कि:-

> "मुंशी मुहम्मद हु सैन" हज़रत रहमतुल्लाह अलैहि के बहुत सर हुए फ़रमाया अच्छा जाकर उससे कह दो कि वह रिहा हो गया। मुंशी मुहम्मद हु सैन साहेब ने उससे जाकर कह दिया कि बापू ने कह दिया है कि तू रिहा हो गया दो एक रोज़ गुजरने के बाद उस कैदी ने फिर बेचैनी का इज़्हार किया कि अब तक कोई हुक्म नहीं आया और मेरी फाँसी मे चन्द ही रोज रह गए हैं। मुंशी मुहम्मद हुसैन साहब ने फिर आकर अर्ज किया तो फ़रमाया कि मैं ने तो कह दिया कि वह रिहा हो गया।उसके बाद उस कैदी ने फिर बेचैनी का इजहार किया अब तक कोइ हुक्म नही आया मेरी फ़ांसी में चन्द ही रोज़ रह गये है। मुशी मुहम्मद हुसैन ने फिर आकर अर्ज़ किया तो फ़रमाया कि मैं ने तो कह दिया कि वह रिहा होगया उसके बाद दो एक यौम फाँसी के रह गए थे कि उसकी रिहाई का हुक्म आ गया। (शैख़ुल इस्लाम नम्बर, सफा १२२)

दुआ की दर्ख़ास्त के जवाब में "रिहा हो जाएगा" यह एक पुर उम्मीद जवाब की हैसिय्यत से तो समझ में आ सकता है लेकिन रिहा होने के क़ब्ल "रिहा हो गया"।

यह फ़िक्रा उसी की ज़बान से निकल सकता है जिसके हाथ में क़ज़ा व क़द्र का मुहकमा हो या फिर आलिमे गैब का

सारा कारोबार जिसके पेशे नज़र हो। इसके सिवा एक दानिश्वर की ज़बान से निकले हुए इस जुमले की कोई तावील नहीं हो सकती।

कारोबारे आलम में मौलवी हुसैन अहमद साहेब का इख़्तियार व तसर्रुफ़ साबित करने के लिए तो यह वाक़िआ तराशा गया है। लेकिन सुलताने कौनैन सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के तसर्रुफ़ व इख़्तियारात के सवाल पर इन हज़रात के अक़ीदे की ज़बान यह है।

> "जिसका नाम मुहम्मद या अली है वह किसी चीज़ का मुख़्तार नहीं। (तकवियतुल ईमान, सफहा: ४२)

अब आप ही बताइए कि हक़ व बातिल की राहों का इम्तियाज़ महसूस करने के लिए क्या अब भी किसी मज़ीद निशानी की ज़रूरत बाक़ी है?

एक और हैरत अंगेज़ तमाशा:-

निगाह पर बार न हो तो एक हैरत अंगेज़ तमाशा और मुलाहिज़ा फ़रमाइये मौलवी अहमद हुसैन लाहर पुरी नाम के एक शख़्स ने इसी शैख़ुल इस्लाम नम्बर में अपने एक अजीब व गरीब सरगुज़िश्त लिखी है। वह ब्यान करते है कि इब्तदाई अय्याम में मेरी अकसर नमाज़ें फ़ौत हो जाया करती थीं ख़ास तौर पर फ़ज्र और ज़ुहर की।

लिखते हैं कि परेशान होकर मैं ने यह शिकायत हज़रत शैख़ को लिख भेजी उस पर उन्होंने तंबीह फ़रमाई। इसके बाद का वाक़िआ ख़ुद मौसूफ़ की ज़बानी सुनिए ब्यान करते हैं कि:-

"इसके बाद से मेरी यह कैफ़िय्यत हो गई कि बिला नागा फ़ज्र व जुहर की नमाज़ के वक्त ख्वाब मे हज़रत को गुस्से की हालत में देखा करता था फ़रमाते थे कि क्यों नमाज़ पढ़ने का इरादा नहीं है।

मैं घबरा कर उठ जाता यह कैफ़िय्यत तकरीबन एक ड़ेढ़ माह रही जब अच्छी तरह नमाज़ का पाबन्द हो गया तो यह कैफ़िय्यत ख़त्म हो गई।"(शैखुल इस्लाम नम्बर:३६)

सैकड़ों मील की दूरी से बिल इलतिजाम फ़ज्र और ज हर के वक़्त हर रोज़ किसी को आकर उठा देना जहाँ बातेनी तसर्रुफ़ का बहुत बड़ा कमाल है वहाँ उस अजीम क़ व्ते इन्किशाफ़ का भी हामिल है कि सैकड़ो मील के फासले से वह हर रोज़ यह भी मालूम कर लिया करते थे कि फलाँ शख्स सो रहा है उसने अब तक नमाज नहीं पढ़ी और फिर जब वह नमाज़ का पाबन्द हो गया तो उन्हें उस की भी खबर हो गई और उन्होंने ख़्वाब में आना छोड़ दिया।

यह वाक़िआ पढ़ते हुएं एक ख़ाली जहन आदमी बिल्कुल यह महसूस करता है कि जैसे घर ही के अन्दर एक कमरे से दूसरे कमरे में किसी सोने वाले आदमी को वह नमाज के वक़्त आकर उठा दिया करते थे।

दिल के ख़तरे पर मुत्तेला होने का एक अजीब किस्सा:

देहली के मौलवी अख़लाक़ ह सैन क़ासमी उसी शैख़ ल इसलाम नम्बर में ब्यान करते हैं कि हाजी मुहम्मद हुसैन गजक वाले देहली के पंजाबी बेरादरी के रईस थे वह हाफ़िज़े क़ रआन भी थे लेकिन उन्हें क़ रआन अच्छा याद नहीं था एक बार किसी मौक़े पर मौलवी हुसैन अहमद साहेब ने उन्हें हाफ़िज़ साहेब कह कर पुकारा अब इसके बाद का वाक़िआ खुद हाजी साहेब की

जबानी सुनिए। ब्यान फरमाते हैं:-

'हजरत की ज बाने मुबारक से हाफ़िज़ साहेब का लफ्ज सुन कर सन्नाटे मे आगया दिल में शर्मिन्दा हुआ ओर ख्याल आया मुझे क़ ऑने करीम कुछ अच्छा याद नही है। यह हजरत ने क्या फ़रमा दिया यह ख्याल लेकर मै अन्दर जा कर बैठ गया, बैठते ही हज़रत ने फरमाया हाफिज साहेब मेरा ज़हन भी ख़राब है, नूरे रग की एक खास चिडिया होती है वह ख़ाया कीजिये जहन अच्छा हो जाएगा। (शैखुल इस्लाम नम्बर, सफहा १६३)

इस वाकिआ का सब से इबरत नाक हिस्सा मौलवी अख्लाक ह सैन कासिमी का वह तअस्सुर है जो उन्होंने उस वाकिआ की बाबत जाहिर किया है मौसूफ लिखते हैं:-

राकिम कहता है कि हाजी साहेब के दिल में जो ख्याल गुजरा हज़रत मदनी की क़ व्वते ईमानी ने उसे महसूस कर लिया इसे इस्तिलाह में कश्फ़े क लूब कहते हैं। (सफहा: १६३)

यह सवाल दोहराने के लिए हमें इससे ज़्यादा और कोई मौज जगह नहीं मिल सकती कि दिल के छुपे हुए ख़तरे को महसूस करने वाली यह कुव्वते ईमानी उन हज़रात के नज़दीक खुद पैगम्बरे आज़म सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अन्दर मौजूद थी या नहीं। अगर मौजूद थी तो अक़ीदे की यह जबान किस के हक़ में इस्तेमाल की गई है:-

''इस बात में भी उन को कुछ बड़ाई नहीं कि अल्लाह साहेब ने ग़ैबदानी उनके इख़्तियार में दे दी हो जिस के दिल के अहवाल जब चाहें मालूम कर लें। (तकविय्यतुल ईमान, सफ़हा: 3)

अब ईमान व दयानत के इस ख़ून का इन्साफ़ मैं आप ही के ज़मीर पर छोड़ता हूँ कि देवबन्दी मज़हब के मुताबिक जो कुव्वते ईमानी खुदा ने अपने पैगम्बर को नहीं बख़्शी वह देवबन्द के शैखुल इस्लाम को क्यों कर हासिल हो गई?

ग़ैबी कुव्वते इदराक और बातेनी तसर्रुफ़ का एक ईमान शिकन वाक़िआ:-

अब ग़ैबी कु व्वते इदराक और बातेनी तसर्रुफ का एक निहायत संसनी ख़ेज़ वाकिआ सुनियेः

मौलवी हु सैन अहमद साहब के एक मुरीद डाक्टर हाफ़िज़ मुहम्मद ज़करिया साहेब ने उसी शैख ल इसलाम नम्बर में अपनी एक आप बीती नकल की है। उन्हों ने बताया है कि उनके एक पीर भाई सख्त बीमार हुए हालत निहायत संगीन हो गई अब इसके बाद का वाकिआ ख द मौसूफ़ ही की ज़बानी सुनिए। लिखते हैं कि –

> "मैं बहैसिय्यत मुआलिज बुलाया गया तो देखता हूँ कि जिस्म बिल्कुल बेहिस व हर्कत है। आँख पथरा गई है आसारे मर्ग बज़ाहिर नुमाया हैं यह मंज़र देख कर मैं परेशान और बेचैन हो गया कि नागहा मरीज़ रफ़ता रफ़ता अपना हाथ उठा कर किसी को सलाम करता है फिर कहता है कि हज़रत यहाँ तशरीफ़ रखिये कुछ ही देर बाद उठकर बैठ जाता है और अपने वालिद वग़ैरह से कहता है कि हज़रत कहां तशरीफ़ ले गए जवाब में लोग कहते हैं कि हज़रत तो यहां तशरीफ फरमा नहीं थे। वह हैरत से कहता है कि हज़रत

तो तशरीफ़ लाए थे। और मेरे चेहरे और बदन पर हाथ फेर कर फ़रमाया कि अच्छे हो जाओगे। घबराओ नहीं (डाक्टर मौसूफ़ फ़रमाते हैं) कि अभी मैं बैठा ही था कि देखता हूँ कि बुख़ार एकदम ग़ाएब है। और वह बिल्कुल तन्दरुस्त अच्छा है। (शैख़ ल इसलाम नम्बर, सफ़हाः १६३)

अब इस के बाद के वाक़िआत के मुरत्तिब मौलवी सुलैमान आज़मी फ़ाज़िले देवबन्द का यह ब्यान ख़ास तवज्जह से पढ़ने के क़ाबिल है।

"जामे कहता है कि हज़रते शैख़ की अदना करामत है।इस से अन्दाज़ा होता है कि हज़रत को अपने मुन्तसेबीन (मुरीदीन) से कैसा गहरा तअ़ल्लुक़ होता था। (सफ़हाः १६३)

क्या समझे आप! दर असल बताना यह चाहते हैं कि" हज़रत शैख़" की तशरीफ़ आवरी का वाक़िआ उस मरीज़ के वाहिमा का को तसर्रुफ़ नहीं था बल्कि हक़ीक़तन "हज़रत शैख़" उसके पास तशरीफ़ लाए थे। और चश्मे ज़दन में शेफ़ायाब करके चले गये।

एक लम्हा के लिए ज़रा ख़ालिउज़्ज़ेहन होकर सोचिए कि इस वाक़िआ के ज़िम्न में कितने सवालात सर उठा रहे हैं।

पहला सवाल तो यही है कि अगर मौलवी हुसैन अहमद साहेब को इल्म ग़ैब नहीं था तो उन्होंने सैकड़ों मील की मुसाफ़त से यह क्योंकर मालूम कर लिया कि हमारा फ़लाँ मुरीद बीमारी के संगीन मरहले से गुज़र रहा है फ़ौरन चल कर उसकी मदद की जाए।

और दूसरा सवाल यह है कि उस मरीज़ के पास वह ख़्वाब में नहीं बल्कि ऐन बेदारी की हालत में तशरीफ़ लाए और वह भी एक लतीफ़ पैकर में कि उस मरीज़ के सिवा आस पास के तमाम लोगों की निगाहों से ओझल रहे आख़िर जीते जी यह रूह की तरह एक लतीफ़ पैकर उन्हें कहाँ से मिल गया।?

और फिर शेफ़ा बख़्शी की ज़रा यह कुव्वते करिश्मा साज भी देखिए कि उधर मसीहा ने हाथ फेरा और इधर बीमारे नीम जान ने आँखें खोल दी।

देवबन्दी मज़हब में अगर इन चीजो का नाम खुदा तसर्रुफ़ नहीं है तो साहिबे तकविय्यतुल इमान ने सियाह लकीरो के ज़रिये खुदा इख़्तियारात की जो तस्वीर खींची है वह तस्वीर किसकी है।?

फिर इन्साफ़ व दयानत की यह कितनी दर्दनाक पामाली है कि ग़ैबी क़ूव्वते इन्किशाफ़ और तसर्रुफ़ व इख़्तियार का जो अक़ीदा देवबन्दी हज़रात के नज़दीक रसूले कौनैन सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के हक़ में साबित शुदा नहीं है वही उनके शैख की अदना करामत है।

आवाज़ दो ग़ैरते हक़ को! वह कहाँ मरेग ?

एक और तहल्का ख़ेज़ कहानी:-

ग़ैबी क़ूव्वते इदराक और बातनी तसर्रुफ़ात की इससे भी ज़्यादा एक तहल्का ख़ेज़ कहानी मुलाहिज़ा फ़रमाइये।

देवबन्दी रहनुमा मुफ़्ती अजीज़ुर्रहमान बिजनौरी ने "अन्फ़ासे क़ुदसिया" के नाम से एक किताब लिखी है जो मदीना बुक डिपो बिजनौर से शाये हुई है वह किताब मौलवी हुसैन अहमद साहब के हालाते ज़िंदगी पर मुश्तमिल है, मौसूफ़ ने उस किताब में मौलवी हुसैन अहमद साहब के किसी मुरीद का एक वाक़िआ नक़ल किया है जो उसे आसाम के एक पहाड़ी इलाके

मे पेश आया था। अब पूरी कहानी उन्ही के अल्फ़ाज़ में सुनिये:–

"बाली नदी मौलवी बाजार के एक साहेब आज़ादी से कब्ल ढाका से शीलांग बजरिए मोटर जा रहे थे। सूबा आसाम का अकसर हिस्सा पहाड़ी है। उसमें मोटर या बस चलने का जो रास्ता है वह बहुत तंग है फकत ऐक गाड़ी जा सकती है दो की गुंज़ाइश नहीं। यह साहेब हजरत के मुरीद थे जब निस्फ रस्ता तय हो गया तो देखा सामने से एक घोड़ा बड़े ज़ोर से आ रहा हे। उस शख्स और दिगर तमाम हज़रात को खतरा पैदा हुआ कि अब क्या होगा? मोटर रोक ली। लेकिन उसके बावजूद भी तश्वीश थी क्यों कि घोड़ा बिला सवारी बड़ी तेजी से दौड़ा आ रहा था।

रावी का कहना है कि उस शख्स ने अपने दिल में सोचा कि अगर पीर व मुर्शिद होते दुआ करते अभी इतना सोचा था कि हज़रते शैख़ घोड़े की लगाम पकड कर कहीं ग़ाएब हो गए। (अन्फासे क दसिया, सफा: १८६)

कहाँ देवबन्द और कहाँ आसाम की पहाड़ी। दर्मियान म सैकड़ो मील का फ़ासिला। लेकिन दिल मैं खयाल गुज़रते ही 'हजरत' वहाँ चश्मे ज़दन में पहुँच गए और घोड़े की लगाम थाम कर बिजली की तरह ग़ाएब हो गए।

सैकडों मील के फ़ासले से दिल की ज़बान का इस्तिगासा उन्होंने सुन लिया बल्कि वहीं से यह भी मालूम करलिया कि वाकिआ कहाँ दरपेश है। सिर्फ़ मालूम ही नहीं कर लिया बल्कि चश्मे ज़दन में वहाँ पहुँच भी गए। और पहुँच ही नहीं गए बल्कि अस्पे सबा रफ्तार की लगाम पकड़ कर ग़ाएब भी हो गए।

अब हक परसती का निशान दुनिया से अगर मिट नहीं गया है तो तस्वीर के पहले रूख़ में देवबन्दी मज़हब के जो इकतिबासात नक़ल किये गये हैं उन्ह सामने रख कर फ़ैसला किजिए कि मौलवी हुसैन अहमद साहेब की ग़ैबी चारा गरी का यह किस्सा क्या यह असर नहीं छोड़ता कि उन हज़रात के यहाँ शिर्क की सारी बहस सिर्फ़ अम्बिया व औलिया की हुर्मतों से खेलने के लिए है वर्ना ख़ालिस अक़ीदए तौहीद का जज़बा उसके पीछे कारफ़रमा होता तो शिर्क के सवाल पर अपने और बेगाने की तफ़रीक़ क्यों की ज़ाती है?

ग़ौर फ़रमाइए! यह सारे वाक़िआत वह हैं जो ग़ैबी इदराक और तसर्रुफ़ की वह कुव्वत चाहते हैं जिसे देवबन्दी हज़रात कै नज़्दीक किसी भी मख़लूक़ में तस्लीम करना शिर्क है लेकिन मुबारक हो कि शैख़ की मुहब्बत में यह शिर्क भी उन्हो ने अपने हल्क़ के नीचे उतार लिया। बिल अजब कि देवबन्द के ये बुत तराश आज़र आज तौहीद के दावेदार बने हुए है।

वफ़ात के बाद लहद से निकल कर दोस्त के घर आनाः-

यह किस्सा तो हज़रत शेख़ की हयाते ज़ाहेरी का था कि बिजली की तरह चमके और ग़ाएब हो गए और लोगो ने माथे की आँखों से उन्हें देख भी लिया। लेकिन अब वफ़ात के बाद अपनी लहद से निकल कर तशरीफ़ लाने का एक हैरत अंगेज वाक़िआ सुनिये।

कुछ अर्सा हुआ दारूल उलूम देवबन्द के तर्ज मान माहनामा दारूल उलूम में मौलवी इब्राहीम साहब बलयावी की मौत पर निहायत संसनी खेज़ ख़बर शाए हुई थी मर्जुल मौत का ऐनी शाहिद लिखता है कि जब मौलवी इब्राहीम साहेब की मौत का वक़्त क़रीब हुआ तो उन्होंने अपने बेटे को मुख़ातिब करके फ़रमाया।

हजरत वालिद साहेब खड़े हैं तू अदब नहीं करता। हजरत मदनी खडे हस रहे हैं। शाह वसीउल्लाह साहेब आए है मुझ को उठाओ। (दारूल उलूम बाबित मार्च १९६७, सफहा ३७)

मौलवी हुसैन अहमद साहेब को देवबन्द की सरज़मीन में पैवन्दे खाक हुए काफी अर्सा गुज़र गया और शाह वसीउल्लह साहेब का क्या कहना उन्हें तो दफ़न के लिए दो गज़ जमीन भी मयस्सर नहीं आई। जहाज ही से वह समुन्द्र की गोद मे सुला दिये गये।

अब सवाल यह है कि उन हज़रात को इल्मे गैब नहीं था तो मौलवी हुसैन अहमद साहब को देवबन्द के गोरिस्तान मे और शाह वसीउल्लाह साहेब को समुन्द की तहों म क्योंकर खबर हो गई कि मौलवी इब्राहीम पा ब रिकाब हैं उन्ह चलकर अपने हमराह लाया जाए और फिर इतना ही नहीं गैबी क व्वते इदराक के साथ साथ उनके अन्दर हर्कते इरादी की यह कुदरत भी तस्लीम करली गई कि वह आलमे बर्जख से चल कर सीधे मरने वाले के बिस्तरे मर्ग तक जा पहुँचे और उसे अपने हमराह लिए हुए शहरे खमोशां की तरफ़ वापिस लौट गए।

अब हमारी भजलूमी के साथ इन्साफ़ कीजिए कि इल्म व इदराक और कुदरत व इख्तियारात का यही अकीदा अपने आक़ाए बरहक सय्यदे आलम सल्लल्लाहो तआला अलैहि वसल्लम के हक में रवा रखते हैं तो देवबन्द के यह "मवहहेदीन" हम अबूजहल के बराबर मुश्रिक समझने लगते हैं

भागलपुर से एक मुरीद का बज़रिए मुराक्बा जनाज़े में शरीक होना:-

अब तक तो बात चल रह थी खुद हज़रत "शैख़" की। लेकिन अब उनके एक मुरीद की गैबी कुव्वते इदराक का कमाल मुलाहिज़ा फ़रमाइये।

ज़िला भागलपुर के किसी गाँव में हाजी जमालुदीन नाम के को मुरीद थे उन्होंने उसी शैख ल इसलाम नम्बर में अपने हज़रत की वफ़ात के बाद का एक हैरत अगेज किस्सा ब्यान किया है लिखते हैं कि:–

> मैं हज़रत के विसाल के बाद शबे जुम्आ को (वाज़ेह रहे कि हज़रत का इन्तिकाल जुमेरात के दिन हुआ था) बारा तस्बीह से फ़रागत के बाद कुछ देर मुराकिबा हो के बैठ गया। क्या देखता हूँ कि हज़रत का विसाल हो गया है और मजमा कसीर है और हज़रत की नमाजे जनाज़ा पढ़ी जा रही है मै भी उन लोगों को देख कर नमाज़े जनाजा में शरीक हो गया उसके बाद लोग हज़रत को कब्रस्तान की तरफ ले चले। (शैख ल इस्लाम नम्बर, सफहा. १६३)

कितना अजीब व ग़रीब मुराकिबः है कि बगैर किसी "नामा बर" के हज़रत के विसाल की खबर भी मालूम हो गई। घर बैठे–बैठे आँखों से जनाजे का मजमा भी देख लिया और पलक झपकते वहाँ पहुँच कर जनाज़ा में शरीक भी हो गए। वाज़ेह रहे कि मुराकिबा की हालत ख़्वाब की हालत नहीं होती बल्कि ऐने बेदारी की हालत होती है। अब एक तरफ बहिजाब मुशाहिदा और खुदा तसर्रुफात का यह खुला हुआ दावा मुलाहिज़ा फ़रमाइए कि दर्मियान का हिजाब उठाने के लिए हज़रते जिबरीले अमीन अलैहिस्सलाम की भी को

एहतियाज नहीं पेश आई और दूसरी तरफ़ नबीए आज़म सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के हक में उन हज़रात के अक़ीदे का यह नविशता पढ़िये कि मआजल्लाह सरकारे काएनात को पसे दीवार की भी खबर नहीं और उनके इल्म व इदराक का हर गोशा हजरते जिब्रीले अमीन का शर्मिन्दए एहसान है।

(8)

गै़ब दानी के चन्द अजीब वाकि़आत:-

मुफ्ती अजीजुर्रहमान साहेब बिजनौरी ने अपनी किताब "अन्फ़ासे क दसिया" में अपने "हजरत" की ग़ैब दानी से मुतअल्लिक दो अजीब व गरीब वाकिए नक़ल किए हैं। ज़ेल में उन्हे पढ़िये और तौहीद परस्ती के मुकाबले में "शैख़ परस्ती" के जज़बे की फरावानी का तमाशा देखिये।

-:पहला वाकि़आ:-

लिखते हैं कि:-

"रमजानुल मुबारक के मौके पर बारहा ऐसा हुआ है कि जिस दिन आप सूरए इन्न अन्जलनाहो विह्रो मे तिलावत फरमाते उसी दिन शबे कद्र होती थी और द की चाँद रात के बारे में भी बारहा तजरेबा किया है कि जिस दिन चाँद रात होती थी हजरत उसी दिन सुबह से ईद का इन्तिजाम शुरू कर देते थे। एक दिन पेशतर कुरान शरीफ़ खतम कर देते थे चाहे २९ तारीख क्यों न हो।

हज़रत के इस तरीके की बिना पर हज़रत का हर खाकाही बता सकता था कि आज चाँद रात है। (अन्फ़ासे क दसिया, सफ़हा १८५)

जिस दिन आप सूरए इन्ना अन्ज़ल्नाहो वितरों म तिलावत फ़रमाते उसी दिन "शबेक़द्र होती थी" का यह मतलब न भी लिया जाए कि आपके तिलावत फ़रमा देने की वजह से चार व नाचार उसी दिन को शबे क़द्र होना पड़ता था जब भी यह मफ़हूम अपनी जगह पर क़तई मुतअय्यन है कि आप को शबे क़द्र का इल्म हो जाता था हालाँकि अहले इल्म अच्छी तरह जानते हैं कि शबे क़द्र मख़्लूक़ के दर्मियान एक खुदा भेद की तरह छुपा दी ग है खुद रसूले पाक साहिबे लौलाक सल्लल्लाहो तआला अ़लैहि वसल्लम ने भी सराहत के साथ उस की तअयीन नहीं फ़रमाई है लेकिन देवबन्द के यह हजरत अपनी ग़ैबी क़ुव्वते इदराक के ज़रिए खुदा के हरम में नक़ब डालकर यह मालूम फ़रमा लेते कि आज शबे क़द्र है।

और सिर्फ़ इतना ही नहीं बल्कि कई दिन पेशतर आप पर यह भी मुंकशिफ़ हो जाता था कि किस दिन चाँद नजर आएगा और फिर ये इल्म इतना यक़ीनी होता था कि अपने उसी इल्म की बुनियाद पर वह खुद भी क़बल अज़ वक़्त ईद की तय्यारी शरू कर देते थे और उनके ख़ानक़ाह के दुरवेशो को भी चाँन रात मालूम करने के लिए आसमान की तरफ़ देखने की जरूरत नहीं पेश आती थी। अपने हज़रत के मुतअ़ल्लिक़ तौहीद के अलमबरदारों का ज़रा यह ज़हन मुलाहिज़ा फ़रमाइये किताब व सुन्नत की सारी हेदायात यहाँ बेकार हो गई अब सिर्फ़ हजरत का जज़बए अक़ीदत है और वह हैं।

दूसरा वाक़िआ

लिखते हैं कि:–

> मौलवी इस्हाक़ साहेब हबीब गंजी ब्यान फ़रमाते हैं कि हर रमज़ानुल मुबारक के मौक़े पर आप सिलहट

वालो के इसरार पर सिलहट तशरीफ़ लाते थे। इस सिलसिले में सिलहट के एक दुकानदार से चन्दा लेने के लिये बात चीत हुई उसने तुर्श रवय्ये से गयारह रुपये चन्दा दिया और यह लफ्ज कहा कि क्या यह टैक्स है?

बहरहाल वसूल शुदा चन्दा की एक रक़म हज़रत के पास भेज दी गई। चन्द ही रोज़ बाद उसमें से गयारह रुपये वापिस आगए और कोपन पर तहरीर था कि दुकानदार से रुपया लेकर रवाना करना मुझे पसन्द नहीं उसको यह रुपिया लेकर रवाना करना मुझे पसन्द नही उसको यह रुपिया वापिस दे दो। (अन्फासे कुदसिया, सफ़हा १८६)

अल्लाहु अकबर! कहां सिलहट कहाँ देवबन्द। लेकिन वाकिआ की नौइय्यत पढ़ कर बिल्कुल ऐसा लगता है कि जैसे उस दुकान की तुर्श रू का वाकिआ बिल्कुल "हज़रत" के सामने पेश आया हो।

यह है जज़बए अक़ीदत की कारफ़रमा कि जिसे मान लिया मान लिया।

तीसरा वाकिआ

देहली के मौलवी अब्दुल वहीद सिद्दीक़ी ने "अज़ीम मदनी नम्बर" के नाम से अपने अखबार न दुनिया का एक नम्बर शाए किया था। मौसूफ़ ने अपने इस नम्बर में मौलवी हुसैन अहमद साहेब की गैब दानी से मुतअ़ल्लिक मुरादाबाद जेल के दो वाक़िए नक़ल किये हैं जो जैल म दर्ज किए जाते हैं लिखते हैं कि:—

"एक दिन हज़रत के नाम पानों का पारसल आया जिसका इल्म सिर्फ बनरजी साहेब (जेलर) को ही था और किसी शख़्स को न था। मौसूफ़ ने वह पारसल ब नज़रे इहतियात रोक लिया थोड़े अर्से के बाद हस्बे मामूल बारकों के मुआइना के लिए गए। हज़रत मदनी के साथ उस वक़्त हाफ़िज़ मुहम्मद इब्राहीम साहेब और दिगर हज़रात थे जैसे ही जनाब बनरजी साहेब हज़रत के सामने आए तो हज़रत ने फ़रमाया क्यों साहेब। आपने मेरा पानों का पार्ससल रोक लिया है। खैर कुछ हर्ज नहीं आज उसम से सिर्फ ६ पान दे दिजिए परसो तक दूसरा पारसल आजाएगा।

जनाब बनरजी साहेब को बड़ा तअज्जुब हुआ कि इस वाक़िए का इल्म हज़रत को कैसे हुआ। मौसूफ ने चुपके से पान लाकर हाजिर कर दिये हजरत ने उसम से सिर्फ ६ अदद पान ले लिए और बकिया वापिस फरमा दिये और फ़रमाया मेरा पान परसों तक आएगा। उसको न रोकिएगा तीसरे दिन हस्बे र्शाद पानों का पारसल आया अब मौसूफ़ को ख़्याल हुआ कि यह को मामूली शख़्स नहीं बल्कि को पहुँचे हुए फकीर मालूम होते हैं। (रोज़नामा न दुनिया देहली का अजीम मदनी नम्बर, सफ़हा २०८)

इसे कहते हैं एक तीर से दो निशाना। गुज़िश्ता का हाल भी बता दिया कि मेरा पानों का पारसल आया हुआ था उसे आपने रोक लिया और आइन्दा की भी ख़बर दे दी कि परसो तक मेरा पानों का पारसल फ़िर आएगा उसे न रोकियेगा।

अब इस वाक़िआ के ज़ैल में सबसे बडा मातम उस सग दिली का है कि यहाँ गुजिशता और आइन्दा का इल्म तो खुदा

तक पहुँचे हुए फकीर की अ़लामत ठहराली लेकिन जिस महबूब की रसाई जाते किब्रिया तक बिला वास्ता हुई वहाँ यह अलामत तस्लीम करते हुए उन हज़रात को शिर्क का आज़ार सताने लगता है।

चौथा वाकि़आ

उसी जेल का दूसरा वाकि़आ मौसूफ़ ब्यान करते हैं कि:–

'उन्ही दिनों जेल में मौलाना के नाम कहीं से को खत आया था जिस पर मुहकमाए सेंसर की मुहर लगी हुई थी जेलर ने वह खत़ मौलाना को देदिए इन्सपेक्टर जनरल की तरफ से बाज़ पुर्स हुई और उसी जुर्म मे जेलर को मुअत्तल कर दिया गया।

इसी वाकि़आ के फौरन बाद साहेबे मौसूफ मौलाना की खिदमत में पहुँचे देखते ही मुस्कुरा कर मौलाना ने फरमाया पान जो दिये थे उससे मुअत्तल हुए। पान न देते तो क्या होता। उसको सखत हैरत थी कि यह वाकिआ अभी–अभी दफ़तर में हुआ है किसी को ख़बर तक नहीं उन्हें क्यों कर इल्म हुआ। उन्होंने अपनी परेशानी का इजहार किया तो फरमाया इन्शाअल्लाह कल तक बहाली का हुक्म आ जाएगा तुम मुतमइन रहो। उनकी हैरत की इन्तेहा न थी। दूसरे दिन डाक में जो पहली चीज हाथ में आ वह मुअ़त्तली के हुक्म की मंसूखी और बहा़ली थी इस वाकि़आ से बनरजी साहेब और दिगर ओहदेदाराने जेल हज़रत के मोतकिद हो गए (नई दुनिया, देहली का अ़जीम मदनी नम्बर, सफहा: २०८)

यहॉ भी एक तीर में दो निशाना है। गुजिशता की भी ख़बर

दे दी और आइन्दा का भी हाल बता दिया।

यह सोचकर आँखों से आँसू टपकने लगता है कि जिस कमाल को अपने शैख़ के हक़ में काफ़िरों के मोतक़िद होने को ज़रिया तस्लीम किया गया. उसी कमाल को जब मुसलमान अपने नबी के हक़ में तस्लीम करते हैं तो उन्हें मुश्रिक समझने लगते हैं।

चौथा बाब जो शैख़ देवबन्द मौलवी हुसैन अहमद साहेब के हालात व वाक़िआत पर मुश्तमिल था यहाँ पहुँच कर तमाम हो गया।

अब आपको यह फ़ैसला करना है कि "तस्वीर के पहले रूख़" में जिन एतेक़ादातात को उन हजरात ने अंबिया व औलिया के हक़ में शिर्क क़रार दिया था अपने और अपने बुजुर्गों के हक़ में वही एतक़ादात ऐने इसलाम क्यो कर बन गए।

तसवीर के पहले रूख़ में अपने जिन मोतकेदात का इज़हार किया गया है या तो वह बातिल है या फिर तस्वीर के दूसरे रूख़ म जो वाक़िआत नक़ल किए गए हैं वह गलत हैं। इन दोनों बातों में से जो बात भी क बूल की जाए मजहबी दयानत दीनी एतमाद और इल्मी सकाहत का खून ज़रूरी है

ग़ैरत हक का जलाल अगर नुक़्तए एतदाल की तरफ़ लौट आया हो तो वर्क़ उलटिये और पाँचव बाब का मुताला कीजिए।

पाँचवां बाब

अकाबिरे देवबन्द के मुर्शिदे मुअ़ज्जम हज़रत मौलाना हाजी इमदादुल्लाह साहेब थानवी के ब्यान म

इस बाब में हज़रत शाह हा़जी इमदादुल्लाह साहेब के मुतअ़ल्लिक़ मौलवी मुहम्मद कासिम साहेब नानौतवी मौलवी अश्रफ़ अ़ली साहेब थानवी और मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही वग़ैरहुम की रिवायात से वह वाकिआ़त व हा़लात जमा कि गऐ हैं जो अ़कीदए तौहीद के तकाजों से तसादुम मजहब से इन्हिराफ़ और मुँह बोले शिर्क को अपने बुजुर्गों के हक़ में सलाम व मान बना लेने की शहादतों से बोझल हैं।

चश्मे इन्साफ़ खोल कर पढ़िये और ज़मीर की आवाज़ सुन्ने के लिए गोश बर आवाज़ रहिए।

सिलसिलए वाक़िआत

(१)

ख़बर रसानी का एक नया ज़रीया: -

हज़रत शाह इमदादुल्लाह साहेब से मुतअल्लिक जेल के अकसर वाक़िआत "करामाते इमदादिया" नामी किताब से अख़ज किये गऐ हैं। जो मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहेब नानौतवी मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही और मौलवी अशरफ़ अली साहेब थानवी वग़ैरहुम की रिवायात पर मुश्तमिल है यह किताब कुतुब ख़ाना हादी देवबन्द से शाए हुई है।

इस किताब में हज़रत शाह साहब के एक मुरीद मौलाना मुहम्मद हसन साहब अपना वाक़िआ ब्यान करते हैं कि—

"एक दिन जुहर के बाद मैं और मौलवी मुनव्वर अली और मुल्ला मुहिब्बुद्दीन साहेब को जरुरी बात अर्ज़ करने को हज़रत की ख़िदमत में हाज़िर हुए हज़रत हस्बे मामूल ऊपर जा चुके थे को आदमी था नहीं कि इत्तिला करा जाती। आवाज देना अदब के खिलाफ़ था। आपस में मश्विरा यह किया कि हजरत के क़ल्ब की तरफ़ मुतवज्जह होकर बैठ जाए बात का जवाब मिल जाएगा। या हज़रत ख द तशरीफ़ लाए गे।

थोड़ी देर न गुज़री थी कि हजरत ऊपर से तशरीफ़ नीचे लाए हम लोगों ने माज़रत की इस वक्त हज़रत लेटे हुए थे ना हक़ तकलीफ हुई। इर्शाद फ़रमाया कि तुम लोगों ने लेटने भी दिया क्यों कर लेटता। (करामाते इमदादिया, सफ़हा: ९३)

देख रहे हैं आप। मुराकिबा उन हज़रात के यहाँ ख़बर रसानी का कितना आम ज़रिया है। जब चाहा और जहाँ चाहा गर्दन झुका और गुफ़्तगू करली या हाल मालूम कर लिया न इधर कोइ जहमत न उधर को सवाल कि दिल के मखफी इरादो पर क्यो कर इत्तेला हुई। वाएरलेस की तरह एक तरफ़ सिगनल दिया और दूसरी तरफ़ वसूल कर लिया।

लेकिन कितनी शर्म नाक है दीन में यह पासदारी कि अपने और अपने "शैख" के सवाल पर शिर्क के सारे ज़ाबते टूट गए। और जो बात नबी और वली के हक में कुफ़ थी वही अपने शैख के हक मे क्यू कर इस्लाम बन गई।

(2)

एक मज़हब शिकन वाकिआ

अब एक और दिलचस्प किस्सा सुनिये।

मौलवी मुज़फ्फर हुसैन साहेब कांधलवी देवबन्दी जमाअत के माने हुए बुज़ुर्गों में है। थानवी साहेब उनकी रिवायत से अपने पीर व मुर्शिद हज़रत शाह साहेब का एक अजीब व ग़रीब वाकिआ नकल करते है कि:-

"हज़रत मौलाना मुज़फ़्फ़र हुसैन साहेब मर्हूम मक्कए मुअज्ज़मा में बिमार हुए और इश्तियाक़ था कि मदीनए मुनव्वरा में वफ़ात हो हाजी साहेब से इस्तिफसार किया कि मेरी वफ़ात मदीनए मुनव्वरा में होगी या नहीं? हाजी साहेब ने फ़रमाया कि मैं क्या जानुं? अर्ज किया हज़रत! यह उज़्र तो रहने दीजिए जवाब मर्हमत फ़रमाइऐ! हज़रत हाजी साहेब ने मुराकिब होकर फ़रमाया कि आप मदीनए मुनव्वरा में वफ़ात पाऐंगे।" (कससुल अकाबिर, सफहा: १३६), मुसन्निफ़ मौलवी अशरफ़ अली थानवी)

बताइऐ। यह आँखों से लहू टपकने की बात है या नही निस्फ़ सदी ये यह लोग चीख़ रहे हैं कि सिवाए खुदा के किसी कोई इल्म नहीं कि कौन कहाँ मरेगा। यहाँ तक कि पैगम्बरे आज़म सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के इल्मे गैब के इन्कार मे "वमा तदरी नफ्सुन बे अय्ये अर्जिन तमुत" वाली आयात इन हज़रात की नोके ज़बान व क़लम से हर वक़्त लगी रहती है हालाँ कि यह आयत अब भी कुरआने करीम में मौजूद है लेकिन अपने शैख़ के बारे में इन हजरात की खुश अक़ीदगी मुलाहिजा फ़रमाइये कि उन्हों ने मुराकिबा करते ही एक ऐसी बात मालूम कर ली जो सिर्फ़ खुदा का हक़ है और अपनी मख़लूक़ मे से किसी को भी ख दा ने यह इल्म नहीं अता फरमाया जैसा कि फतेह बरेली का दिलकश नज़ारा नामी किताब में देवबन्दी जमाअत के मोतमिद वकील मौलवी मंजूर नोमानी तहरीर फ़रमाते हैं:–

> "वह पाँच ग़ैब (जिनमें मरने की जगह का भी इल्म शामिल है) उन को हक़ तआला ने अपने लिये ख़ास कर लिया है उनकी इत्तिला न किसी मुकर्रब फ़रीशते को दी न किसी नबी व रसूल को।" (सफ़हा: ८५)

फिर मुराक़िबा और क़ल्बी तवज्जह की यह कुव्वत जिसने चश्मे ज़दन में पर्दए ग़ैब का एक सरबस्ता राज़ मालूम कर लिया नबीए अ़र्बी सल्लल्लाहो अ़लैहि वसल्लम के हक़ में यह हज़रात तस्लीम नहीं करते जैसे कि यही मोलवी साहेब जो अपने पीर व मुर्शिद के हक़ में उस अज़ीम क़ुव्वते इन्केशाफ़ के खुद क़ाएल हैं। अपनी किताब हिफ़्जुल इमान में सय्यदे काएनात

सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम की गैबी कुव्वते इदराक पर बहस करते हुए लिखते हैं।

> "बहुत से उमूर में आप का खास एहतिमाम से तवज्जह फ़रमाना बल्कि फ़िक्र व परेशानी में वाक़े होना साबित है क़िस्सए इफ्क में आपकी तफ़्तीश व इन्किशाफ बा बलग वजूह सहा में मजकूर हैं मगर सिर्फ तवज्जह से इन्किशाफ़ नहीं हुआ बाद एक माह के वही के जरिये इतमिनान हुआ। (सफहाः ७)

थानवी साहेब का यह ब्यान अगर सही है तो बज़ाहिर इसकी दो ही सूरत समझ मे आती है कि या तो हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम की गैबी कुव्वते इदराक मआज़ल्लाह इतनी कमजोर थी कि मखफी हकाएक़ की तह तक पहुँचने से कासिर रह गई या फिर मआजल्लाह बारगाहे खुदावन्दी में उन्हें तकर्रुब का वह दर्जा हासिल नही था कि तवज्जह करते ही इन्केशाफ हो जाता और एक माह फ़िक्र व परेशानी में मुबतिला रहने की नौबत न आती। और फिर इस क़िस्म का हादिसा एक बार नहीं पेश आया उसे इत्तिफाक़ पर महमूल कर लिया। जाए बल्कि थनवी साहब के कहने के मुताबिक़ बहुत से उमूर में इस तरह के हालात से हुज़ूर को गुज़रना पड़ा।

अब आप ही फ़ैसला कीजिए कि अपने रसूल के हक़ मे ज़हन की बेगानगी और क़लम की बेवफ़ाई का क्या इससे भी बढ़कर और कोई सबूत चाहिए कि अपने शैख़ के इल्म की तहसीन और रसूल के इल्म की तंक़ीस दोनों का मुसन्निफ एक ही शख्स है और फ़िर इस वाक़िआ में हुस्ने एतक़ाद का सब से दिलचस्प तमाशा तो यह है कि जब शाह साहेब ने कुरआन की आयत के ब मौजिब अपनी लाइल्मी का इज़हार किया तो इस

पर वह ख़ामोश नहीं हो गए बल्कि यह कह कर यह उज्र तो रहने दीजिए उनकी ग़ैब दानी के मुतअल्लिक अपने दिल के यक़ीन का बिल्कुल नक़ाब उलट दिया।

अब इसका फ़ैसला आप ही कीजिए कि बिल्कुल एक ही तरह के मुक़द्दमा में इन हज़रात के यहाँ सोचने का अन्दाज अपने और बेगाने की तरह क्यों है?

(3)

<u>एक ज़मीन के इल्मे मोहीत का ऐक अजीब वाकिआ</u>

अब एक पुर लुत्फ़ और हैरत अफ़्ज़ा किस्सा सुनिए। शाह साहेब के ख़ास मुरीदों में मौलवी मुहम्मद इस्माइल नामी एक साहेब गुज़रे हैं करामाते इमदादिया में यह अपने भाई की ज़बानी यह अजीब व गरीब वाक़िआ नकल करते है कि -

> मैं ने अपने बिरादरे मुअज़्ज़म हाजी अब्दुल हमीद साहेब से सुना है कि एक दफ़ा मौलवी मुहीउद्दीन साहेब फ़रमाते थे कि चूँकि हजरत हाजी साहब अर्सए दराज़ से ब वजहे ज़ोअफ़े बदन के हज करने से माज़ूर थे। हमने एक दोस्त से कहा कि आज ख़ास यौमे अरफ़ात (यानी यौमुल हज है) देखना चाहिए कि हज़रत कहाँ हैं? उन्होंने मुराकिब होकर देखा कि हज़रत जबले अरफ़ात के नीचे तश्रीफ़ रखते हैं। हम लोगों ने बाद को अर्ज़ किया कि आप यौमे अर्फ़ात में कहाँ थे? हज़रत ने फ़रमाया कहीं भी नही मकान पर था हम लोगों ने अर्ज़ किया कि आप तो फलाँ जगह तश्रीफ़ रखते थे। हज़रत ने फ़रमाया कि या अल्लाह लोग कहीं भी छुपा नहीं रहने देते। (करामाते इमदादिया, सफ़हा: २०)

यह तो नहीं कहा जा सकता कि शाह साहेब ने गलत तौर पर कह दिया कि वह मकान पर थे। इस लिये शाह साहेब को गलत बयानी के इल्जाम से बचाने के लिये ये मानना पड़ेगा कि उस दिन वह मकान पर भी थे और जबले अर्फ़ात के नीचे भी।

लेकिन अपने शैख के हक़ में दिल की वारफ्तगी का यह तसर्रुफ याद रखने के काबिल है कि एक वजूद को मुतअद्दिद मकामात में मौजूद तसव्वुर करते हुए न उन्हें अक्ल का कोई इस्तेहाला नजर आया और न कानूने शरीअत की कोइ ख़िलाफ़ वर्ज़ी महसूस हुई और फिर दाद दीजिए उन तलाश करने वालों को जो घर बैठे सारा जहाँ छान आए और बिल आख़िर जबले अर्फ़ात के नीचे अपने शैख को पालिया। इसे कहते हैं इल्म व इदराक की गैबी तवानाई जो खानक़ाहे इमदादिया के दुरवेशों को तो हासिल है लेकिन देवबन्दी मजहब में सय्यदुल अम्बिया को हासिल नही है।

और शाह साहेब का यह जवाब कि "या अल्लाह लोग कहीं भी छुपा रहने नहीं देते" मुरीदीन व मुतवस्सेलीन की ग़ैब दानी के सबूत के लिए एक इल्हामी दस्तावेज़ से कम नहीं है।

मान की बोझल शहादतों को गवाह बना कर कहिए कि हक व बातिल की राहों का इम्तियाज़ महसूस करने के लिए क्या अब भी किसी मज़ीद निशानी की ज़रूरत बाकी है?

(४)

अक़ीदए तौहीद से एक ख़ रेज़ तसादुमः-

निगाह पर बोझ न हो तो अक़ीदए तौहीद के साथ ख़ रेज़ तसादुम का एक वाकिआ पढ़िये। इसी करामाते इमदादिया म ब्यान किया गया है कि उन्ही शाह साहेब के एक मुरीद किसी बहरी जहाज़ से सफ़र कर रहे थे कि एक तालातुम खेज़ तूफ़ान से जहाज़ टकरा गया। करीब था कि मौजों कि हौलनाक

तसादुम से उसके तख़्त पाश पाश हो जाएँ।

अब इसके बाद का वाक़िआ ख़ुद रावी की जबानी सुनिये लिखते हैं कि:–

"उन्होंने जब देखा कि अब मरने के सिवा चारा नहीं है इसी मायूसाना हालत में घबरा कर अपने पीर रौशन ज़मीर की तरफ़ ख़्याल किया इस वक़्त से ज़्यादा और कौन सा वक़्त इमदाद का होगा। अल्लाह तआ़ला समीअ बसीर और कार साज़े मुतलक है। उसी वक़्त आगबोट ग़र्क़ से निकल गया और तमाम लोगों को नजात मिली।

इधर तो यह क़िस्सा पेश आया उधर अगले रोज़ मख़दूमे जहाँ अपने ख़ादिम से बोले ज़रा मेरी कमर निहायत दर्द करती है ख़ादिम ने दबाते दबाते पैराहने मुबारक जो उठाया तो देखा कि कमर छिली हु है और अकसर जगह से खाल उतर गई है। पूछा हज़रत यह क्या बात है कमर क्यों कर छिली फरमाया कुछ नहीं। फिर पूछा आप ख़ामोश रहे तीसरी मर्तबा फिर दरियाफ्त किया। हज़रत यह तो कही रगड़ लगी है और आप तो कहीं तश्रीफ़ भी नहीं ले गए। फरमाया एक आगबोट डूबा जाता था। उसमें एक तुम्हारा और दीनी सिलसिले का भाई था उसकी गिरया व ज़ारी ने मुझे बेचैन कर दिया और आगबोट को कमर का सहारा देकर ऊपर को उठाया जब आगे चला और बन्दगाने ख़ुदा को नजात मिली उसी से छिल गई होगी। और इसी वजह से दर्द है। मगर इस का ज़िक्र न करना (करामाते इमदादिया, सफ़हा: १८)

क़बीले के शैख की गैबी कुव्वते इदराक और खुदाई इख़्तियार व तसर्रुफ का तो यह हाल ब्यान किया जाता है कि उन्होंने हजारो मील की मुसाफ़त से दिल की ज़बान का खामोश इस्तिगासा सुन लिया और सुन ही नहीं लिया बल्कि फौरन ही यह भी मालूम कर लिया की समुंद्र कि ना पैदा किनार उस्अतों में हादिसा कहाँ पेश आया है और मालूम ही नहीं कर लिया बल्कि चश्मे जदन में वहाँ पहुँच भी गए और जहाज़ को तूफ़ान से निकाल कर वापिस लौट आए। लेकिन वाऐरे दिल हिर्मा नसीब की शरारत! कि रसूले कौनैन के हक में इन हजरात के अक़ीदे की ज़बान यह है।

> यह जो बाज लोग अगले बुज़ुर्गो को दूर–दूर से पुकारते हैं और इतना ही कहते हैं कि या हज़रत। तुम अल्लाह की जनाब में दुआ करो कि वह अपनी कुदरत से हमारी हाजत रवा करे और फिर यूँ समझते हैं कि हमने कुछ शिर्क नहीं किया इस वास्ते कि उनसे हाजत नही मागी बल्कि दुआ कराई यह बात ग़लत है इस वास्ते कि गो माँगने की राह से शिर्क नहीं साबति हुआ लेकिन पुकारने की राह से साबित हो जाता है। (तकवियतुल ईमान, सफ़हाः २३)

लेकिन यहाँ तो मांगना भी हुआ और पुकारना भी दो दो शिर्क जमा हो जाने के बावजूद तौहीद पर उन हज़रात की इजारा दारी अब तक क़ाएम हैं और हम सिर्फ़ इस लिए मुश्रिक हैं कि जिन एतक़ादात को वह अपने घर के बुज़ुर्गों के हक़ में रवा रखते हैं उन्ही को रसूले क़ौनेन शहीदे करबला ग़ौस जीलानी और ख़्वाजए ख़्वाजगाने चिश्त के हक़ में अपने जज़बए अक़ीदत का मामूल बना लिया है।

इसी का नाम अगर शिर्क है तो इस इलजाम का हम खुशीये कल्ब के साथ खैर मकदम करते है कि सारी उम्मत का मसलक यही है

यह पाँचवाँ बाब जो हज़रत शाह इमदादुल्लाह साहेब थानवी के हालात व वाकेआत पर मुश्तमिल था यहाँ पहुँच कर तमाम हो गया। तस्वीर के दानों रूखों का मुन्सिफाना जाएजा लेने के बाद आप वाज़ेह तौर पर यह महसूस करेंगे कि इन हज़रात के यहाँ दो तरह की शरीअतें मुतवाजी तौर पर चल रही है।

एक ही अक़ीदा जो पहली शरीअ़त में कुफ्र है शिर्क है और ना मुमकिन है यहीं दूसरी शरीअ़त में इस्लाम है इमान है और अमरे वाक़आ है।

'ज़मीर का यह चीख़ता हुआ मुतालिबा अब किसी मसलेहत के इशारे पर दबाया नहीं जा सकता कि दो शरीअतों का इस्लाम हरगिज़ वह इस्लाम नहीं हो सकता जो खुदा के आखरी पैगम्बर के ज़रिये हम तक पहुँचा है।

गैरते हक का जलाल अगर नुकतए एतदाल की तरफ़ वापिस लौट आया हो तो वर्क उलटिये और इस तिलिस्म फरेब के अजाएबात का बाकी हिस्सा भी देख लीजिए।

हसरते दीद की आँखों को न शिकवा हजार
सुबह के साथ चलो शाम भी उनकी देखें

❖❖❖

छटा बाब

मुतफ़र्रिक़ात के ब्यान में:-

इस बाब में देवबन्दी जमाअत के मुख़्तलिफ़ मशाहीर व अकाबिर के हालात व वाकेआत उन्हीं हज़रात के लिटरेचर से जमा किये गए हैं।

जिन में अक़ीदए तौहीद से तसादुम अपने मज़हब से इन्हेराफ़ और मुंह बोले शिर्क को अपने हक़ मेंइस्लाम व ईमान बना लेने की साजिशों के ऐसे नमूने आप को मिलेंगे कि आप हैरान व शश्दर रह जाऐंगे।

सिलसिलए वाकिआत

मौलवी मुहम्मद याकूब साहेब सदर मुदर्रिस मदरसा देवबन्द का किस्सा:-

कश्फ व ग़ैब दानी की एक तवील दास्तान:-

रोज़ नामा अलजमीअत देहली "ने ख्वाजा गरीब नवाज नम्बर" के नाम से एक नम्बर शाए किया है। उसमें क़ारी तैय्यब साहेब मुहतमिम दारुल उलूम देवबन्द का एक मज़मून शाए हुआ है क़ारी साहेब मौसूफ लिखते हैं:-

"हज़रत मौलाना याकूब साहब रहमतुल्लाह अलैहि दारूल उलूम देवबन्द के अव्वलीन सदर मुदर्रिस थे। न सिर्फ आलमे रब्बानी बल्कि आरिफ बिल्लाह और साहेबे कश्फ व करामत अकाबिर में से थे। उनके बहुत से मकशूफ़ात अकाबिर मर्हूमीन की ज़बानी सुन्ने मे आए, हज़रत मौलाना पर जज़्ब की कैफ़िय्यत थी। और बाज दफा का मजज़ूबाना अन्दाज़ से जो कलेमात जबान से निकल जाते थे वह मिन व अन वाक़िआत की सूरत मे सामने आ जाते थे। दारूल उलूम देवबन्द की दर्सगाहे कला भौसूम बा नौदरह के वस्ती हाल में हज़रत मर्हूम की दर्सगाहे हदीस थी। नौरदाह के वस्ती दर के सामने वाली एक जगह के बारे में फ़रमाया कि जिस की नमाज़े जनाज़ा उस जगह होती है वह मग़फूर हो जाता है (यानी बख्श दिया जाता है)

(ख्वाजा ग़रीब नवाज़ नम्बर सफहा ५)

यह तो एक दीवाने की बात थी लेकिन अब दानिश्वरो के मान व यक़ीन का आ़लम मुलाहिज़ा फ़रमाइये लिखते हैं कि:-

चुनान्चे इस वक़्त दारूल उलूम में जितने जनाजे मुतअल्लेकीन दारूल उलूम या शहर के हज़रात के आते हैं

उसी जगह लाकर रखे जाने का मामूल है। अहक़र ने सिमेंट से उस जगह को मुशख्खस (मुमताज़) करा दिया है .(सफ़हा. ५)

बुजुर्गाने दीन मे इसाले सवाब के लिए किसी वक्त के तख़्सीस या ज़िक्र व ब्यान के लिए किसी दीन की ताईन पर तो यह हज़रात बिदअत व हराम का शोर मचाते हैं लेकिन यहाँ उन से अब कोई नहीं पूछता कि जनाजे की नमाज तो दारूल उलूम के सारे एहाते में हो सकती है लेकिन एक खास जगह की तख़्सीस और उस पर अ़मल दर आमद का यह एहतिमाम क्या बिदअत नहीं है?

बहरहाल जिमनी तौर पर दर्मियान में यह बात निकल आई अब फिर उसी सिलसिलए ब्यान की तरफ़ मुतवज्ज हो जाइये फरमाते हैं:-

"इस मजजूबियत के सिलसिल मे मौलाना के ज़ेहन में यह बात बैठ गई थी कि मै नाकिस रह गया हूँ हज़रत पीर व मुर्शिद हाजी इमदादुल्लाह साहेब क ऐसा सिर्हू तो मक्का मे है जहाँ जाना मुश्किल है लेकिन मेरी तकमील दोनों बुजुर्ग हजरत नानौतवी और हजरत गंगोही कर सकते हैं इसलिए बार बार उन से फरमाते कि भाई मेरी तकमील करवाओ। यह हजरत जवाब देते कि अब आप में कोई कमी नहीं है और जितने कुछ भी है सो वह मदरसा देवबन्द में हदीस पढ़ाने ही से पूरी होजायेगी। इसलिए आप दर्स हदीस मैं मशग़ूल रहे यही दर्स आप की तकमील का ज़ामिन है। इस पर खफा हुए कि यह दोनो बुख़्ल करते हैं सब कुछ लिये बैठे हैं और मेरे हक में बुख़्ल कर रहे हैं। (सफ़हा ५)

इस के बाद लिखा है कि इधर से मायूस हो जाने के बाद उन्होंने अजमेर शरीफ़ हाजरी का इरादा कर लिया ताकि ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ के हुज़ूर मे अपनी तकमील कर सकें। चुनान्चे एक दिन वह इसी जजबए शौक़ मे उठे और अजमेर के लिए रवाना हो गए वहाँ पहुँच कर

उन्होंने रौज़ए ख्वाजा के करीब एक पहाडी पर अपनी कुटिया बनाई और वहीं क़याम पज़ीर हो गए।

लिखा है कि अकरम मज़ार शरीफ़ पर हाजिर हो कर देर देर तक मुराकिब रहते एक दिन मुराकिबे मे हज़रत ख्वाजा साहेब की तरफ़ से इशारा हुआ।

> "आप की तकमील मदरसए देवबन्द मे हदीस पढ़ाने ही से होगी। आप वही जाऐं और साथ ही हज़रत ख़्वाजा का यह मकूला भी मुंकशिफ हुआ कि आग की उमर के दस साल रह गए है। उस मे यह तकमील हो जाएगी (सफहा ६)

लिखा है कि इस वाकिआ के दूसरे ही दिन वह अजमेर से वापिस हुए और सीधे अपने वतन मालूफ़ नानौता पहुँचे। वहाँ से फिर गगोह का कस्द किया। हज़रत गगोही हस्बे मामूल अपनी खानकाह मे तशरीफ फरमा थे किसी ने ख़बर दी कि मौलाना मुहम्मद याकूब साहब आ रहे हैं। हज़रत नाम सुनते ही चारपाई से खड़े हो गए। अब इस के बाद का वाकिआ खुद कारी साहेब मौसूफ की जबानी सुनिये। लिखा है कि:—

> "जब मौलाना मुहम्मद याकूब साहेब करीब आ गए। तो बिला किसी गुफ्तगू के सलाम अलैक के बाद हजरत गंगोही ने फरमाया: हम पे कुछ एहसान नहीं हम पे कुछ एहसान नहीं है।
>
> खुद्दाम भी तो वही कह रहे थे जो हज़रत ख़्वाजा ने फरमाया है मगर छोटों की कौन सुनता है? जब ऊपर से भी वही कहा गया जो ख़ुद्दाम अर्ज़ किया करते थे तब आप ने क़बूल फरमाया। (ख़्वाजा गरीब नवाज़ नम्बर, सफ़हा: ६)

मज़हबी मिज़ाज के ख़िलाफ होने के बावजूद यह वाकिआत सिर्फ इस लिए नक़्ल किया गया है कि इस से मदरसए देवबन्द की फज़ीलत

साबित होती है। वर्ना जहाँ तक ख्वाजा ग़रीब नवाज के रूहानी एकतिदार और गैबी तसर्रुफ पर यकीन व एतमाद का तअल्लुक है। तो यह हजरात न सिर्फ यह की उसके मुंकिर हैं बलिक उसके खिलाफ जिहाद करना अपने दीन का अव्वलीन फरीजा समझते है जैसा कि गुजिश्ता औराक मे इस तरह के कई हवाले आप की नजर से गुजर चुके हैं।

बहरहाल कैसी भी जजबे के ज़ेरे असर यह वाकिआ सफ़हए किरतास पर आया हो हम कारी साहेब मौसूफ़ से चन्द सवालात पर अपने दिल का इतिमनान जरूर चाहेगे।

पहली बात तो यही है कि ख्वाजा ग़रीब नवाज़ रजिअल्लाहो तआला अन्हो को अगर इल्म ग़ैब नही था तो उन्हें क्यों कर मालूम होगया कि देवबन्द मे एक मदरसा है जहाँ हदीस का दर्स दिया जाता है और मौलवी मुहम्मद याकूब साहेब वहाँ से दर्से हदीस छोड़ कर हमारे यहा आए है।

और दूसरी बात यह है कि उन्हे यह खबर क्यो हुई कि आने वाला मंजिले सुलूक की तकमील के लिये आया है और उसकी तकमील वहाँ नही होगी मदरसा देवबन्द मे होगी।और तीसरी बात तो निहायत तअजुब खेज है कि उन्हे यह भी मालूम हो गया कि उनकी उमर के इस साल बाकी रह गये हैं इस मुद्दत में तकमील हो जाएगी

और चौथी बात तो सब से ज़्यादा हैरत अंगेज है कि मुराक़िबा मे जो बात ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ ने मौलवी याकूब साहेब से फरमा थी बग़ैर किसी इत्तला के मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही को इसकी ख़बर क्यों कर होगी? लेकिन सब से बडा मातम तो उस सितम ज़रीफ़ी का है कि इतने शिर्किय्यात के साथ मुसालेहत करने के बावजूद यह हज़रात तौहीद के इतन्हा इजारादार है और हमारे लिये मुश्रिक क़ब्र परस्त और बिदअ़ती के अल्क़ाब तराशे गए हैं लेकिन आसतीनों से लहू टपकने के बाद क़तल का छुपाना बहुत मुश्किल है।

(२) हज़रत शाह वली उल्लाह साहब मोहद्दिस देहलवी के क़िस्से

शिकमे मादर से गैबी इदराक:-

मौलवी हाफ़िज़ रहीम बख़्श साहब देहलवी ने "हयात वली" के नाम से हज़रत शाह साहब क़िब्ला की सवानेह हयात लिखी है उस मे उन की विलादत से क़ब्ल का एक निहायत हैरत अंगेज वाकिआ नकल किया है लिखते हैं कि:-

> "अभी मौलाना शाह वलीउल्लाह साहब वालिदए मोहतरमा के बतने मुबारक ही मे तशरीफ रखते थे कि एक दफा (उन के वालिदे बुज़ुर्गवार) जनाब शेख अब्दुल रहम साहेब की मौजूदगी मे एक साएला आई आप ने रोटी के दो हिस्से कर के एक उसे दिया और एक रख दिया।
>
> लेकिन जूंही साएला दरवाजे तक पहुँची शेख साहेब ने दोबारा बुलाया और बकिया हिस्सा भी इनायत कर दिया और जब चलने लगी तो फिर आवाज दी और जिस क़द्र रोटी घर मे मौजूद थी सब दे दी। इसके बाद घर वालों को मुखातिब करके फरमाया कि पेट वाला बच्चा बार बार कह रहा है कि जितनी रोटी घर में है सब उस मुहताज मिस्कीन को राहे खुदा मे दे दो। (हयाते वली सफ़ा:३६७)

गोया शाह साहब बतने मादर ही से देख रहे थे कि रोटी का एक हिस्सा बचाकर घर में रख लिया गया है और जब उनके कहने पर बाकी हिस्सा भी उनके वालिद ने दे दिया तो उसे भी उन्होने देख लिया और साथ ही यह भी मालूम कर लिया कि घर में अभी और रोटियां रखी हुई हैं जब उनके कहने पर सब का सब दे डाला तब वह ख़ामोश हुए।

रसूले अरबी के इल्म व मुशाहिदा पर तो सैकड़ों सवालात उठाए जाते हैं लेकिन यहाँ कोई नहीं पूछता कि एक जनीन बच्चे के सर मे

वह कौन सी आख थी जिस ने पर्दए शिकम से दीवारो और घर के बर्तनो मे शिगाफ डाल कर सारा छुपा हुआ हाल देख लिया।

न अकीदए तौहीद से कोई तसादुम लाज़िम आया और न इस्लाम व शरीअत की कोई दीवार मुंहदिम हुई।

हज़रत शाह अब्दुल रहीम साहब का किस्साः -

जमीन की वुस्अतें एहातए नज़र मेंः -

खुद शाह साहब की ज बानी हयाते वली का मुसन्निफ उनके वालिदे माजिद की गैबी कुव्वते इदराक का एक अजीब व गरीब किस्सा नकल करता है। लिखा है किः–

> 'एक दफा मुहम्मद कुली औरंगज़ेब के लश्कर मे किसी सम्त रवाना हुआ था। चूँकि जमानए दराज तक उसकी कोई खबर अज़ीज व अकरबा को नही मिली। इस लिए उसकी मफकूदुल ख़बरी ने बिल खुसूस उस के बिरादर मुहम्मद सुलतान को सख्त बेचैन कर दिया और जब वह बहुत ही बेताब हुआ तो शेख की खिदमत में हाज़िर होकर इलतजा की उस गुमशुदा की खबर दे।
>
> शेख फ़रमाते हैं कि मैं ने तवज्जह की और हर चन्द के उसे लश्कर के एक एक ख़ेमे में ढूंढा लेकिन कहीं उसका सुराग न मिला। अमवात के जुमरे मे तलाश किया वहा भी पता नही लगा अज़ान बाद मैं ने लश्कर के इर्द गिर्द गौर में डूबी हुई नज़रों से देखा मालूम हुआ कि गुस्ले सेहत पाकर शुतरी (भूरे) रंग के लिबास ज़ेबे तन किए हुए एक कुर्सी पर जलवा आरा है और वतने मालूफ़ में आने का तहिय्या कर रहा है चुनान्चे मैं ने उसके भाई से ब्यान किया कि मुहम्मद कुली जिन्दा है और दो तीन महीने में आना चाहता है। चुनान्चे जब वह आया तो ब जिनसेही यही किस्सा ब्यान किया।
>
> (हयाते वली, सफहाः २७२)

अब आप ही इमान व इन्साफ़ से फ़ैसला कीजिए कि यह वाकिआ पढ़ने के बाद किया किसी रूख़ से भी यह ज़ाहिर होता है कि जमीन की वुसअतों में यह जादह पैमाई और लश्कर में पहुँच कर एक एक ख़ेमे की खाना तलाशी फिर वहाँ से मुर्दों के ढेर की छान बीन फिर इर्द गिर्द के मैदानों में जुसतजू देहली में बैठे बैठे ग़ैबी क़ुव्वते इदराक की मदद से अन्जाम दी थी लेकिन सिर पीट लेने को जी चाहता है कि ग़ैबी कुव्वते इदराक और रूहानी तसर्रूफ़ का जो कमाल यह हज़रात एक अदना उम्मती के लिए बे चूँ व चरा तस्लीम कर लेते हैं उसी को रसूले अर्बी सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के हक़ में शिर्क कहते हुए उन्हें कोई तअम्मुल नहीं होता।

हज़रत शाह अब्दुल क़ादिर साहेब देहलवी का क़िस्साः-

(4)

कश्फ़ व ग़ैबदानी का एक निहायत हैरत अंगेज वाक़िआ :

देवबन्दी जमाअत का मोतमद रावी शाह अमीर खाँ ने शाह अब्दुल क़ादिर साहेब देहलवी के कश्फ़ व गैब दानी के मुतआल्लिक़ अपनी किताब अर्वाहे सलासा मे एक निहायत हैरत अगेज वाक़िआ नकल किया है। बयान करते हैं कि:—

"अगर ईद का चान्द तीस का होने वाला होता तो शाह अब्दुल क़ादिर साहेब अव्वल रोज़ तरावीह मे एक पारा पढ़ते और अगर उनतीस का चान्द होने वाला होता तो अव्वल रोज़ दो सेपारे पढ़ते।

चूँकि इसका तजुर्बा हो चुका था इस लिए शाह अब्दुल अज़ीज़ साहब अव्वल रोज़ आदमी को भेजते थे कि देख आओ मियाँ अब्दुल क़ादिर ने आज कए सेपारे पढ़े हैं अगर आदमी आकर कहता कि आज दो पढ़े हैं। तो शाह साहब फ़रमाते कि ईद का चान्द तो उन्तीस ही को होगा यह बात दूसरी है कि अब्र वग़ैरा की वजह से दिखाई न दे। और

हुज्जते शरई न होने की वजह से रूयत का हुक्म न लगा सके।

इस मे मौलवी महमूद हसन साहेब (देवबन्दी) यह इजाफा फ़रमाते थे कि यह बात देहली में इस कदर मश्हूर हो गई थी कि अहले बाज़ार और अहले पेशा के कारोबार इस पर मबनी हो गए। (अरवाहे सलासा: सफ़ा ४६)

हिकायते वाकिआ की इबारत चीख रही है कि यह सूरते हाल किसी एक रमजान के साथ खास नहीं थी बल्कि बिला इल्तिज़ाम हर रमजानुल मुबारक में उन्हें एक माह क़ब्ल ही मालूम हो जाता था कि चान्द २६ को होगा या तीस का।

और मौलवी महमूद हसन साहेब देवबन्दी का यह कहना कि 'अहले बाजार और अहले पेशा के कारोबार उस पर मबनी हो गए" इस अम्र को बिल्कुल वाजेह कर देता है कि उनका कश्फ़ कभी ग़लत नहीं होता, अब आप ही इन्साफ़ से कहिए? यह आंखों से लहू टपकने की बात है या नहीं? कि घर के बुजुर्गों का तो यह हाल ब्यान किया जाता है कि हर साल बिल इलतिजाम वह एक माह क़बल ही छुपी हुई बात मालूम कर लेते थे लेकिन रसूले अनवर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मुतअल्लिक़ उनके अक़ीदे की यह सराहत गुज़र चुकी है कि एक माह के तवील मुद्दत मे भी वह माअज़्ल्लाह छुपी हुई बात नहीं मालूम कर सके।

(5)

ग़ैबी कुव्वते इदराक की एक और हैरत अंगेज़ कहानी:-

उन्ही खाँ साहेब ने अर्वाहे सलासा मे शाह अब्दुल क़ादिर साहेब का एक और वाकिआ नक्ल किया है। लिखा है कि—

"अकबरी मस्जिद जिं शाह अब्दुल क़ादिर साहेब रहते थे उसके दोनों तरफ़ बाजार था, और उस मस्जिद में दोनों तरफ़ हुज्रे और सह दरियाँ थीं उनमें एक सहदरी में शाह अब्दुल क़ादिर साहेब रहते थे और अपने हुजरे से बाहर साह दरी में पत्थर से टेक लगा कर बैठा करते थे।

बाज़ार से आने जाने वाले आपको सलाम किया करते थे। सो अगर सुन्नी सलाम करते तो आप सीधे हाथ से जवाब देते थे और शिआ सलाम करता तो उलटे हाथ से जवाब देते थे। यह ब्यान कर के मौलवी अब्दुल कय्यूम साहब ने फ़रमाया मैं क्या? कह दूं "अल मोमिनो यंज़ोरू बे नूरिल्लाह" (यानी मोमिन अल्लाह के नूर से देखता है।) (अर्वाहे सलासा, सफ़हाः ५५)

"अल मोमिनो यंज़ोरो बेनूरिल्लाह" का फिकरा बता रहा है कि शिआ और सुन्नी के दर्मियान का इम्तियाज़ किसी जाहेरी अलामत की बुनियाद पर नहीं था बल्कि उसी गैबी कुव्वते इदराक के ज़रिये था जिसकी ताबीर मौलवी अब्दुल कय्यूम साहेब ने "नूरे इलाही" से की है।

हिकायते वाकिआ की इबारत से जाहिर होता है कि यह उनके हर रोज़ का मामूल था और जब तक सह दरी में बैठे रहते कश्फ अहवाल का यह सिलसिला बराबर जारी रहता था, अब सोचने की बात यह है कि शाह अब्दुल क़ादिर साहेब के हक़ मे तो कश्फे अहवाल की एक दाएमी और हमा वक्ती कुव्वत तसलीम कर ली गई है जो कुव्वते बीनाई की तरह उन्हें हर वक़्त हासिल रहा करती थी लेकिन शर्म से मुँह छुपा लीजिए कि नबीए मुर्सल सल्लल्लाहो अ़लैहि वसल्लम के हक में कश्फे अहवाल की यही दाएमी और हमा वक्ती क़ुव्वत तस्लीम करते हुए उन हज़रात का अक़ीदए तौहीद मजरूह हो जाता है और शिर्क के ग़म में यह शब व रोज़ सुलगते रहते हैं।

(6)

कश्फ ही कश्फ:-

उन ही शाह अब्दुल क़ादिर साहब की गैब दानी से मुतअल्लिक थानवी साहब की किताब अशरफुल तंबीह के हवाले से एक वाकिआ नक्ल किया गया है लिखा है कि:-

"मौलवी फ़ज़्ले हक़ साहेब शाह अब्दुल कादिर साहेब रहमतुल्लाह अ़लैहि से हदीस पढ़ते थे शाह साहब बड़े साहबे कश्फ थे और जिस रोज मौलवी

फजले हक़ साहेब किसी मुलाज़िम पर किताबें रखवा कर ले जाते गो पहुँचने से पहले खुद ले लेते" शाह साहेब को कश्फ़ से मालूम हो जाता था उस रोज़ मौलवी साहेब को सबक़ नहीं पढाते थे और जब खुद ले जाते तो हज़रत को कश्फ़ हो जाता और उस रोज़ सबक पढाते थे। जामे कहता है:

पेशे अहले दिल निगेहदारेद दिल
ता नबाशद अज़ गुमाने बद खजल।

(अर्वाह सलासा, सफ़हा: ५७)

अब ज़रा इसी के साथ उसी खानदान के शाह इस्माईल देहलवी की यह इबारत भी पढ़ लीजिए। अक़ीदा व अमल का तसादुम वाजेह तौर पर महसूस हो जाएगा।

"यह सब जो ग़ैब दानी का दावा करते हैं" कोई कश्फ़ का दावा रखता है, कोई इस्तिख़ारा के अमल सिखाता है। यह सब झूठे हैं और दग़ाबाज़।

(तक़वियतुल ईमान, सफ़हा: २३)

उल्माए देवबन्द के मोतमिद शाह अब्दुल कादिर साहब भी हैं और शाह इस्माईल देहलवी भी? अब इस अम्र का फैसला उन्हीं के जिम्मे है कि उन दोनो में कौन झूठा है और कौन सच्चा है।

हमे तो यहाँ सिर्फ़ इतना ही कहना है कि बात एक दिन की नहीं थी बल्कि हर रोज़ उन्हें कश्फ़ होता था और कितनी ही दीवारों के हिजाबात के ओट से वह हर रोज़ देख लिया करते थे कि किताब कौन लेकर आ रहा है और किस ने कहाँ से अपने हाथ में ली है। लेकिन यहाँ हमे इतनी बात कहने की इजाजत दी जाए कि अपने नबी के हक़ में उल्माए देवबन्द के दिलों की कुदुरत यहीं से साफ़ ज़ाहिर होती है कि अपने घर के बुज़ुर्गों की निगाहों पर तो दीवार का कोई हिजाब वह हाएल नहीं मानते लेकिन रसूले अनवर सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के हक़ में आज तक वह इसरार कर रहे हैं कि उन्हें दीवार के पीछे का

भी इल्म नहीं था जैसा कि गुजिश्ता अवराक़ में इसका हवाला आप की नज़र से गुज़र चुका है।

(7)

हाफिज़ मुहम्मद ज़ामिन साहेब थानवी का क़िस्सा

कब्र में दिल लगी बाज़ी का वाक़िआ -

यही मौलवी अशरफ़ अ़ली साहेब थानवी अपनी जमाअत के एक बुज ़र्ग हाफ़िज़ मुहम्मद जामिन साहब की क़ब्र के मुतअल्लिक एक निहायत दिल चस्प क़िस्सा ब्यान करते हैं। लिखा है कि.–

"एक साहेब कश्फ़ हज़रत हाफ़िज साहेब रहमतुल्लाह अ़लैहि के मज़ार पर फ़ातिहा पढ़ने गए बाद फ़ातिहा कहने लगे कि भाई यह कौन बुज ़र्ग है? बडे दिल लगी बाज है। जब मैं फ़ातिहा पढ़ने लगा तो मुझ से फ़रमाने लगे कि जाओ किसी मुर्दा पर पढ़ियो। यहाँ जिन्दो पर पढ़ने आए हो? (अर्वाह सलासा, सफ़हा: २०३)

ज़रा अन्दाज़े ब्यान की यह बेसाखतगी मुलाहेज़ा फ़रमाइये। आलमे ग़ैब का पर्दा उठा कर जिस से चाहना बात कर लेना और जब चाहना झांक कर वहाँ का हाल मालूम कर लेना किसी और के लिए मुश्किल हो तो हो लेकिन उन हज़रात के लिये तो गोया शब व रोज का मामूल है और मुर्दो की तारीख में शायद यह पहला दिल लगी बाज मुर्दा है जिसने फातिहा पढ़ने को मना कर के रहमत व सवाब से अपने इस्तिग़ना का इज़हार किया है।

वाकिआ का यह रूख़ भी महसूस करने के काबिल है कि अपने मुर्दो की बड़ाई साबित करने के लिए यह लोग कैसे कैसे जमीन व आसमान के कलाबे मिलाते हैं लेकिन अहले इस्लाम के बुजुर्गों को आजिज़ व हकीर साबित करने के लिये उनके क़लम की नोक कितनी ज़हर आलूद हो जाती है।

(8)

सय्यद अहमद साहब बरेलवी का क़िस्सा

जिस्मे ज़ाहेरी के साथ हुज़ूर का तशरीफ़ लाना और सय्यद अहमद बरेलवी को नींद से जगाना

तबलीग़ी जमाअत के सरबराह मौलवी अबुल हसन अ़ली साहेब नदवी ने सय्यद अहमद साहब बरेलवी के मुतअल्लिक़ अपनी किताब "सीरत सय्यद अहमद शहीद" मे उनका एक अजीब क़िस्सा नक़ल किया है। लिखा है कि:-

> "सत्ताइस्वीं शब को आपने चाहा कि सारी रात जागूं और इबादत करूँ" मगर इशा की नमाज के बाद कुछ ऐसा नीद का गलबा हुआ कि आप सो गए। तिहाई रात के क़रीब दो शख्सों ने आप का हाथ पकड कर जगाया आपने देखा कि आप की दाहेनी तरफ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम और बाई तरफ़ हजरत अबु बकर सिद्दीक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो बैठे है और आप से फरमा रहे है कि अहमद जल्द उठ और गुस्ल कर।
>
> सय्यद साहेब उन दोनो हज़रात को देख कर दौड़ कर मस्जिद के हौज़ की तरफ़ गए और बावजूदे कि सर्दी से हौज़ का पानी यख हो रहा था आपने उससे ग़ुस्ल किया और फारिग़ होकर ख़िदमत में हाज़िर हुए हजरत सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम ने फरमाया कि फर्जन्द आज शबे क़दर है यादे इलाही में मशगूल हो और दुआ व मुनाजात करो उनके बाद दोनों हज़रात तशरीफ़ ले गए।(सीरत सय्यद अहमद शहीद सफ़ाः ८४)

हद हो गई अकाबिर परस्ती की! कि मौलवी अबुल हसन अ़ली नदवी जैसा तरक्क़ी पसन्द मुसन्निफ जिसने सारी ज़िनदगी कदामत पसंद मुस्लमानों के आक़ाएद व रिवायात का मज़ाक उड़ाया है उसे भी अपने मूर्स्सि आला की फज़ीलत व बर्तरी साबित करने के लिये मुश्रिकाना अक़ीदों का सहारा लेना पड़ा।

सेहते वाक़िआ की तक़दीर पर उनसे कोई भी यह सवाल कर सकता है कि आलमे बेदारी में हुज़ूर पुरनूर की तशरीफ़ आवरी का

अकीदा क्या गैब दानी और इख्तियार व तसर्रुफ की उस कुव्वत को साबित नहीं करता जिसे किसी मख़्लूक़ में तस्लीम करना मौलवी इस्माईल साहब देहलवी ने शिर्क क़रार दिया है।

पस हुजूर को अगर इल्म गैब नही था तो उन्हें क्यों कर मालूम हुआ कि सय्यद अहमद बरेलवी मेरा फर्ज़न्द है और वह फलां मुकाम पर सो रहा है फिर हुजूरे अनवर में अगर तसर्रुफ़ की कुदरत नहीं थी तो अपने हरीमे अक़दस से ज़िन्दों की तरह क्यो बाहर तशरीफ लाए और उस पैकर में ज़हूर फरमाया कि देखने वाले ने माथे की आंखों से उन्हें देखा और पहचान लिया और यह सारा वाकिआ चश्मे ज़दन में नही खत्म हो गया कि उसे वाहिमा का तसर्रुफ करार दिया जा सके बल्कि इतनी देर तक तशरीफ फरमा रहे कि सय्यद साहब गुस्ल से फारिग़ होगए।

यह सारे इख्तियारात व तसर्रुफ़ वह है कि ब अताए इलाही भी हुजूर की जानिब उनकी निस्बत की जाए जब भी देवबन्दी मजहब मे यह शिर्क सरीह है लेकिन यह सारा शिर्क सिर्फ इस जजबे मे गवारा कर लिया गया है कि कबीले के "शैख़" की बडाई किसी तरह साबित हो जाए। ब नफसे नफीस खुद हुजूर अनवर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जिस का हाथ पकड़ कर नीद से उठाऐ अन्दाजा लगाइये कि उसके मंसब की बरतरी का क्या आलम होगा?

(9)

एक निहायत लर्ज़ाखेज़ कहानी:-

मौलवी इस्माइल देहलवी ने उन्ही सय्यद अहमद बरेलवी की अजमत व बर्तरी साबित करने के लिये अपनी किताब "सिराते मुस्तकीम" में एक निहायत लर्ज़ा ख़ेज़ किस्सा ब्यान किया है जिसका उर्दू में तर्जुमा यह है:–

> "हज़रते ग़ौसुस्सक़लैन और हज़रत ख़्वाजा बहाउद्दीन नक़्शबन्दी की रूहों के दर्मियान एक महीने तक इस बात पर झगड़ा चलता रहा कि दोनों में कौन सय्यद अहमद बरेलवी को रूहानी तर्बियत के लिए अपनी किफ़ालत में ले।

दोनो बुजुर्गों की रूहो में से हर एक रूह का इसरार था कि वह तनहा मेरी निगरानी मे इर्फान व सलूक की मंजिलें तय करे।

बिल आखिर एक महीने की आवेज़िश के बाद इस बात पर दोनो मे मुसालेहत हुई कि मुश्तरक तौर पर दोनो यह खिदमत अन्जाम देंगे। चुनान्चे एक दिन दोनों हजरात की रूहे उन पर जल्वा गर हुई और पूरी कुव्वत के साथ थोड़ी देर तक उन पर इर्फान तवज्जह का अक्स डाला। यहाँ तक कि इतने ही वक्फे मे उन्हें दोनों सिलसिलो की निस्बतें हासिल हो गई।" (सिराते मुस्तकीम फ़ारसी, सफ़हा: १६६)

देवबन्दी मज़हब के पेशे नजर इस किस्से की सेहत तस्लीम कर लेने की सूरत मे कई सवालात जहन की सतह पर उभरते हैं। अव्वलन यह कि मौलवी इस्माईल देहलवी की तसरीह के मुताबिक़ जब ब अताए इलाही भी किसी में गैबदानी की क ब्वत नहीं है तो हजरत गौसुस्सक़लैन और हजरत ख्वाजा नक्शबन्दी की अर्वाहे तय्येबात को क्यों कर खबर हो गई कि हिन्दुस्तान में सय्यद अहमद बरेलवी नामी एक शख्स खुदा का मुकर्रब बन्दा है जिसकी रूहानी तर्बियत का एजाज इस काबिल है कि उस तरफ सबकत की जाए।

सानियन यह कि वाकिआ हाजा आलमे शहादत का नहीं बल्कि सरतासर आलमे गैब का है इस लिये मौलवी इस्माईल देहलवी जो इस वाकिआ के खुद रावी हैं उन्हे क्यों कर इल्म हुआ कि सय्यद अहमद बरेलवी की किफालत व तर्बियत के लिये उन दोनों बुज़ र्गों की रूहें एक महीने इस तक बात पर आपस में झगड़ती रहती हैं और बिल आख़िर इस बात पर मुसालिहत हुई कि दोनों मुश्तरक तौर पर अपनी किफ़ालत पर रहें।

सालेसन यह कि मौलवी इस्माईल देहलवी की तकवियतुल ईमान के मुताबिक़ जब खुदा के सिवा सारे अम्बिया व औलिया भी आजिज व बे इख़्तियार बन्दे हैं तो वफ़ात के बाद हज़रते गौसुल वरा और ख़्वाजा नक्श बन्दी का यह अज़ीम तसर्रुफ़ क्यों कर समझ में आ सकता है वह दोनों बुजुर्ग बगदाद से सीधे हिन्दुस्तान के उस कस्बे

में तशरीफ़ लाए जहाँ सय्यद अहमद साहब बरेलवी मुक़ीम थे और उन्के हुजरे में पहुँच कर चश्मे ज़दन में उन्ह बातनी इर्फ़ानी दौलत से माला माल कर दिया।

नीज़ वाक़िआ के अन्दाज़े ब्यान से पता चलता है कि यह बात ख़्वाब की नहीं बल्कि आ़लम बेदारी की है। इस लिये अब वाक़िआ के तस्दीक़ उस वक़्त तक मुमकिन नहीं है जब तक कि तक़वियतुल इमान के मौक़िफ़ से हट कर औलियाए केराम के हक़ में गैबी इदराक और कुदरत व इख़्तियार के अक़ीदे की सेहत न तस्लीम की जाए।

देवबन्दी उल्मा की मज़हबी फ़रेब कारियो का यह तमाशा अब पसे पर्दा नहीं है कि इन्कार की गुंजाइश हो। अब तो उनका यह इमान सोज़ किरदार वक़्त का इश्तिहार बन चुका है कि एक जगह वह अम्बिया व औलिया के क़रार वाक़इ फ़ज़ाइल व कमालात का यह कहकर इन्कार कर देते हैं कि उन्हें तस्लीम कर लेने से अक़ीदए तौहीद की सलामती पर ज़र्ब पडती है और दूसरी जगह इस जर्ब को वह अपने घर के बुज़ुर्गों की बरतरी साबित करने के लिये पूरी बशाशते क़ल्ब के साथ गवारा कर लेते है।

(10)

मौलवी इस्माइल देहलवी का किस्सा गैबदानी और श्फ़िा बख़्शी का दावा:-

मौलवी इस्माइल देहलवी मुसन्निफे तक़वियतुल मान के कशफ़ और बातनी तसर्रुफ़ात से मुतअल्लिक़ अर्वाहे सलासा में अमीर शाह ख़ाँ ने एक निहायत दिलचस्प क़िस्सा नक़ल किया है लिखते हैं कि:-

> "मेरे उस्ताद मियाँ जी मुहम्मदी साहेब के साहेबजादे हाफिज़ अब्दुल अज़ीज़ एक मर्तबा अपने बचपन में निहायत सख़्त बीमार हुए और अतिब्बा ने जवाब दे दियाः उनके वालेदैन को इस वजह से तश्वीश थी। इत्तिफ़ाक़ से मियाँ जी साहेब ने ख़्वाब में देखा कि मौलवी इस्मा ल साहेब मस्जिद के बीच के दर में वाज़ फ़रमा रहे हैं और मैं मस्जिद

के अन्दर हूँ और मेरे पास अब्दुल अज़ीज़ बैठा है। इत्तिफाक़ से उसे पेशाब की जरूरत हु और मैं उसे पेशाब कराने चला आदमियो की कसरत की वजह से और तरफ को रास्ता न था और मौलवी इसमा ल साहेब से बेतकल्लुफी थी इस लिये मै उसे मौलवी इस्मा ल साहेब की तरफ लेकर चला गया। जब अब्दुल अज़ीज़ मौलवी इस्मा ल साहेब के सामने पहुँचा तो उन्होंने तीन मर्तबा या शफ़ी पढकर उस पर दम कर दिया।उस ख़्वाब के बाद जब आँख खुली तो उन्होने अपनी बीवी को जगाया और कहा अब्दुल अजीज अच्छा हो गया। मैंने इस वक़्त ऐसा ऐसा ख़्वाब देखा है। सुबह हुइ तो मियाँ अब्दुल अज़ीज बिल्कुल तन्दुरूस्त थे।

(अर्वाहे सलासा, सफहाः ८८)

अब इसे नैरगिए वक्त ही कहिए कि जो शख़्स सारी जिन्दगी अम्बिया के इल्मे गैब के खिलाफ़ जग करता रहा उसी को मरने के बाद गैब दान बना दिया गया। क्यों कि उन हज़रात के नज़दीक उन्ह अगर इल्मे गैब नहीं था तो उन्हें ख़्वाब में क्यों कर मालूम हुआ कि अब्दुल अजीज बीमार है उसे दम किया जाए।

और ख़्वाब देखने वाले का जज़बए अक़ीदत भी कितना बिल यकीन है कि आँख खुलते ही बीवी को जगाकर यह खुश्खबरी भी सुना दी कि बेटा अच्छा हो गया। और सच मुच सुबह तक बेटा अच्छा भी हो गया।

इसे कहते हैं गैबदानी और शिफा बख़्शी का अक़ीदा जो उन हजरात के यहाँ अम्बिया व औलिया के हक में तो शिर्क है लेकिन मौलवी इस्मा ल देहलवी के हक़ में ऐने इस्लाम बन गया है।

(11)

मौलवी मुहम्दुल हसन साहेब का क़िस्सा मजहब से इन्हिराफ कि एक शर्मनाक कहानीः -

देवबन्दी जमाअ़त के शैखुल ह़दीस मौलवी असगर ह सैन साहेब ने अपनी किताब हयाते शेख़ ल हिन्द म मौलवी महमूदुल ह़सन साहेब के मुतअ़ल्लिक़ एक निहायत अ़जीब व ग़रीब वाकिआ़ नक़ल किया है लिखा है किः–

"१३२२ हिजरी के आखिर में देवबन्द में शदीद ताऊन हुआ चन्द तलबा भी मुबतिला हुए एक फ़ारिगुत्तहसील तालिबे इलम मुहम्मद सालेह विलायती जो सुबह व शाम मे सनदे फ़राग़त लेकर वतन रूखसत होने वाले थे इस मर्ज़ म मुब्तिला हुए और हालत आखरी हो गई।

वफात से किसी कदर पहले उन्होने ऐसी गुफ्तगू शुरू कि गोया शैतान से मुनाजिरा कर रहे है। उसके दलाएल को तोड़ते अपने इस्तिदलाल पेश करते और ऐसा मालूम होता था कि उन्होने मुनाज़िरा में शैतान को बख़ूबी शिकस्त देदी

फिर कहने लगे अफसोस इस जगह कोई ऐसा खुदा का बन्दा नहीं है जो मुझसे उस खबीस को दफा करे यह कहते कहते दफअतन बोल उठे कि वाह' सुब्हान अल्लाह! देखो मेरे उस्ताद हज़रत मौलाना महमूदुल हसन साहेब तशरीफ़ लाए देखो वह शैतान भागा अरे खबीस कहाँ जाता है? एक साअत के बाद तालिबे इल्म का इन्तेकाल हो गया हज़रत मौलाना उस वाकिआ के वक्त वहाँ मौजूद न थे मगर रूहानी तसर्रुफ से इमदाद फरमा । (हयात शैख़ ल हिन्द सफ़ाः १६७)

आखिर में इतना इजाफा करके "हज़रत मौलाना उस वाकिआ के वक़्त वहां मौजूद नहीं थे मगर रूहानी तसर्रुफ से इमदाद फ़रमा " बिल्कुल वाज़ेह कर दिया है कि उस तालिबे इल्म को जो वाकिआ पेश आया वह उसके वहेम का नतीजा नहीं था बल्कि फिल वाके मौलवी महमूदुल हसन साहेब उसकी इमदाद के लिये ग़ैबी तौर पर वहाँ पहुँच गए थे।

मगर हैरत है कि देवबन्द की अ़क़ले फितना परदाज़ यहाँ कोई सवाल नहीं उठाती कि जब वह वहाँ मौजूद नहीं थे तो उन्हें क्यों कर

खबर हो गई कि एक तालिबे इल्म सकरात के आलम में शैतान से मुनाजिरा कर रहा है और खबर भी हुई तो बिजली की तरह उन्हे कुव्वते परवाज कहाँ से मिल गई कि चश्मे जदन में आ मौजूद हुए।

दरअसल कलेजा फटने की बात यही है कि यहाँ गैब दानी भी है और कुदरत व इख़्तियार भी! लेकिन चूँकि "अपने मौलाना" की बात है इस लिये न यहाँ अकीदए तौहीद मजरूह हुआ और न किताब व सुन्नत से कोई तसादुम लाजिम आया।

लेकिन इसी तरह का अक़ीदा अगर हम सरकारे गौसुल वरा या ख्वाजा गरीब नवाज किसी नबी या वली के हक़ में रवा रखते हैं देवबन्द के यह मवहहेदनी हमारी जान व इमान के दर्पे हो जाते है।

(12)

जनाब मौलवी अब्दुर्रशीद साहेब रानी सागरी के वाकेआतः-

जनाब मौलवी अब्दुर्रशीद साहेब रानी सागरी देवबन्दी जमाअत के एक एलाका पीर हैं। इमारते शरइय्या फुलवारी शरीफ़ जिसके अमीर मौलवी शाह मिन्नतुल्लाह साहेब रहमानी रुकने मजलिसे शुरा दारुल उलूम देवबन्द हैं उसके तर्जुमान अखबारे नकीब में "मुस्लेहे उम्मत नम्बर" के नाम से मौलवी अबदुर्रशीद साहेब रानी सागरी के हालात मे एक जखीम नम्बर शाए किया है। जैल के जुमला वाकिआत उसी नम्बर से माखूज हैं।

अपने मज़हबी मोतकेदात का एक दर्दनाक कतलः-

मौलवी शमस तबरेज़ खाँ साहेब क़ासमी के हवाले से मौलवी अब्दुर्रशीद साहेब रानी सागरी की आम गैबदानी के मुतअल्लिक यह रवायत नकल की गई है कि:-

> "मजलिस में अकसर ऐसा होता कि कोई शख़्स मौलाना से कुछ सवालात करने वाला होता मगर आप सवाल से पहले ही जवाब दे देते थे। एक बार एक नौजवान से सुबह के वक्त मिले और बिला कुछ मालूम किये हुए सिलसिलए

गुफ़्तगू में उन्हें नसीहत की कि नमाजें सुबह हरगिज़ कजा नहीं होनी चाहिए। वह समझ गए कि आज नमाज़ क़ज़ा हुई है और यह इशारए कश्फ़ी उसी की तरफ़ है।

इसी तरह कुलटी (बर्दवान) मजलिस में ब्यान फरमाते हुए इर्शाद फ़रमाया कि औरतें आए गी पर्दा कराइऐ चुनान्चे दूसरे ही लम्हा औरतों की दस्तक सुना दी (नक़ीब का मुस्लेहे उम्मत नम्बर सफ़हाः ५)

दिल के ख़तरात पर मुत्तेला होने का मामूल तो था ही गुजिश्ता और आइन्दा का इल्म भी उन्हें हासिल था। जभी तो एक तरफ फौत शुदा नमाज़े सुबह की ख़बर दी तो दूसरी तरफ आने वाली औरतों का भी हाल बता दिया

(13)

गैबदानी से मुतअल्लिक नियाज़ मन्दों की खुश अक़ीदगी का एक इबरत अंगेज क़िस्सा:-

अब उन्ही रानी सागरी साहेब की गैब दानी से मुतअल्लिक नियाज़ मन्दों की खुश अक़ीदगी का एक और क़िस्सा मुलाहिज़ा फरमाइऐः—

मदरसा रशीदुल उलूम चितरा जिला हजारी बाग के सदर मुदर्रिस मौलवी वसीउद्दीन साहेब ब्यान करते हैं कि एक दिन मै नमाजे जुम्आ के बाद हज़रत के हुजरे में दाख़िल हुआ तो देखा कि वह अपनी चारपा पर बहुत खामोश और मगमूम बैठे हैं, ब्यान करते हैं कि हजरत आज मै आप को बहुत मगमूम पा रहा हूं क्या को बात हुई है? अब इस के बाद का क़िस्सा खुद वाक़िआ निगार की ज़बानी सुनिये लिखते हैं कि—

"हज़रत कुद्देसा सिर्रहू ने फ़रमाया कि पाकिस्तान में दो बहुत बड़े हादसे हो गए हैं अल्लामा शब्बीर अहमद उस्मानी रहमतुल्लाह अलैहि का इन्तिक़ाल हो गया है और एक हवाई जहाज़ गिरकर तबाह हो गया है जिस में पाकिस्तान के कई ज़िम्मेदार हज़रात इन्तेक़ाल फ़रमा गए।

मौलाना वसीउद्दीन अहमद साहेब कहते हैं कि मुझे इस पर हैरत व इस्तेजाब हुआ कि आप को अख़बारी दुनिया से बेतअल्लुकी है आखिर इत्तेला कैसे हुई। उनसे रहा न गया बिल आख़िर पूछ ही लिया कि हुजूर आपको किस तरह इत्तेला पहुँची?

इस पर आपने फ़रमाया कि यहाँ अखबार म खबर है देखो तो अखबार आया होगा। मैंने उसपर कहा कि अखबार तो अभी आया भी नही है। और हजरत! अभी तो डाक का वक्त भी नही हुआ है बहर हाल मौलाना वसीउद्दीन बाहर निकलते है कि डाकिया आरहा है।

इस वाकिआ मं हजरत के दो इन्किशाफ़ जाहिर हुए। पहला कश्फ अल्लामा शब्बीर अहमद साहेब उस्मानी रहमतुल्लाह अलैहि का विसाल हुआ और हवा जहाज का हादिसा और ताजा कशफ डाकिया के अखबार लेकर आने का चुनाचे जब देखा गया तो यह दोनो हादिसात जली सुर्खियो से छपे हुए थे। उस से पहले किसी अख़बार मके न यह तजकिरा आया था और न उस वक्त रेडियो का आम रिवाज चितरा म था जिसके जरिये खबर मिलती।" (नकीब का मुरत्लेहे उम्मत नम्बर, सफहा १८)

इस वाक़िआ में ज़ावियए निगाह की एक ख़ास चीज़ मुलाहिज़ा फ़रमाइयेः-

"वाकिआ निगार ने जगह जगह इस तरह के फिकरे बढ़ा कर आप को अखबारी दुनिया से बेतअल्लुकी है आख़िर इत्तिाला कैसे हुई? अखबार तो अभी आया भी नहीं है। हजरत अभी तो डाक का वक़्त भी नहीं हुआ। इससे पहले न किसी अखबार में यह तज़किरा आया था और न उस वक़्त रेडियो का आम रिवाज चितरा में था। सारा जोर कलम इस बात पर सर्फ़ किया है कि किसी तरह साबित हो जाए कि आप को इल्मे ग़ैब था लेकिन यही देवबन्दी उलमा जब रसूले अनवर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के इल्म ग़ैब से मुतअल्लिक़ किसी

वाकिआ पर बहस करते हैं तो एक सतर इस कोशिश की आइनादार होती है कि जिस तरह भी मुमकिन हो यह साबित किया जाए कि हुजूर को गैब का इल्म नहीं था। हज़रते जिब्राइले अमीन खबर देते थे।

ज़ावियए निगाह का यह फ़र्क़ जिस जज़्बे पर मबनी है उसे न भी ज़ाहिर किया जाए जब भी अपनी जगह पर वह मुहताजे ब्यान नहीं है।

(१४)

अपनी नौइय्यत का पहला वाकिआ:-

उन्हीं रानी सागरी साहेब का दिल चस्प लतीफा और सुनिये। मौसूफ़ के एक और मुरीद मौलवी शहाबुद्दीन रशीदी नकीब के उसी मुस्लेहे उम्मत नम्बर म एक अजीब व गरीब वाकिआ के रावी है ब्यान करते हैं कि:-

> मुझसे मेरे मुहतरम दोस्त और हजरत के खवेश मौलाना अलहाज अशरफ़ अली साहेब ने ब्यान किया है कि हजरत रहमतुल्लाह अलैहि ने इर्शाद फ़रमाया कि एक अमीर जादा नौजवान शख़्स थे। उनकी ज़िन्दगी बहुत ही लाउबाली पन में गुज़री उन्का जब इन्तिकाल हो गया तो मैं एक दिन कब्रस्तान गया तो उस शख़्स को देखा कि कब्र में नगा बैठा है और बहुत ही हसरत व यास के आलम में है मैं जब करीब पहुँचा तो उसने हमें देख कर अपनी सतर दोनों हाथों से छुपाली मैंने उससे कहा कि इसी लिए न मैं तुझसे कहता था लेकिन तूने अपनी ज़िन्दगी ला परवाही में गुज़ार दी और मेरी बातों की तरफ़ ध्यान नहीं दिया।
>
> (नकीब फुलवारी का मुस्लेहे उम्मत नम्बर सफहा १६)

इस वाकिआ को पढ़ने के बाद बिल्कुल ऐसा महसूस होता है कि यह वाकिआ उन्ह किसी मुर्दा के साथ नहीं बल्कि ज़िन्दा के साथ पेश आया था। और आलमे बरज़ख़ का नहीं बल्कि आलमे दुनिया का है। और वाकिआ आलमे बर्ज़ख़ ही का है तो मान्ना पड़ेगा कि आलमे गैब के साथ उन हज़रात का तअल्लुक बिल्कुल घर और आंगन का सा है आलमे गैब का को पर्दा उनकी निगाहों पर हाएल नहीं है जिधर

निगाह उठी [illegible] खुद बखुद बेनकाब हो गई। इन्साफ कीजिए। एक तरफ तो अपने बुज़ुर्गों की कुव्वते इन्किशाफ का यह हाल ब्यान किया जाता है और दूसरी तरफ सय्यदुल अम्बिया के हक़ में आज तक इसरार कर रहे हैं कि उन्हे दीवार के पीछे का भी इल्म नही है।

(15)

कारोबार आलम में तसर्रुफ़ का वाक़िआः

कारोबारे आलम में उन हज़रात के इकतिदार और खुद मुख़्तार तसर्रुफ का तमाशा देखना चाहते हो तो उस किताब का यह आखरी क़िस्सा पढ़िये उन्हे रानी सागरी साहेब की साहेबज़ादी सामिना ख़ातून की याद दाश्त से नकीब के उसी मुसलेहे उम्मत नम्बर में यह वाकिआ नक़ल किया गया है। मौसूफ ब्यान करते हैं कि:—

"जब हमारा घर बनने लगा तो वालिद साहेब कि बला की हिदायत के मुताबिक सब से पहले पाखाना मे हाथ लगा। वह जमाना बर्सात का था। लेकिन बारिश नही हो रही थी। धान की रोपनी हो चुकी थी। किसान सख्त परेशान थे। मैंने वालिद साहेब से दर्खास्त की कि बारिश के लिये दुआ फरमा दीजिए। बहुत लोग परेशान हैं। फसल को खतरा है। वालिद साहेब मुस्कुराने लगे और फिर फ़रमाया 'बारिश कैसे होगी। अपना पाखाना जो बन रहा है खराब हो जाएगा।

मैंने पूछा कब तक पाख़ना बन जाएगा? बोले दीवार मुकम्मल हो गई है रात को छत की ढला हो जाएगी' मैं खामोश हो गई। दो दिन बाद खूब जोर दार बारिश हो गई। वालिद साहेब घर पर ही थे। मैंने पूछा बारिश होने लगी अब तो पाख़ाना में नुक़सान होगा। फ़रमाने लगे नहीं बेटा। अब तो फ़ाएदा होगा। मैंने फिर पूछा तो क्या पाख़ाना ही के लिये बारशि रुकी हु थी? वालिद साहेब ने को जवाब नहीं दिया सिर्फ मुस्कुराते रहे। उस वक़्त वालिद साहेब तन्दुरुस्त थे। नक़ीबका (मुस्लेहे उम्मत नम्बर,सफ़हाः ४)

इस वाकिआ के ब्यान से जिस अक़ीदे का इजहार मकसूद है वह या तो यह है कि उन्हें इस बात का इल्म था कि बारिश अभी नहीं होगी और वह यह भी जानते थे कि बारिश अभी नहीं होगी और वह यह भी जानते थे कि बारिश क्यों रूकी हुई है?

या फिर यह ज़ाहिर करना मक़सूद है कि कारोबारे हस्ती मे उनकी ज़ाती ख़्वाहिश इतनी दख़ील और मोअस्सिर थी कि अगरचे ज़मीन का सीना तपता रहा, फ़सल जलती रही और काश्तकारों की आहें बाबे रहमत पर सर पटकती रहीं लेकिन जब तक उनका पाखाना तय्यार नहीं होगा बारिश को चार व नाचार रूकना ही पडा। "बारिश कैसे होगी" का फिक़रा भी वाज़ेह तौर पर इस रूख को मुतअय्यन करता है कि उन्होंने जब तक नहीं चाहा बारिश नहीं हुई।

अब आप की गै़रते ईमानी एख़्लास व वफ़ा की मंजिल से बख़ैर व आफ़िय्यत गुज़र सकती हो तो आप ही फैसला कीजिये कि कारो बारे आलम में घर के बुजुर्गों के असर व रसूख का तो यह हाल ब्यान किया जाता है लेकिन ख़ुदा के पैग़म्बरे आजम सल्लल्लाहो तआला अ़लैहि वसल्लम की शान मे उन हज़रात के अकीदे की जबान यह है।

> "सारा कारो बार जहाँ का अल्लाह ही के चाहने से होता है रसूल के चाहने से कुछ नहीं होता।" तकवियतुल ईमान

अ़कीदे का तुग़ियान तो अपनी जगह पर है अल्फाज व ब्यान की जारी हय्यत ज़रा मुलाज़िा फरमाईये कि "सारा कारो बार जहाँ का अल्लाह ही के चाहने से होता है" इतना फ़िकरा भी अकीदए तौहीद का मफाद पूरा करने के लिये काफी था लेकिन रसूल के चाहने से कुछ नहीं होता, इस फ़िकरे का इज़ाफ़ा सिर्फ़ इस जजबए तहकीर के इज़हार के लिये है जो इन हज़रात के दिलों से रसूले खुदा की तरफ से जागुजीं हो चुका है। न थी दिल में तो क्यों आई जबाँ पर।

देवबन्दी जमाअत के तीन नए बुजुर्गों के वाकेआत का इजाफा: -

क़ारी फ़ज़्लुल हसन साहेब गयावी जो मौलाना हुसैन अहमद

साहेब शैख देवबन्द के मुरीद और ख़लीफ़ए मजाज हैं और जो सूबए बिहार मे देवबन्दी जमाअत के बहुत बडे मुबल्लिग़ व पेश्वा समझे जाते हैं उन्हाने दर्से हयात के नाम से एक किताब लिखी है जो मदनी कुतुब खाना मदरसा कासमिया गया से शाए हुई है।

उस किताब मे मौसूफ ने अपनी जमाअत के तीन बुजुर्गों के हालाते जिन्दगी कलम बन्द किये हैं। उनमे से एक तो उनके नाना मौलवी अब्दुल गफ्फार सरहदी हैं दूसरे उनके वालिद मौलवी खैरूद्दीन शार्गिद मौलवी महमूदुल हसन साहेब देवबन्दी हैं तीसरे उनके उस्ताद और वालिद के दोस्त मौलवी बशारत करीम साहब हैं। यह तीनों हजरात अपने जमाने मे देवबन्दी मज़हब के इलाकाई रहनुमा और सरगर्म मुबल्लिग थे।

आग आने वाले सफहात में तरतीब वार तीनों के वह वाकिआत पढ़िये जिन्हे सही मान लेने की सूरत में देवबन्दी मकतबए फ़िक्र की बुनियाद मुतजलजल हो जाती है। और एक इन्साफ पसंद आदमी यह सोचने पर मजबूर हो जाता है कि यह किताब शायद इसी लिए लिखी गई है कि देवबन्दी मजहब का झूठ फ़ाश किया जाए।

(१५)

मौलवी अब्दुल ग़फ्फार साहेब सरहदी के वाकिआत

(1)

एक ग़ैबदान जिन्न का क़िस्सा:-

दर्से हयात के मुसन्निफ ने अपने नाना मौलवी अब्दुल ग़फ्फार साहेब के मुतअल्लिक यह दावा किया है कि इन्सानों के अलावा जिन्नात भी उनसे तालीम हासिल करते थे और बहुत से अजिन्ना उनके हल्का बगोशों में भी शामिल थे।

चुनान्चे एक जिन्न तालिबे इल्म का क़िस्सा ब्यान करते हुए उन्हों ने लिखा है कि उनके साथियों में से एक लड़के को उसके मुतअल्लिक किसी तरह मालूम हो गया कि वह जिन्न है। दोस्ताना तअल्लुक़ात तो पहले ही से थे यह मालूम हो जाने के बाद अब वह उसके पीछे पड़

गया और कहने लगा कि मैं ग़रीब आदमी हूँ तुम मेरी माली इमदाद करके देरीना दोस्ती का हक़ अदा करो। यह काम तुम्हारे लिए कुछ मुश्किल नहीं है। उसने माज़रत चाहते हुए जवाब दिया कि ऐसा सिर्फ़ इसी सूरत में मुमकिन है कि मैं तुम्हारे लिये चोरी करूँ और मौलवी हो कर मैं कभी यह काम नहीं करूँगा।

लिखा है कि उस जिन का वह आख़री साल था। बुखारी शरीफ़ ख़तम करके जब वह घर जाने लगा तो उसके साथी ने उससे तनहाई में मुलाक़ात की और आबदीदा होकर कहा अब तो तुम जा ही रहे हो! लेकिन दमेरूख़सत कमअज कम इतना तो बता दो कि तुम से अब मुलाक़ात की सूरत क्या होगी। जवाब दिया मैं तम्हे चन्द मख़सूस कलेमात बता देता हूँ जब भी मुलाक़ात को जी चाहे पढ़ लिया करना मैं हाज़िर हो जाया करूँगा। चुनान्चे उसके चले जाने के बाद जब भी मुलाक़ात की ख़्वाहिश होती वह मज़कूरा कलेमात पढ़ लिया करते और वह हाज़िर हो जाया करते। अब उसके बाद का वाक़िआ ख़ुद मुसन्निफ़ की ज़बानी सुनिये लिखा है कि:-

"एक मर्तबा वह बहुत माली परेशानी मे मुब्तिला हो गए। लड़की की शादी करनी थी और पैसे पास में न थे उस मौक़े पर वह जिन दोस्त याद आ गए। उन चन्द कलेमात का विर्द करना था कि जिन साहब तशरीफ़ ले आए उन्होंने अपनी परेशानी का ज़िक्र उनसे किया।

उन्होंने कहा अच्छा मैं आपके लिये चोरी तो करूँगा नहीं यह हराम तरीक़ा मैं इख़्तियार नहीं कर सकता हूँ मगर जाइज़ ज़राए से कुछ रक़म आपके लिये मोहय्या करके आपकी ज़रूर मदद करूँगा। आप घबराऐं नहीं दूसरे दिन वह जिन साहेब आकर उन परेशान हाल दोस्त को माकूल रक़म दे गए मगर ताकीद कर गए कि उसका ज़िक्र किसी से न करें। (दर्से हयात, जिल्द:१, सफ़हा: ६२)

इस रक़म से उन्होंने निहायत तज़ुक व एहतिशाम और धूमधाम से अपनी बच्ची की शादी की। अमीराना ठाठ बाट देख कर लोगों को

सख्त हैरत हुई लोग सोचने लगे कि अचानक उन्हें इतनी कसीर रकम कहाँ से मिल गई। दूसरों को तो पूछने की हिम्मत नहीं हुई लेकिन बीवी उनके सर हो गई हजार टालना चाहा लेकिन बीवी का इसरार बढ़ता गया यहाँ तक कि मजबूर होकर उन्हें सारा भेद जाहिर करना पड़ा, अब उसके बाद का वाक़िआ फ़र्ते हैरत के साथ सुनिये। लिखा है कि:-

> इसका असर यह हुआ कि अब उन्होंने जब भी वह कलेमात इस उम्मीद पर पढ़े कि वह जिन साहेब तशरीफ लाऐंगे और उनसे मुलाकात करेगे लेकिन कभी उनकी यह उम्मीद पुरी न हो सकी और उन से जिन ने मुलाक़ात का सिलसिला खत्म कर दिया।" (सफ़हा: ६३)

अब एक तरफ़ यह वाक़िआ नजर में रखिये और दूसरी तरफ़ देवबन्दी मज़हब की बुनियादी किताब तक़वियतुल ईमान का यह फ़रमान पढ़िये।

> अल्लाह साहब ने पैगम्बर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को फ़रमाया कि लोगों से यूँ कहदेवें कि ग़ैब की बात सिवा अल्लाह के कोई नहीं जानता न फरिश्ता न आदमी न जिन। (तक़वियतुल ईमान सफ़हा: २२)

यह मजहब है और वह वाकिआ! और दोनों एक दूसरे को झुठला रहे हैं। अब आप ही इन्साफ़ से कहिये कि वह जिन अगर ग़ैबदान नहीं था तो घर के अन्दर बीवी के साथ की जाने वाली गुफ़्तगू की इत्तिला उसे क्यो कर हो गई? और अगर नहीं हुई तो उसने मुलाक़ात का सिलसिला क्यों ख़त्म कर दिया। और तौहीने इल्म व दयानत की न मिटने वाली सुर्ख़ी तो यह है कि इत्तिला व आगही का यह वाक़िआ कुछ एक बार का नहीं था कि उसे हुस्ने इत्तिफ़ाक़ का नतीजा कह कर गुजर जाइये बल्कि किताब की सराहत के मुताबिक़ सैकड़ों मील

की मसाफ़त से उन कलेमात का विर्द करते ही उसे हमेशा ख़बर हो जाया करती थी कि फ़लाँ शख़्स मुझे याद कर रहा है।

अब इसका मतलब सिवा इसके और क्या हो सकता है कि उसे हमा वक़्ती ग़ैबदानी का मंसब हासिल था। बिल्कुल वाएरलेस की तरह इधर सिगनल दिया और उधर वसूल कर लिया।

क़त्ल व जिदाल के मारकों में दो लश्करों का तसादुम तो आकर पेश आया है लेकिन अपने ही मजहब के साथ ऐसा ख़ून रेज़ तसादुम शायद ही तारीख़ में पेश आया हो।

फ़यालिलअजब! कि इसी दीन व दयानत पर उल्माए देवबन्द को ग़ुर्रा है कि वह रूए ज़मीन पर अक़ीदए तौहीद के सब से बड़े अलम्बरदार हैं।

(२)

जमाअती मस्लक का एक और ख़ून:-

अपनी इसी किताब में मुसन्निफ़ ने आगे चल कर अपने नाना के हक़ में ख़ुदाई मंसब का एक साफ़ व सरीह दावा किया है। क़ौसैन के तशरीही इजाफ़े के साथ दावा की यह सुर्ख़ी मुलाहिज़ा फ़रमाइये।

उलूमे तकवीनियात इन्तिज़ामात आलम से मौलाना का तअल्लुक़:-

अब दरियाए हैरत में डूब कर दावे के यह अल्फ़ाज पढ़िये।

> "उलूमे तकवीनिया इन्तिजामिया से भी मौलाना का तअल्लुक था और आलमे तकवीनियात के कार्कुनो का मौलाना से मिलना और मश्वेरा करना और उन से गहरे रवाबित और तअल्लुक़ात भी वक़्तन फवक़्तन जाहिर होते रहते थे" (दर्से हयात, सफ़हा ८५)

क्या समझे आप? कहना यह चाहते हैं कि नाना मियाँ उस मोहकमे के आफीसर इन्चार्ज थे और मातेहत करिन्दे आपके

मश्वरे के मुताबिक आलम के इन्तिज़ामात का काम संभालते थे और यह कुछ मैं अपनी तरफ़ से नहीं कह रहा हूँ बल्कि खुद मुसन्निफ ने अपनी किताब में इसका दावा किया है। इर्शाद फ़रमाते हैं:–

> "अल्लाह तआला की तरफ़ से आलम के तमाम इन्तिजामाते के लिये कारिन्दे मुक़र्रर हैं वही सब कुछ करते हैं वह इस इल्म की इस्तिलाह में "अस्हाबे ख़िदमत" कहलाते हैं। (दर्से हयात, सफहा: ८६)

यह सवाल जो आमतौर पर किया जाता है कि क्या खुदा तुम्हारी मदद नहीं कर सकता जो तुम अम्बिया व औलिया के आगे हाथ फैलाते हो अगर सही है तो हमे यह सवाल करने की इजाजत दी जाऐ कि वही सब कुछ करते हैं तो फिर ख़ुदा क्या करता है? क्या वह अकेला आलम का इन्तिज़ाम नहीं कर सकता जो उस ने इन्सानों मे से जगह जगह अपने कारिन्दे मुक़र्रर फरमाए हैं।

बीच मे यह बात निकल आई वर्ना कहना यह है कि एक तरफ "नाना मियाँ" का यह तकवीनी और इन्तिज़ामी इख़्तियार मुलाहिज़ा फ़रमाइये और दूसरी तरफ़ तक़्विय्यतुल ईमान का यह फरमान पढ़िये तौहीद परस्ती खुदा परस्मीका सरा भरम खुल जाएगा।

> "अल्लाह साहब को दुनिया के बादशाहों की तरह न समझे कि बडे–बड़े काम तो आप करते हैं और छोटे छोटे काम और नौकरों चाकरों के हवाले कर देते हैं! सो लोगों को छोटे–छोटे कामों में उनकी इलतिजा करनी ज़रूरी पड़ती है। सो अल्लाह के यहाँ का कारखाना यूँ नहीं है। (सफ़हा: ३६)

यह है अक़ीदा वह है अमल! और दोनो के दर्मियान जो मश्रिक व मग़्रिब का तज़ाद है वह मोहताजे बयान नहीं है। यह तजाद क्यो कर उठेगा उसे तो अस्हाबे मामला जाने हमे तो इस वक़्त उन्हीं कारिन्दों में से एक कारिन्दे का किस्सा सुनाना है। जिसे मुसन्निफ ने यह जाहिर करने के लिये बयान किया है कि उस तबक़े के साथ "नान मियाँ" का तअल्लुक़ कितना गहरा और राजदाराना था।

क़िस्से का आग़ाज़ करते हुए लिखते है -

> "मौलान अब्दुल राफेअ साहेब मर्हूम (मुसन्निफ के ख़ालू) का बयान है कि मौलाना (यानी नाना मियाँ) के घर का सवदा मैं ही लाया करता था। सबजी तरकारी मंगवानी होती तो मौलाना एक ख़ास कुजड़े का पता बतलाते कि वहीं से लेना। उसके यहाँ अच्छी हो या बुरी उसी के यहाँ से लेना। (सफहा ८६)

अब पढ़ने की चीज यही है कि वह कुजड़ा कौन था और उसमें क्या खुसूसियत थी। लिखा है कि –

> "मौलाना अब्दुल राफेअ साहेब का बयान है कि मैं ने अर्ज़ किया कि गया के इन्तिजामी उमूर तो आज कल बहुत ख़राब हैं। आज कल यहाँ का साहेब खिदमत कौन है। मौलाना ख़फा हुए कि उसको यह बीमारी है कि बे फाइदा बाते पूछा करता है। मगर मैं बहुत सर चढ़ा था बार बार इसरार करता ही रहा कि बतला दीजिए। आखिर मजबूर होकर फ़रमाया कि वही कुजड़ा है जिस से तरकारी लाने के लिये तुम को ताक़ीद करता रहता हूँ और तुम हमेशा मुझ से उसके बारे मे हुज्जत करते रहते हो।
>
> मैं यह सुन कर हैरान रह गया कि अल्लाहो ग़नी वह कुंजड़ा इतने दर्जे वाला है। (दर्से हयात, सफहा: ८६)

मुझे इस वाक़िआ के ज़िम्न में इससे ज़्यादा और कुछ नहीं कहना कि आलम के इन्तिज़ामात और तकवीनी इख़्तियारात जब ख़ुदा ही

ने बनी नौए इन्सान में से अपने चन्द कारिन्दों के सुपुर्द कर दिये है तो अब उन्हें कार साज़ व हाजत रवा समझने पर शिर्क का इल्ज़ाम क्यो आएद किया जाता है। यह बग़ावत नहीं बल्कि ऐन वफ़ा दारी है कि मालिक कि तरफ़ से मुक़र्रर किये हुए कारिन्दों को उन की मसबी हैसिय्यत के साथ अक़ीदतन और अमलन दोनों तरह तस्लीम किया जाए। क्योंकि जिसके हाथ में उमूर का इतिन्ज़ाम व इन्सिराम होता है अपनी कार -बार आरी और उकडा कुशाई के लिये उसकी तरफ रूजू करना दोनों दयानत का भी तकाज़ा है और अक़्ल व फ़ितरत का भी।

इस वाकिआ में अपने मसलक से इन्हिराफ़ अपनी जगह पर है लेकिन सबसे बडा मातम तो दिल की इस शकावत का है कि अपने नाना का तक़र्रुब" इकतिदार साबित करने के लिये एक कुजडे तक को कारो–बारे आलम में दखील मान लिया गया। लेकिन 'हुसैन के नाना" के हक़ में जो अक़ीदे की ज़बान इस्तेमाल की जाती है वह यह है.–

> जिस का नाम मुहम्मद या अली है वह किसी चीज़ का मुख्तार नही (तकवियतुल ईमान, सफहा: ४२)
>
> सारा कारो–बार जहाँ का अल्लाह ही के चाहने से होता है रसूल के चाहने से कुछ नहीं होता। (तकवियतुल ईमान, सफहा. ५८)

मौलवी खैरुद्दीन साहेब के वाकेआत

(१)

औलाद की लालच में अक़ीदए शिर्क से मुसालेहत

दर्से हयात के मुसन्निफ़ अपने वालिद के मुतअल्लिक एक वाक़िआ नक़ल करते हुए लिखते हैं कि–

> "इब्तिदा में (वालिद की) कोई औलाद ज़िन्दा नहीं रहती थी। कई औलाद हुई मगर अल्लाह को प्यारी हो गई। खूबिए क़िस्मत से एक आलिम पंजाबी जो बहु

> बड़े आमिल भी थे। गया तशरीफ़ लाए मौलाना ने औलाद ज़िन्दा न रहने का हाल उनसे कहा।
>
> उन्हों ने कहा कि एक अमल है उसको कीजिए इन्शा अल्लाह औलादे नरीना होगी और ज़िन्दा रहेगी। जब हमल को चौथा महीना हो तो हमल के पेट पर अपनी उंगली से बग़ैर रोशनाई के मुहम्मद लिख दीजिए और पुकार कर कहिए "मैंने तेरा नाम मुहम्मद रखा" और जब बच्चा पैदा हो जाए तो उसका नाम मुहम्मद रखिये। चुनांन्चे इस अमल के बाद सबसे पहली औलाद जो पैदा होकर ज़िन्दा रही वही मैं (कारी फ़ख़रूद्दीन मुसन्निफ़ किताब) हूं।" (दर्से हयात, सफ़हाः १६६)

ग़ाएब अज़ नज़र को ख़िताब और नेदा देवबन्दी मज़हब में शिर्क है लेकिन औलाद की लालच में यहाँ कोई उलझन नहीं पेश आई कि" मैंने तेरा नाम मुहम्मद रखा" में ग़ाएब को ख़िताब क्यों कर दुरस्त है।

और सब से बड़ा अफ़सोस तो उस एहसान फ़रामोशी का है कि जिस एतक़ाद की बदौलत ज़िन्दगी जैसी अज़ीम नेमत मयस्सर आई उसी को ग़लत शिर्क साबित करते हुए कुफ़राने नेमत का ख़्याल उन हज़रात को नहीं आता और वाक़िआ सर से गुज़र जाने के बावजूद उन्हें यह महसूस नहीं होता कि जब "इस्म" का तसर्रुफ़ यह है कि वह हयात बख़्श साबित हुआ जिस ज़ात का यह नाम है उसके तसर्रुफ़ात का कौन अन्दाज़ा लगा सकता है?

(2)

तसर्रुफ़ व ग़ैबदानी का बेमिसाल वाक़िआः-

दर्से हयात के मुसन्निफ़ ने तहसीले इल्म के सिलसिले में अपने वालिद का एक सफ़रनामा नक़ल किया है। वाक़िआत के रावी ख़ुद मुसन्निफ़ के वालिद हैं। वह बयान करते हैं कि हम अपने चन्द रूफ़का के साथ तहसीले इल्म के लिये अपने घर से निकले और कई दिन तक शबाना रोज़ चलते रहे।

"यहाँ तक कि हम दोपहर को एक शहर में दाखिल हुए। मालूम हुआ कि यह करनाल है। मैंने दर्याफ्त किया कि सब से पहले ज़ुहर की नमाज़ किस मस्जिद मे होती है उस मस्जिद मे जाकर नमाजे ज़ुहर बा जमाअत अदा की। नमाज के बाद मस्जिद से निकला कि जल्दी शहर से निकलुं ताकि रास्ता खोटा न हो।

मस्जिद में लगे हुए बरामदह मे एक नाबीना हाफ़िज़ साहेब बैठे थे मैं जब उनके करीब से गुज़रा तो उन्हों ने कहा खैरुद्दीन! अस्सलामु अलैकुम! मेरे पास आओ।

मैंने यह ख्याल करके कि फ़ज़ूल बातों मे यह मेरा वक्त ज़ाए करेंगे उनकी बात की तरफ कोई तवज्जह न दी और सर सरी जवाब देते हुए तेजी से निकल गया। उन्हो ने अपने चन्द शागिर्दों को मेरे पीछे दौड़ाया कि पकड ले आओ मगर वह मुझको पकड न सके मैं सब से कवी था सब को झटक कर दूर फेंक दिया और आगे बढता रहा। (दर्से हयात, सफहा १५५)

यहाँ तक कि मैं शहर पनाह के फाटक से जैसे ही बाहर निकला अचानक ज़मीन ने मेरे कदम थाम लिये। बहुत कोशिश की लेकिन ज़रा भी क़दम आगे नहीं बढ़ा सका। मेरे साथियो ने भी मिल कर बहुत ज़ोर लगाया लेकिन वह भी मेरे कदमों को ज़मीन की गिरफ़्त से आज़ाद नहीं करा सके। यहाँ तक कि मजबूर होकर मैं शहर की तरफ़ वापस लौट आया और वहीं से अपने साथियों को रूख़सत कर दिया।

"शहर में आने के बाद मुझ को ख़्याल हुआ कि नाबीना हाफ़िज़ जी कौन थे जिन्होंने बावजूद ना वाकिफ़ अजनबी और नाबीना होने के मुझको मेरा नाम लेकर पुकारा" चलुं उनसे तहक़ीके हाल करूँ।

मैं जब उनके पास पहुँचा तो वह ज़ोर से हंसे और कहा आख़िर आ गए बहुत जान छुडा कर भागे थे। मैं ने उनसे कहा इन बातों को छोड़ये आप यह बतलाइये कि आप ने मुझ को कैसे पहचाना और मेरा नाम आपको कैसे मालूम हुआ? उन्होंने फ़रमाया कि तुम्हारा नाम? मुझको तो तुम्हारा हाल मालूम है कि किस ग़र्ज़ से निकले हो क्या तुम समझते हो कि जिस तरह तुम इधर रोके गए हो उधर नही रोके जाओगे? तुम्हारे इल्म का एक हिस्सा इस शर में मुक़द्दर है जब तक तुम इसको हासिल नही करोगे इस शहर से निकल नहीं सकते। (सफहा: १५६)

इस कहानी में नाबीना हाफ़िज का किरदार निहायत वाजेह तौर पर देवबन्दी मजहब को झुठला रहा है क्या कि किसी नाबीना शख़्स का सिर्फ कदमो की आहट पाकर एक बिल्कुल अजनबी आदमी को पहचान लेना और उसका नाम लेकर पुकारना और यह दावा करना कि नाम ही नहीं मुझे तो तुम्हारा हाल और मकसदे सफ़र तक मालूम है। फिर तकदीर व यह नविश्ता बताना कि इस शहर मे तुम्हारे लिये इल्म का एक हिस्सा मुकद्दर है और इस शहर से उस वक्त तक तुम नही निकल सकते जब तक कि उसे हासिल न कर लो यह सारे उमूर वह हैं जिन्हें देवबन्दी मजहब में सिर्फ़ खुदा का हक तस्लीम किया गया है और बड़े से बडे बन्दे के हक़ में इस तरह की बातों के एतेक़ाद को शिर्क जली से ताबीर किया गया है।

ठीक ही कहा है किसी ने दुनिया मे क़ातिलों की कमी नहीं है लेकिन उल्माए देवबन्द पर अपने मज़हबी उसूलों के क़त्ल का इल्ज़ाम तारीख़ का बदतरीन इल्ज़ाम है।

(3)

तसर्रुफ़ व ग़ैबदानी का एक और हैरत अंगेज़ वाक़िआ:-

मुसन्निफ़ ने अपनी किताब में अपने वालिद के सफ़र का हाल बयान करते हुए लिखा है कि एक बार अपने पीर व मुर्शिद से मुलाक़ात के लिये वह सोवात जा रहे थे जो सिंध के अतराफ़ में वाके है। दर्मियान में पहाड़ों और सेहराओ का एक तवील सिलसिला तए करना पड़ता था। चलते चलते जब वह एक पहाड़ की घाटी में पहुँचे तो वहाँ का रास्ता इतना तंग और दुश्वार गुज़ार था कि गधे की सवारी के बगैर उसे उबूर करना ना मुमकिन था। अब इसके बाद का वाकिआ ख़ुद मुसाफ़िर की ज़बानी सुनिये। लिखा है कि-

> "मै गधे पर सवार थोडा ही आगे बढ़ा हुँगा कि एक दर्रा मे से डाकूओं का एक गिरोह मिला और उन्होंने मुझ को बहुत तंग किया। मेरे पास जों कुछ था सब रखवा लिया और उसके बाद जान की बारी थी। रहम का कोई शाएबा उनके अन्दर न था।
>
> मैं ने परेशानी के आलम में सर झुका लिया और आलमे बर्ज़ख़ 'तसव्वुरे शेख़' का अमल किया। अब क्या देखता हूँ कि वही ज़ालिम डाकू सरापा रहम व करम करते हुए थर थर काँप रहे हैं। कोई कदम चूमता है कोइ हाथ चूमता है। (दर्से हयात, सफ़हा: १७२)

इसके बाद लिखा है कि उन्हीं लोगों में डाकूओं का सरदार भी था वह अपने घर ले गया और मेरी बड़ी ख़ातिर मदारत की

वह लोग बार बार मुझ से माफ़ी मांगते थे और इक़रार लेते थे कि मैं ने उन्हें माफ़ कर दिया। मैं ने हैरानी के आलम में उनसे दरियाफ़्त किया कि पहले तुम लोगों ने मेरे साथ वह मामला किया और अब अचानक क्या बात हो गई कि तुम मेरे हाल पर इस क़दर मेहरबान हो गए उन लोगों ने जवाब दिया कि:-

"हज़रत? हमने आपको पहचाना न था। जब आप आंखें बन्द करके सर झुकाए बैठे थे उस वक्त हमने आप को ग़ौर से देखा तो पहचाना कि आप तो हज़रत मियां साहेब है। (दर्से हयात सफ़हा १७३)

अब इसके बाद बयान करते हैं बयान नहीं करते है देवबन्दी मक्तबे फ़िक्र के लिटरेचर में आग लगाते हैं।

"अब मेरी समझ में आया कि तसव्वुरे शैख की बर्कत से हजरत की तवज्जह ख सूसी मबज ल होकर मेरी सूरत हज़रत पीर व मुर्शिद की सूरत मे तबदील हो गई जिस की मुझ को भी ख़बर न थी और उन डाकुओं के कहने से यह उक़दा खुला। (सफहा १७३)

यहाँ तक तो रास्ते का हाल बयान हुआ अब पीर साहब के दर्बार का क़िस्सा सुनिये और गैबी क़ुव्वते इदराक की एक और शान देखिये। लिखा है कि:-

"हज़रत ने मुझ को देख कर फरमाया कि बन्दए खुदा? आना ही था तो मुझ ही को इत्तेला कर देते मै डाकुओं के सरदार को ख़बर कर देता तो फिर खतरा पेश न आता यह रास्ता बहुत ख़तरनाक है अल्लाह का फज़ल हुआ कि बच कर चले आए। (सफहा: १७४)

अब अपने हज़रत की ग़ैब दानी का एक और एतिराफ मुलाहिज़ा फरमाइए। बयान करते हैं कि:-

हजरत देर से मुतजिर बैठे थे और मेरे लिये खिचडी पकवा कर रखी थी चूंकि उस वक़्त मैदा में कुछ गडबडी थी हालाँकि मै ने इस की कोई इत्तिला नहीं की थी। बड़ी शफकत से मुझ को खिचड़ी खिलाई। (सफहा: १७४)

ग़ौर फरमाइये! इस एक वाकिआ में अपने हज़रत के मुतअल्लिक़ ग़ैब दानी और तसर्रुफ़ के कितने दावे किये गए हैं। पहला दावा तो यही है कि पहाड़ की घाटी में मीलों की मुसाफ़त से तसव्वुर की खामोश जबान का इस्तिग़ासा उन्होंने सुन लिया और वही से बैठे बैठे अपनी सूरत भी मुरीद की सूरत पर चस्पां कर दी और यह उस वक्त तक चस्पां रही जब तक कि मुरीद अपने पीर के घर तक नहीं पहुँच गया।

दूसरा दावा यह है कि पहाड की घाटी मे मुरीद को जो हादिसा पेश आया गैबी तौर पर उसकी जुमला तफ़सीलात पीर साहेब को मालूम हो गई जभी तो पहुँचते ही उन्हों ने फरमाया बन्दए खुदा? आना ही था तो मुझे इत्तिला कर देते मैं डाकूओ के सरदार को खबर कर देता तो फिर कोई ख़तरा पेश न आता।

तीसरा दावा यह है कि अपने गैबी इल्म के जरिये पीर साहब को इस बात की भी खबर हो गई कि आने वाले मुरीद का मेदा खराब हो गया है इस लिए पहले ही से खिचड़ी पकवा कर तय्यार कर रखी थी।

सोचता हूँ तो आंखो में खून तैरने लगता है कि यह हजरात अपने घर के बुज.र्गों के मुतअल्लिक़ जो कुछ बयान करते हैं अगर यही अम्रे वाक़िआ है और यही ईमानी हक़ीक़तों की सही ताबीर है तो फिर सौ बरस से अम्बिया व औलिया के बारे में अकाएद की जो जंग लड़ी जा रही है आख़िर उस का पसे मंजर

क्या है।

कितना संगीन मज़ाक़ है यह अहले इस्लाम के साथ कि सिर्फ़ जी बहलाने के लिये उनके जज़बात से खेला जा रहा है।

देवबन्दी मकतबा फ़िक्र का वह लिटरेचर जो कुफ़्र शिर्क की ताज़ीरात पर मुश्तमिल हैं खानकाहों में तो पहले ही ना पसंदीदा था अब जब कि अपने घर में भी वह अमल नहीं रहा तो उसे बाक़ी रखने की माक़ूल वजह क्या है?

मेरा यह सवाल देवबन्दी जमाअत के सारे असग़र व अकबर (तमाम छोटे बड़ों) से है कोई साहब भी माकूल जवाब देकर मेरी तशफ्फ़ी कर दें। सारी ज़िन्दगी उनका शुक्र गुज़ार रहूंगा।

(4)

बाप की ग़ैबदानी का क़िस्सा:-

अब तक तो दूसरो की बात चल रही थी अब खुद मुसन्निफ़ के 'वालिदे बुज़ुर्गवार' की ग़ैबदानी का क़िस्सा सुनिये, तहरीर फ़रमाते हैं कि–

> "मेरे छोटे भाई क़ारी शफ़'दीन साहब का बयान है कि मौलाना वुज़ू करके मुसल्ले पर दोनों हाथ कानों तक उठा चुके थे कि मैं नमाज की तय्यारी के बजाए यह समझ कर उनके पीछे खेल में मश्गूल हो गया कि अब वह तहरीमा बांधकर नमाज़ में देर तक मश्गूल रहेंगे। और उनको मेरे खेल की खबर न होगी। लेकिन उनको फ़ौरन कश्फ़ हो गया और अचानक हाथ कानों से हटा कर पीछे मुड़कर देखा और मुझ को ज़ोर से डाँटा। (दर्से हयात, सफ़हा: २२६)

इस वाक़िआ के बयान में ज़रा जज़बए अक़ीदत का तसर्रुफ़ मुलाहिज़ा फ़रमाईये कि तहरीमा बांधते वक़्त पीछे पलट कर देखना

इत्तिफ़ाक़न भी हो सकता है और इस ग़र्ज़ से भी हो सकता है कि सफें सीधी हो गई या नहीं लेकिन मुसन्निफ़ का इसरार है कि मेरे वालिद ने सिर्फ इस लिये पीछे पलट कर देखा कि उन्हें अपनी ग़ैबी क़ुव्वते इदराक के जरिये मालूम हो गया था कि पीछे की सफ़ में भाई खेल रहा है।

मुझे कहने दीजिए कि बाप को ग़ैब दान साबित करने के लिये जो जज़बए अकीदत यहाँ कार फ़रमा है अगर उसका हज़ारवां हिस्सा भी रसूले अरबी सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के लिये दिल के किसी गोशे मे मौजूद होता तो अकाएद का यह इख़्तिलाफ़ जिसने उम्मत को दो हिस्सो मे मुकसिम कर दिया है हरगिज़ वजूद में न आता।

हजार तावीलात के बावजूद देवबन्दी लिटरेचर के ज़रिये यह हकीकत अब इतनी वाजेह हो गई है कि मिल्लत का इन्साफ पसंद तबका हालात का यह कर्ब महसूस किये बग़ैर नहीं रह सकता।

एक बात की वज़ाहत:-

इस किताब मे देवबन्दी लिटरेचर के हवाले से कश्फ का जिक्र बार-बार आ रहा है इस लिये मै वाज़ेह कर देना चाहता हूँ कि देवबन्दी महजब मे कश्फ का दावा कहाँ तक दुरुस्त है?

लेहाजा इस के लिये देवबन्दी मज़हब की इलहामी किताब तक़वियतुल ईमान का यह फ़रमान मुलाहिज़ा फ़रमाईये।

> "इस आयत से मालूम हुआ कि यह सब जो गैबदानी का दावा करते हैं कोई कश्फ़ का दावा करता है कोई इस्तिखारा का अमल सिखाता है। यह सब झूठे हैं और दगा बाज उनके जाल में हरगिज़ न फंसना चाहिये। (तकवियतुल ईमान, सफहाः २३)

तक़वियतुल ईमान की इस निशान देही के बाद देवबन्दी गिरोह का कोई शख़्स अपने किसी बुज़ुर्ग के लिये कश्फ़ का दावा करता है तो अब उस के मुतअल्लिक और क्या कहा जा सकता है कि वह झूठा है दगा बाज है और उसके जाल में हरगिज़ नहीं फंसना चाहिये।

(17)

मौलाना बशारत करीम साहब के वाकिआत

(1)

किबरियाई इख्तियारात की कहानी:-

मौसूफ गढ़वाल नाम की एक बस्ती के रहने वाले हैं जो जिला मुजफ्फरपुर बिहार में वाके है दर्से हयात के मुसन्निफ ने अपने उस्ताद और एक मख़दूम बुजुर्ग की हैसिय्यत से उनका तजकिरा निहायत अक़ीदत के साथ किया है। उनके दरबार के एक हाज़िर बाश पंडित के बारे में उन्होंने एक अजीब वाक़िआ लिखा है जो पढ़ने से तअल्लुक रखता है लिखा है कि पंडित जी किसी मुर्शिदे कामिल की तलाश मे इधर उधर मारे मारे फिर रहे थे कि अचानक किसी मजजूब औरत से मुलाक़ात हो गई उसने गढ़वाल का पता बताया कि वहाँ जा। वहाँ तेरे दर्द का दर्मा है अब वह गढवाल का रास्ता मालूम करके वहाँ के लिये रवाना हुए इसके बाद का वाकिआ खुद मुसन्निफ की जबानी सुनिये लिखा है कि:-

> दोपहर का वक्त था और गर्मी का जमाना था जो स्टेशन से पैदल गढ़वाल जा रहे थे। गर्मी के दिनों मे दोपहर के वक़्त लोग उमूमन घरो के अन्दर पनाह गुजीन होते है। बाहर रास्ते में चलते हुए लोग नही मिलते। यह कई जगह रास्ता भूले और हर जगह एक ही सूरत के एक ही शख़्स ने ज़ाहिर होकर बतला दिया (दर्से हयात, सफ़हा: २६६)

अब इसके बाद का क़िस्सा सुनिये। बयान के इस हिस्से पर मुर्शिद कामिल की कुव्वते तसर्रुफ़ और ग़ैब दानी का मंसबे किबरियाई ख़ास तौर पर महसूस करने के क़ाबिल है। इर्शाद फ़रमाते हैं:-

> "जब गढ़वाल पहुँचे और हज़रत के जमाले जहाँ आरा पर नज़र पड़ी तो देखा कि यह तो वही है

जिन्होने रास्ते में कई जगह ज़ाहिर होकर रहनुमाई फ़रमाई थी। अक़ीदत जोश में आई। बेइख़्तियार अर्ज़ किया बादशाह? मेरे हाल पर रहम कीजिये और मुझको रास्ता बतलाइये। (सफ़हाः ३००)

गुफ्तगू का यह हिस्सा नियाज़ मद और बागी ज़हन का फ़र्क अच्छी तरह वाजेह कर देता है कि फ़ितरते इन्सानी का यह नुकता अगर समझ में आ गया तो नजर के बहुत सारे हिजाबात खुद ब खुद उठ जायेंगे।

'हज़रत ने पूछा क्या बात है? क्या चाहते हो? अर्ज़ किया कि गढवाल आते हुए जहाँ कहीं रास्ता भूला तो बादशाह। आपने जाहिर होकर रास्ता बतलाया अब आप पूछते है कि मैं क्या चाहता हूँ? आपको सब मालूम है कि में क्या चाहता हूँ। (सफ़हा. ३००)

यह वाकिआ पढकर हर गैर जानिब दार जहन को जिन सवालात का सामना करना पड़ेगा वह यह है।

पहला सवाल तो यह है कि अगर हज़रत ग़ैब दान नहीं थे तो घर बैठे क्यो कर मालून हो गया कि एक जोगी मेरे दरबार में आते हुए रास्ता भूल गया है चल कर उसकी रहनुमाई की जाए। दूसरा सवाल यह है कि रास्ता भूलने का वाक़िआ कई बार पेश आया और हर बार यह उस मुकाम पर पहुँच गए जहाँ रास्ता गुम हो गया था उसका खुला हुआ मतलब यह है कि वह अपनी खानकाह में बैठे हुए जोगी की एक एक नकल व हर्कत देख रहे थे और जहाँ ज़रूरत समझते थे फ़ौरन रहनुमाई के लिये पहुँच जाते थे। तीसरा सवाल यह है कि रास्ता बताने के लिये जोगी के सामने एक ही शक्ल व सूरत का जो शख्स बार बार नमूदार हुआ वह कौन था आया वह खुद हज़रत थे या कोई और था अगर वह खुद हज़रत थे तो बिजली की तरह यह सुर्अते रफ़तार उन्हें क्यों मयस्सर आई कि मुसाफ़िर अभी रास्ते ही मे था और यह कई

बार आए भी। और गये भी और अगर वह ह़ज़रत नहीं थे बल्कि कोई और था तो बिल्कुल हज़रत की तरह यह दूसरा वजूद किसके तसव्वुफ का नतीजा था।

चौथा सवाल ये है कि जोगी ने जब यह कहा कि बादशाह गढ़वाल आते हो जहाँ कहीं हम भूले आपने ज़ाहिर होकर रास्ता बताया उसके बाद भी आप पूछते हैं कि मैं क्या चाहता हूँ आप को सब मालूम है कि मैं क्या चाहता हूँ तो उन्होंने रसमन भी यह नहीं कहा कि इस्लाम में किसी मख़लूक़ के लिए इस तरह का अकीदा रखना शिर्क है यह सिर्फ़ खुदा का हक़ है जब हम अपने पैगम्बर के बारे में इस तरह का एतेक़ाद ख़िलाफे हक़ समझते हैं तो मेरे मुतअल्लिक यह ऐतेक़ाद क्यो कर दुरुस्त होगा। इन सवालात के जवाबात क ।लये मै आप ही के ज़मीर का इन्साफ़ चाहता हूँ।

(2)

बातेनी मुशाहेदात का एक हैरत अंगेज वाक़िआः-

अपने हजरत की गैबी क़ व्वते इदराक को खिराजे अक़ीदत पेश करते हुए किताब के मुसन्निफ अपने वालिद से एक रिवायत नक़ल करते हैं –

> "वालिद साहब मर्हूम ने एक मर्तबा फ़रमाया कि हज़रत मौलाना बशारत करीम साहब फरमाते थे कि मैंने बारहा आप के क़ल्ब पर नजर की तो उसको आपके शैख़ की तवज्जोहात से मामूर व मरबूत पाया आपके शैख़ का पूरा क़ब्ज़ा आपके क़ल्ब पर है और आपके क़ल्ब का पूरा राबिता शैख़ के साथ है।
>
> सुब्हान अल्लाह! कश्फ़े कुबूल की कितनी अजीब मिसाल है यह वाक़िआ? (दर्से हयात, सफ़हाः ३३२)

दाद दीजिये उस नज़र को जो एक तरफ़ सीना चाक करती हुई मुरीद के क़ल्ब तक जा पहुँचा और क़ल्ब में शिगाफ़ डाल कर अन्दर

का सारा हाल देख लिया और दूसरी तरफ़ बातनी तवज्जह का वह तवील सिलसिला भी देख आई जो सैकड़ों मील की मसाफ़त पर शैख़ के कल्ब के साथ मुंसलिक था। और फिर तरफ़ए तमाशा यह है कि निगाह का यह अमल कुछ एक ही बार नहीं पेश आया कि उसे हुस्ने इत्तीफाक का नतीजा कह कर बात रफ़ा दफ़ा कर दीजिये बल्कि बयान की सराहत के मुताबिक़ बाराहा ऐसा हुआ और जब भी चाहा होता रहा।

मआजल्लाह! जज़बए अक़ीदत का तसर्रूफ़ भी कितना पुर आशोब होता है? एक अदना उम्मती के लिऐ तो जबान व क़लम का यह एतिराफ है। और रसूले अनवर सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के हक़ मे सारा कबीला मुत्तफिक है कि उनकी नजर पसे दीवार भी नहीं देख सकती थी।

(3)

एक मजजूब का किस्सए अजीब:-

दर्से हयात के मुसन्निफ ने अपने एक रफीके तालीम के हवाले से एक मजजूब का किस्सा बयान किया है कि लिखा है कि जनकपुर रोड जिला मुजफ्फरपुर मे जहॉ उनके रफीके तालीम का घर था एक मजजुब रहा करता था उनसे उनकी अच्छी खासी शनासाई (पहचान) थी। एक दिन रात के वक़्त इस्तिन्जे के लिये घर से बाहर निकले देखा कि वह मजजूब उनके सामने से गुज़र रहा है वह भी उसके पीछे लग गए, बस्ती से कुछ दूर चलने के बाद मजजुब रुक गया और गढ़वाल (जहाँ मौलाना बशारत करीम साहब का घर था) की तरफ़ रूख करके उनसे कहना शरू किया।

"अरे देखो! उधर देख! वह देख! गढ़वाल में मौलाना बशारत करीम साहब ज़िक्र कर रहे हैं और उनके मकान पर अनवार की बारिश हो रही है। और उन के मकान से अ़र्श तक नूर ही नूर है। ऐ अन्धे देख! तुझको नज़र नहीं आता वह देख! (दर्से हयात, सफहा: ३४२)

इस मंज़र व की बड़ कह कर आप गुज़र भी जाना चाहें तो दानिश वराने देवबन्द के इस एतिराफ़ को क्या कहियेगा जिसके लफ़्ज़–लफ़्ज़ से यक़ीन का तेवर झलक रहा है।

> "अल्लाह अल्लाह! यह है ज़िक्र और यह है ज़ाकिर जिनके अन्वार का कोई आंख वाला ही मुशाहिदा कर सकता है। न सिर्फ़ क़रीब से बल्कि आठ–नौ मील की दूरी से इस तरह मुशाहिदा कर सकता है जैसे किसी महसूस चीज़ को बहुत क़रीब से कोई देख रहा हो।
> सफ़हाः २४२

जी चाहता है कि इस मक़ाम पर फिर मैं आपके जज़बए इन्साफ़ को आवाज़ दूँ कि सरदारे कौनैन सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हक़ में तो दीवार के पीछे के इल्म का अक़ीदा दानिश वराने देवबन्द के हल्क़ के नीचे अब तक नहीं उतर सका लेकिन एक मजज़ूब के हक़ में दिल का यह यक़ीन मुलाहिज़ा फ़रमाइये कि नौ मील के फ़ासले से अन्धेरी रात में अर्श तक गैबी अनवार व तजल्लियात को वह इस तरह मुशाहदा कर रहा है कि जैसे किसी महसूस चीज़ को बहुत क़रीब से को देखता है। न दर्मियान के हिजाबात उसकी नज़र पर हाइल होते हैं और न रात की तारीकी रोक पाती है।

हैरत है देवबन्दी ज़हन की इस बुल अजबी पर कि गैबी इल्म व इदराक की जो क व्वत वह एक अदना उम्मती के हक़ में तस्लीम कर लेते हैं उसे अपने रसूल के हक़ में तस्लीम करते हुए उन्हे शिर्क का आज़ार क्यों सताने लगता है।

उल्माए देवबन्द का यही वह ज़ाविया फ़िक्र .जीमपदहण्ण्ण्द्ध है जहाँ से वाज़ेह तौर पर हमें यह महसूस करने का मौक़ा मिलता है कि अपने और बेगाने के दर्मियान ज़ाहेरी फ़र्क़ क्या होता है और हालात व वाक़िआत पर उसका असर क्या पड़ता है।

अक़ीदों का ख़ूनः- मौलवी अब्दुल शकूर नाम के कोई साहब मदरसा शमशुल हुदा पटना में मुदर्रिस थे। मौसूफ़ मौलाना बशारत

करीम साहब के खास मुरीदों में थे। उनके मुतअल्लिक़ दर्से हयात के मुसन्निफ़ ने लिखा है कि वह एक बार अपने शैख़ की बारगाह में यह ख़्याल लेकर रवाना हुए कि हज़रत से दरयाफ़्त करूँगा कि बाज़ बुज़ुर्गों के मुतअल्लिक़ जो यह सुना गया है कि वह एक ही वक़्त में क जगह मौजूद हो जाते हैं उसकी हक़ीक़त क्या है। अब इसके बाद का किसा खुद मुरीद की ज़बानी सुनिये। बयान करते हैं कि:-

> जब (वहाँ) पहुँचा तो नमाज का वक़्त था। उस जमाने में खुद हजरत नमाज़ पढ़ाया करते थे। मैं भी जमाअत में शरीक हुआ। नमाज शुरू होते ही मुझ पर एक कैफिय्यत तारी हुई और मैंने देखा कि एक बहुत बडा मैदान है और उस वसी मैदान में जाबजा मुतअ़द्दिद जमाअत सफ बस्ता नमाज में मश्गूल हैं और हर जमाअत के इमाम हजरत हैं और सारे के सारे मुक़तदी हर जमाअत में वही है जो उस जमाअत में थे जिसम शामिल हो कर मैं हजरत के पीछे नमाज पढ रहा था।
>
> यह देखकर ऑखो के सामने से पर्दा हट गया। मेरे सवाल का जवाब मुझ को मिल गया। सारे शुबहात का इजाला हो गया। हजरत के रूहानी तसर्रुफ ने ऐसा मुशादि करा दिया कि फिर हजरत से पूछने और समझने की जरूरत बाकी नहीं रही। (दर्से हयात, सफ़हा. ३५४)

मुझ पर एक कैफिय्यत तारी हुई कि मुराद नींद नहीं है कि इस वाकिआ को आप ख्वाब की बात कह कर गुजर जाए बल्कि ऐन हालते बेदारी में उन्होंने गैबी तसर्रुफ़ का यह तमाशा देखा।

इस वाकिआ पर एक तरफ हजरत की गैबी क़ुव्वते इदराक का यह करिशमा देखिये कि ऐन नामाज की हालत में उन्होंने अपने मुरीद का वह ख्याल तक मालूम कर लिया जिसे वह अपने दिल में छुपा कर लाए थे और साथ ही साथ यह भी दर्याफ्त कर लिया कि उकदह

कुशा का तलबगार सफ में मेरे पीछे खड़ा है और दूसरी तरफ कमाले तसर्रुफ मुलाहिज़ा फ़रमाइये कि नमाज़ शुरू होते ही तिलिस्मे होश रूबा की तरह उन्होंने अपने मुरीद को एक मैदान में पहुँचा दिया और वहाँ साफ़ मुशाहिदा करा दिया कि एक शख़्स एक ही वक्त म क जगह क्यों कर मौजूद हो सकता है।

यह वाक़िआ अगर सही है तो मुझे कहने दीजिए कि देवबन्दी मज़हब का झूठ फ़ाश करने के लिए अब किसी न तस्नीफ़ की हाजत नहीं है खुद देवबन्द के अहले कलम इस ख़िदमत के लिए बहुत काफ़ी हैं।

एक और हशर बरपा कहानी:- दर्से हयात के मुसन्निफ ने एक मोतबर रावी के हवाले से उसी मज़कूरूस्सदर पंडित का एक और हैरत अंगेज़ किस्सा ब्यान किया है। उस मोतबर रावी का ब्यान है कि हज़रत के हुजरए ख़ास में मेरे और पंडित जी के सिवा किसी को भी बारयाब होने की इजाज़त नहीं थी।

रावी कहता है कि एक दिन बाद मग़रिब अपने हुजरए ख़ास में हज़रत तिलावत फ़रमा रहे थे। एक गोशे मे पंडित जी मुराक़िबा में थे और दूसरे गोशे में मैं बैठा हुआ था कि अचानक पंडित जी चीखे फिर तड़पे फिर बेहोश हो गए। हज़रत तिलावत रोक कर उनकी तरफ़ मुतवज्जह हुए जब उन्ह होश आया तो दर्याफ्त फ़रमाया क्य बात है। क्या देखा? अब क्या देखा की तफसील खुद रावी की ज़बानी सुनिये।

> पंडित जी ने अ़र्ज किया कि बादशाह मैंने देखा कि क़यामत क़ाएम है मैदाने महशर में हक़ तआला अर्श पर जलवा गर है। हिसाब व किताब हो रहा है। मख़लूक का बे पनाह हुजूम है। आप भी हैं मैं भी हूँ आप मुझ को पकड़े हुए अर्श इलाही की तरफ़ बढ़ रहे हैं जब करीब पहुँच गए तो आप ने मुझ को दोनों हाथों से उठाया और अर्श इलाही की तरफ़ बढ़ाया। मैं हक़ तआला की जलाले हैबत व अ़ज़मत से चीख उठा (सफ़हा: ३०४)

यह तो रहा पंडित जी का मुशाहिदा लेकिन हज़रत ने जिन अलफाज म इसकी तौसीक़ फ़रमा है वह भी पढ़ने की चीज़ है। रावी का ब्यान है। कि:-

"हज़रत ने यह सुनकर हस्बे आदत थोड़ा सा सुकूत फरमाया और फिर ठंडी सांस लेकर फ़रमाया मुबारक हो नुरूल्लाह (पंडित जी का नया नाम) उस से बढ़ कर और क्या चाहते हो। (सफ़ा: ३०४)

लाइलाहा इल्लल्लाह! नौ मुस्लिम पडित का मक़ामे इर्फ़ान तो अपनी जगह पर है लेकिन सच पूछिये तो इस वाक़िआ का सारा क्रेडीट 'हज़रत' को मिलना चाहिये जिनके फैजाने सोहबत ने एक नौ मुस्लिम पडित को आलमे गैब का राजदार बना दिया यहाँ तक कि वह गैबुल गैब जात भी उसकी नजर से नही छुप सकी जिसे ज़मीन पर हालते बेदारी म आज तक किसी ने नहीं देखा है।

अब आप ही हमारी मजलूमी के साथ इन्साफ कीजिये कि इतना खुला हुआ शिर्क देवबन्द के उन पारसाओ ने अपने हल्क़ के नीचे उतार लिया फिर उनसे को बाज पुर्स करने वाला नहीं है। और हम मान का मुजाहिरा करते है तो हमारे लिये क़त्ल की तजवीज़ है। इन्नालिल्लाहे व इन्नाइलैहि राजेऊन।

(६)

हज़रत की क़ब्र के अजाएब व गराएब:-

अब तक तो हज़रत के हयाते जाहिरी के किस्से आप सुन रहे थे अब उनकी वफात के बाद के दो किस्से और सुनिये– दर्से हयात के मुसन्निफ़ उनकी कबर के तसर्रुफ़ात का हाल ब्यान करते हुए लिखते हैं:-

"विसाल के बाद मुदत तक मजार शरीफ़ पर लोगों का हुजूम रहने लगा और पानी 'तेल' नमक वगैरा क़बर शरीफ़ के पास लेजा कर लोग रख दते और कुछ देर बाद उठा लेते। इससे बकसरत लोगों को फ़वाइद हासिल हुए। (सफ़हा: ३५७)

यह तो रहा साहिबे कब्र का तसर्रुफ अब कब्र की मिट्टी का तसर्रुफ मुलाहिज़ा फरमाइये लिखते हैं कि:–

"विसाल के बाद से लोगों का हुजूम जो मजार के पास आया वह पानी वग़ैरह रखने या यूँ समझये कि दम कराने के बाद थोड़ी–थोड़ी मिट्टी भी हर एक उठा कर ले जाने लगा। चुनांचे चन्द रोज़ में जरुरत पड जाती कि दूसरी मिट्टी मज़ार शरीफ पर डाली जाए।चुनान्चे मौलाना अय्यूब साहब मर्हूम (हजरत के साहिब ज़ादे) कुछ अर्सा तक जब मिट्टी कम हो जाती न –न मिट्टी डाल दिया करते।" सफहा ३५८)

लिखा है कि मिट्टी डालते डालते जब साहिबजादे तंग आगए और रोज की यह 'फिरी ड्यिटी' वबाले जाँ हो ग तो एक दिन आज र्दह खातिर हो कर मजार शरीफ पर हाज़िर हुए और निहायत अदब से अ़र्ज़ किया।

"हजरत। जिन्दगी म तो बहुत सख्त थे मगर अब मज़ार शरीफ पर ये क्या होने लगा है। अब मै आख़री मर्तबा मिट्टी डाल रहा हूँ इसके ाद अगर गढा भी पड़ जाएगा तो अब मैं मिट्टी नहीं डालूँगा। इस सिलसिले को बन्द कराइये।" सफ़हा: ३५८)

"लख़्ते जिगर" ने मचल कर कहा था आखिर नाज उठाना ही पड़ा। उम्मीदों के बेशुमार आबगीने टूट गए लेकिन " नूरे नज़र" का दिल नहीं तोड़ा जा सका। लिखा है कि:–

"इसके बाद फिर किसी ने मिट्टी नहीं उठा । क़तअ़न वह सिलसिला बन्द होगया और अब कभी मिट्टी डालने की नौबत नहीं आ और पानी 'तेल'

नमक वगैरह मजार शरीफ़ पर रखकर दम कराने का ख्याल भी अब किसी को न पैदा हुआ और वह सिलसिला भी मौकूफ हो गया।" सफ़हा: ३५८)

साहेबजादे ने जो कुछ कहा था वह साहबे मजार से कहा या आने वालों को किसने रोका कि वह यक लख्त रुक गए। इसलिए कहना पड़ेगा कि यह साहिबे मजार का तसर्रुफ था कि जब तक चाहा मेला लगा और जब चाहा उजड़ गया। गोया अहले हाजत के कुलूब उनके अपने सीनों में नहीं बल्कि साहेबे मजार की मुट्ठी में बन्द थे बन्द की तो [illegible] खोल दी तो बिखर गए।

अब इस वाक़िआ के चन्द अहम नुक्तों पर मैं आप से आप ही के जमीर का इन्साफ़ चाहता हूँ।

पहला नुक्ता। तो यह है कि लहद की आगोश में अगर को मुतसर्रिफ़ाना इख्तियार और फैज बख्श जिन्दगी नहीं थी तो साहब जादे ने खिताब किसको किया था दर्खास्त किस से की थी और किस के [illegible] से अहल हाजात का सिलसिला अचानक बन्द हुआ।

दूसरा नुक्ता। यह है कि मजार के इर्द गिर्द साहिबे मजार की [illegible] कार फरमा नहीं था तो क़ब्र की मिट्टी और उसके करीब रख जाने वाले और पानी से बाकसरत लोगों को फाएदा क्या पहुँच रहा था?

तीसरा नुक्ता। यह है कि साहेबे मजार ने अपनी कुव्वत तसर्रुफ से [illegible] सिलसिला बन्द किया उसके मुतअल्लिक दर्याफ्त करना है कि शरीअत की तरफ से भी उसके बन्द करने का मुतालिबा था या नही। अगर था तो इस इल्जाम का क्या जवाब है कि शरीअत के कहने पर तो नहीं बन्द किया जब बेटे ने कहा तो बन्द कर दिया।

चौथा नुक्ता। यह है कि अपनी ज़िन्दगी में जब साहिबे मजार को यह उमूर ना पसंदीदा थे तो मरने के बाद क्यों कर पसंदीदा हो गए आखिर वहाँ पहुँच कर हकीकत का कौन सा नया इर्फान हासिल हुआ जिसने अकीदे का मिजाज बदल दिया और जिस मस्लक के खिलाफ सारी जिन्दगी लड़ते रहे मरने के बाद उसके साथ सुलह

करना पड़ी।

पाँचवा नुक़्ता। यह है कि साहबजदगान और मुतअल्लेकीन को अगर यह बात पहले ही से मालूम थी कि ख़िलाफ़े शरा होने के बाइस अह्ले हाजात का यह मेला साहिबे मज़ार को पसंद नहीं है तो उन्होंने दीनी जज़्बे के ज़ेरे असर पहले ही दिन उसे क्यों नहीं रोका। जब मिट्टी डालते– डालते तंग आगये तब रोकने का ख़्याल पैदा हुआ और यह भी खुद नहीं बल्कि साहेबे मजार से दर्खास्त की कि आप रोक दीजीये।

छटा नुक़्ता! यह है कि बेटे की जिद पर जिस क ुव्वते तसर्रुफ के ज़रिये साहबे मज़ार ने यह सिलसिला बन्द किया वह कुव्वत दूसरे मज़ार को भी हासिल है कि नहीं? अगर हासिल है तो रोकने की ताक़त रखते हुए भी जब वह नहीं रोकते तो क्या इससे यह नतीजा नहीं निकाला जा सकता कि वह लोग इन तमाम उमूर को पसंदीदा नजरों से देखते हैं और जब सालेहीन के सारे गिरोह उसे पसंद करते हैं तो कोई वजह नहीं कि अल्लाह व रसूल के नजदीक भी यह पसंदीदा न हो।

(7)

मरने के बाद ग़ैबी कुव्वत व इदराक का एक और किस्सा: -

दर्सेहयात के मुसन्निफ ने 'हजरत' की वफात के बाद का एक किस्सा और बयान किया है लिखा है कि एक साहब जो 'हजरत' के मुतवस्सेलीन में है एक सख़्त मर्ज में मुबतिला हुए।

> "जब हर तरफ से इलाज करके थक गए तो एक रोज़ हज़रत को ख्वाब में देखा। फ़रमा रहे हैं सुलैमान (हज़रत के साहेबज़ादे) से कहो होमयोपैथिक की फलाँ दवा फलाँ नम्बर की दे दे।
>
> यह सुबह उठ कर सुलैमान बाबू की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अपने मर्ज़ का हाल बयान किया। वह

युनानी के साथ होमयोपैथिक इलाज भी करते थे। हालाँकि उन्होंने ख्वाब का वाकिआ अभी ज़िक्र नहीं किया था वह उठे अल्मारी में से वही दवा उस नम्बर की निकाल कर उनको दी जो हज़रत ने फ़रमाई थी। (सफ़हा: ३६२)

बाद मर्ग भी अगर गैबी इल्म व इदराक की कुव्वत हज़रत को हासिल नहीं थी तो उन्होंने कब्र मे लेटे लेटे कैसे मालूम कर लिया कि मेरा फलाँ मुरीद सख्त मर्ज में मुबतिला हो गया है और यह भी दर्यापत कर लिया कि उसे फलाँ मर्ज है और वह इलाज से भी हो गया है और यह भी दर्यापत कर लिया कि होमयोपैथिक में इसकी दवा यह है और इतने नम्बर की है हालाँकि वह होमियो पैथिक डाक्टर भी नहीं थे।

साथ ही तसर्रुफ की यह कुव्वत भी मुलाहिजा फ़रमाइये कि वह अपने मुरीद के पास ख्वाब मे तशरीफ़ भी लाए और हिदायत कर गए कि सलमान बाबू से फलाँ नम्बर की दवा हासिल कर लो।

दुनिया से अगर इन्साफ रुख़सत नही हो गया है तो अहले इन्साफ इसका जरूर फैसला करेंगे कि जब अपने वफ़ात याफ्ता बुजुर्गों के बारे मे अहले देवबन्द का अक़ीदा है कि वह जिन्दा है साहिबे इख्तियार है और हर तरह के तसर्रुफ़ की कुदरत रखते हैं तो अम्बिया और औलिया के बारे में इसी अक़ीदे के सवाल पर सौ बरस से वह हमारे साथ क्यों बर सरे पैकार हैं क्यों उनका प्रेस जहर उगलता है क्यों उन के ख़तीब हम पर आग बरसाते हैं क्यों हमें वह गोर परस्त कबर पुजवा और शिर्क के इल्जाम से मतऊन करते हैं।

मुझे यकीन है कि आज नहीं तो कल उनके नुमाइशी इस्लाम और मसनूई तौहीद परस्ती का तिलस्मि टूट कर रहेगा। बाखबर दुनिया को ज़्यादा दिनों तक वह वसवसे मुबतला में नहीं रख सकते।

ज़मीर का फ़ैसला

किताब के ख़ातम पर अब मैं आपके ज़मीर का एक खुला हुआ फ़ैसला चाहता हूँ जो किसी ख़ारजी जज़्बे के ज़ेरे असर होने की बजाए सिर्फ़ इन्साफ़ व हक़ीक़त पर मबनी हो।

पिछले औराक़ में उल्माए देवबन्द के बुज़ुर्गों के जो वाक़िआत व हालात आपने पढ़े हैं चुँकि उसके रावी भी खुद उल्माए देवबन्द ही हैं इसलिये अब यह इल्ज़ाम नाक़ाबिले तर्दीद हो गया है कि जिन एतक़ादात को यह हज़रात अम्बिया और औलिया के हक़ में शिर्क क़रार देते हैं उन्ही को अपने घर के बुज़ुर्गों के हक़ में क्यों कर जाएज ठहरा लिया हैं?

और वह भी सिर्फ एक आध के बारे में इस तरह की रिवायत हमें मिलती तो हम उसे सूए इत्तिफ़ाक़ या लग़जिशे क़लम पर महमूल कर लेते लेकिन हज़रत शाह इमदादुल्लाह साहेब से लेकर मौलवी सय्यद अहमद बरेलवी 'शाह इस्माईल देहलवी' शाह अब्दुल क़ादिर देहलवी मौलवी मुहम्मद याक़ूब साहेब नानौतवी रफ़ीउद्दीन साहेब देवबन्दी मौलवी मुहम्मद क़ासिम नानौतवी, मौलवी रशीद अहमद साहेब गंगोही, मौलवी महमूदुल हसन साहेब देवबन्दी मौलवी अशरफ़ अली साहेब थानवी और मौलवी हुसैन अहमद साहेब मदनी तक इतने सारे देवबन्दी अकाबिर के मुतअल्लिक़ एक ही तरह के वाक़िआत का तसलसुल क्या हमें यह सोचने पर मजबूर नहीं करता कि जिस तरह अम्बिया के हक़ में इन्कार व नफ़ी के सवाल पर सब मुत्तफ़िक़ थे बिल्कुल इसी तरह घर के बुजुर्गों के हक़ में

इकरार व इस्बात के सवाल पर भी सब मुत्तहिद हैं। न यहाँ क़लम की कोई भूल थी न यहाँ क़लम से कोई ग़लती वाक़े हुइ। अब यह एक अलग सवाल है कि एक ही तरह के अकीदों को अम्बिया के हक़ में उन्होंने शिर्क क़रार दिया और उनसे नफ़ी की और उन्ही को घर के बुजुर्गों के हक़ में जाएज़ ठहराया और उनका इस्बात किया।

अगर वाकेई वह सिफ़ात व कमालात ख़ुदा के साथ मख़सूस नही थे और किसी मखलूक़ में उन्हें तस्लीम करना मुजिबे शिर्क नही था तो फिर अम्बिया व औलिया के हक़ में शिर्क का हुक्म क्यों सादिर किया?

और अगर वह सिफ़ात व कमालात ख़ुदा के साथ मख़सूस थे और किसी मखलूक़ में उन्हे तस्लीम करना कतअन मुजिबे शिर्क था तो अपने घर के बुजुर्गों के हक़ में क्यों उन्हें जाएज़ ठहराया गया।

इन सब सवालों के जवाबात के लिये मैं आप ही के जमीर का फ़ैसला चाहता हूँ। इसके अलावा अगर कोई जवाब भी हो सकता है तो बताइये कि जिसे अपना समझा गया उसके फ़ज़ल व कमाल के एतिराफ़ के लिये नहीं भी कोई जगह थी तो बना ली गई और जो अपने तई बेगाना था उसके क़रार वाक़ेई मुजद्दिद व शर्फ़ के इज़हार में भी दिल का बुख़ल छुपाया न जा सका।

किताब के आख़री सतर लिखते हुए मैं ख़ुशी महसूस करता हूँ कि अपने इल्म व इत्तिला और इमान व अक़ीदा के

इख़्लाक़ी फ़र्ज़ से आज सुबुक दोश हो गया।

मैंने शवाहिद व दलाएल के साथ अपना इस्तिग़ासा (Write) आपकी अ़दालत में पेश कर दिया है फ़ैसला देते वक़्त इस बात का लिहाज़ रखियेगा कि क़ब्र से लेकर हश्र तक किसी अ़दालत में भी आपका फ़ैसला टूटने न पाए।

व सल्लल्लाहु तआ़ला अ़ला ख़ैरे खल्क़ेही सय्यदना मुहम्मद व आ़लेही व असहाबेही व हिज़बेही अ़जमईन।

अर्शदुल क़ादरी
यकुम रबीउल अव्वल १३६२

हिन्दी तर्जुमा
मुहम्मद अ़ली फ़ारूक़ी
यकुम शव्वाल १४०४ हिज्री